॥રામ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस–अरण्यकांड

लखनऊ (उत्तरप्रदेश)

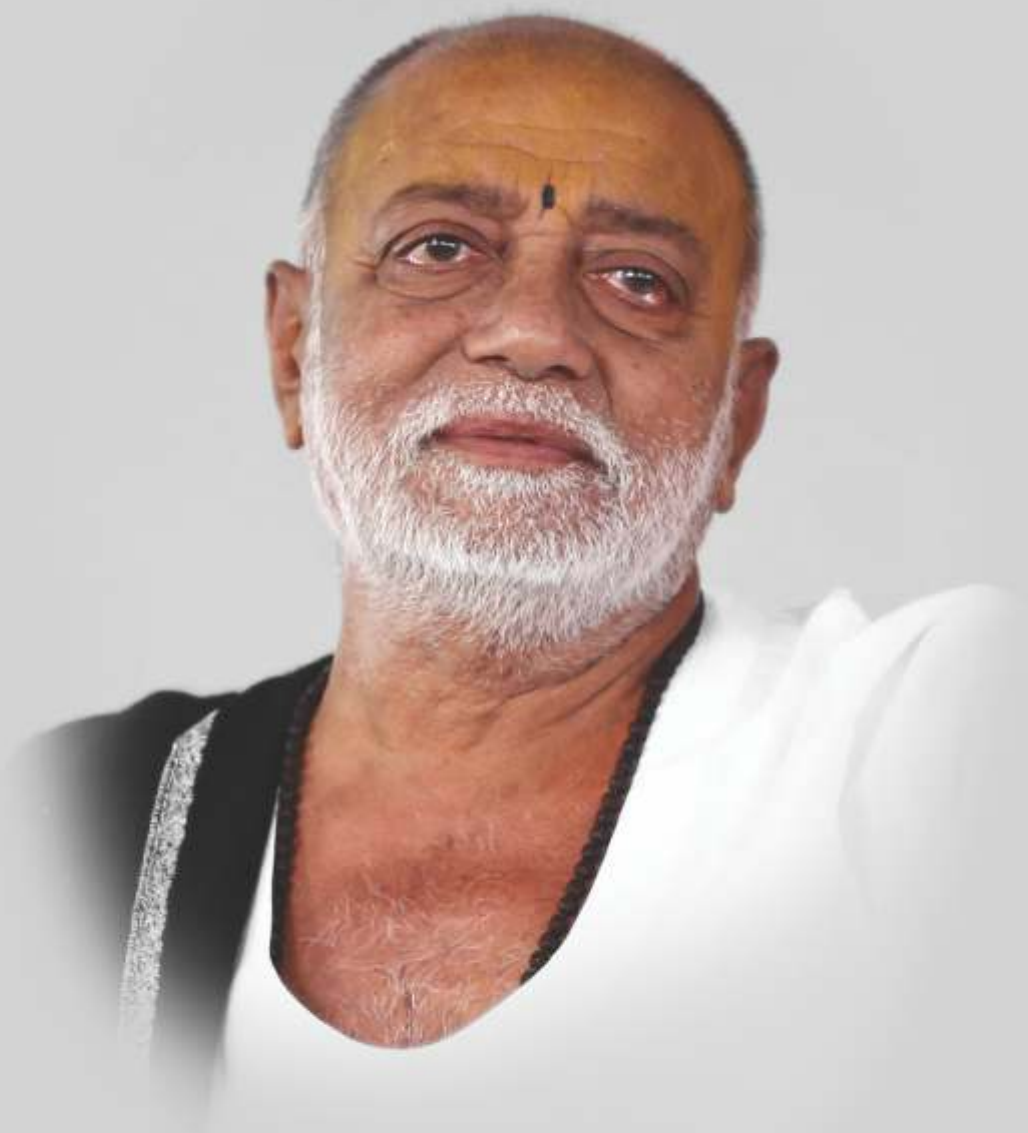

पुर नर भरत प्रीति मैं गाई। मति अनुरूप अनूप सुहाई।।
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे बन सुर नर मुनि भावन।।

|| **रामकथा** ||
मानस-अरण्यकांड

मोरारिबापू
लखनऊ (उत्तरप्रदेश)
दिनांक : २६-११-२०१६ से ४-१२-२०१६
कथा-क्रमांक : ८०३

प्रकाशन :
नवम्बर, २०१८

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क-सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने लखनऊ (उत्तरप्रदेश) में दिनांक २६-११-२०१६ से ४-१२-२०१६ दरमियान 'मानस-अरण्यकांड' रामकथा का गान किया। नैमिषारण्य के निकट लखनऊ नगरी में, जिसको लक्ष्मण नगरी कहते हैं ऐसी नगरी में बापू ने 'मानस' के 'अरण्यकांड' पर अपने विचार केन्द्रित किये।

प्रेम को उद्यान समझने के बजाय अरण्य के रूप में अर्थघटित करते हुए और आज के समय संदर्भ में 'अरण्यकांड' की चर्चा की प्रस्तुतता प्रकट करते हुए बापू ने कहा कि प्रेम यह लखनऊ का गार्डन नहीं है। प्रेम नैमिषारण्य है। प्रेम को कोई पार्क न समझो; यह अरण्य है। जिसमें कोई व्यवस्था नहीं होती। जैसे जंगल में कहीं भी पेड़ उगते हैं। लताएं, वनस्पति, ऋषिमुनि, झरनें, जलाशय, नदियां, हिरन, शेर, कठियारें क्या नहीं है वन में! 'अरण्यकांड' की चर्चा इक्कीसवीं सदी में जरूरी है। आज जब सभी जगह जंगल काटे जाते हैं; नगर बसते जाते हैं। नगर बसने चाहिए लेकिन यह देश तो अरण्य का देश है। यहां वन की बड़ी महिमा है। यहां वनवास की बड़ी महिमा है।

बापू ने वनवासी, वंचित, आख़िरी लोग के चरित्र का महिमागान किया और भगवान राम ने जिन गरीबों को, वंचितों को शरण में लिया था उनके पास युवान भाई-बहनों को जाने का ज़िक्र भी किया कि आप को वेकेशन हो, कभी मौका मिले तो एक-दो दिन ऐसे वंचितों के पास जाओ। साल में एक-दो दिन ऐसे निकालो जो दीन, हीन, उपेक्षित, वंचित है; जहां पढ़ाई नहीं पहुंची, उनके पास जाकर उनका हाल पूछे। राष्ट्र की कई प्रांतों की समस्या का उकेल आ जाएगा। मैं आप को अपील कर सकता हूं क्योंकि मैं जब भी मौका मिलता है, जाता हूं।

'अरण्यकांड' में शृंगारलीला, संहारलीला और सत्संगलीला है, ऐसे सूत्रपात के साथ बापू ने यह तीनों प्रकार की लीलाओं को ईन शब्दों में रेखांकित की, स्फटिकशिला में बैठे राघवेन्द्र जानकीजी का शृंगार करते हैं। ये 'अरण्यकांड' की लीला को हम नाम दे सकते हैं शृंगारलीला। दूसरी लीला है 'निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाई पन कीन्ह।' जिसको व्यासपीठ नाम देना चाहेगी संहारलीला। शृंगारलीला से मनुष्य राजी हो जाता है। संहारलीला से देवलोक खुश हो गये कि राक्षस मरे तो देवों के भोग सलामत रहे। और राम जहां-जहां गये, चाहे शरभंग के पास, चाहे सुतीक्ष्ण के पास, चाहे अत्रि के पास, चाहे कुंभज के पास, तो कई मुनियों के साथ प्रभु का इस तरह मिलना और आखिर में नारदमुनि से बात करना, ये तीसरा अध्याय है 'अरण्यकांड' का उसको मेरी व्यासपीठ कहेगी सत्संगलीला। शृंगारलीला नर को प्रिय। संहारलीला देवता को प्रिय और सत्संगलीला मुनियों को प्रिय।

'मानस-अरण्यकांड' रामकथा अंतर्गत यूं 'रामचरित मानस' के 'अरण्यकांड' के कुछ प्रसंगों एवम् चरित्रों के परिप्रेक्ष्य में बापू ने अपना निजी दर्शन प्रस्तुत किया।

– नीतिन वडगामा

मानस-अरण्यकांड : १

कथा साधन नहीं है, कथा साध्य है

पुर नर भरत प्रीति मैं गाई। मति अनुरूप अनूप सुहाई।।
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे बन सुर नर मुनि भावन।।

बाप! परमात्मा की अहेतु और असीम कृपा से ग्यारह साल के बाद इस लक्ष्मणनगरी में गोमती के तट पर बिलकुल करीब ही 'तीरथ बर नैमिष बिख्याता।' है ऐसी पावन धरती पर फिर एक बार रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ। हम सबका परमभाग्य है और आज जब कथा का आरंभ हो रहा है तब अयोध्या से पधारे हमारे परमपूज्य महाराजश्री आप आए, संतगण के साथ दीप प्रज्वलित किया। हम सबको आशीर्वाद दिया। आपके चरणों में और मंच पर बिराजित सब संतगण, अत्र-तत्र सब बिराजित पूज्य चरणों को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। अपने समाज के विधविध क्षेत्र के आदरणीय महानुभावों, आप सौ मेरे श्रोता भाई-बहन और हमारे गिरजाभैया और उसका पूरा परिवार और सब साथी मिलकर जो इस कथा में निमित्त बने हैं वो सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

मैं कल सोच रहा था इस बार लखनऊ में रामकथा में कौन प्रसंग चुनूं कि जिस पर नव दिन व्यासपीठ का अवलोकन प्रस्तुत किया जाय। मैंने पूछा भी कि पहले जो कथाएं हुई है उसमें कौन-कौन से विषय लिये गये हैं। लक्ष्मणजी पर भी एक बार यहां कथा हुई है। और जो-जो विषय पर हुई हो। इस नवदिवसीय रामकथा में मेरी व्यासपीठ 'मानस-अरण्यकांड' की कथा कहेगी। नैमिषारण्य बगल में है। इधर कामदवन है और कागभुशुंडिजी ने गरुडजी के सामने अपनी रामकथा में 'अरण्यकांड' के जितने प्रसंग चुनकर रखे हैं इन प्रसंगों का हम रस लेंगे और संतों से जो सुना हो, ग्रंथ के स्वाध्याय से जो प्राप्त हुआ हो उससे बड़ी बात तो सद्गुरु की कृपा से जो मिला हो वो हम साथ में मिलकर एक संवाद के रूप में गायन-संवाद करेंगे। पूज्यश्री का आशीर्वाद हुआ है हम सबको। और विशेष आनंद होगा क्योंकि हमें एक महापुरुष का आशीर्वाद प्राप्त हुआ है।

इस कथा का सब्जेक्ट रहेगा 'मानस-अरण्यकांड।' दूसरी बात यह लखनऊ का बहुत पुराना इतिहास जब देखता हूं तब लगता है कि इस भूमि पर खबर नहीं, कितनी चेतनाएं ऊतरी है! और जिसको हम सब लक्ष्मण नगरी कहते हैं ऐसी नगरी में कथा का आयोजन हुआ है। अभी तो कथा शुरू ही नहीं हुई और बाबा ने दूसरा निमंत्रण पकड़वा दिया! पहले यह पूरा तो हो जाने दो! लेकिन भगवन्, अयोध्या की कथा करीब मैं दो-तीन साल पहले से स्वीकार चुका हूं। लेकिन मैं इतना ही कहूंगा कि विश्वामित्र महाराज ने 'रामरक्षास्तोत्र' में एक बहुत प्रसिद्ध श्लोक का उच्चारण किया है-

दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा।

पहले उसने लक्ष्मणजी का नाम लिया है। तो पहले यह लक्ष्मण नगरी में कथा हो जाए फिर बांए और जानकीजी है। एक साल में कभी भी मुझे सीतामढ़ी में कथा कहनी है। ये हो जाए फिर कभी हनुमानजी के बारे में बोलूं फिर अयोध्या आ जाएंगे बाबा। लेकिन आपने छूट दे रखी है, एक-दो साल में जब प्रभु प्रेरणा करे अवध में फिर कथा। कथा कुबूल कर चुका हूं। जहां भी कथा कुबूल करता हूं तो नब्बे प्रतिशत ही वादा करता हूं। मेरा नब्बे प्रतिशत मानी शतप्रतिशत ही समझ लेना फिर भी देश-काल, संजोग; हम जीव है; कभी ऐसी मुश्किल आ पड़े और वादा निभाया न जाए तो रामकथा गायक के रूप में बड़ी पीड़ा होती है। अवध में कथा कहने का एक अपना ही आनंद होता है। क्योंकि 'अवधपुरी यह चरित प्रकासा।' तो अवध तो उसका स्थान है। जब ठाकुर जोग, लगन, ग्रह, वार, तिथि अनुकूल कर देंगे कथा गायेंगे।

तो कथा का विषय जो 'मानस-अरण्यकांड' मेरी व्यासपीठ चुन रही है इस पर हम और आप संवाद करें। कागभुशुंडि के वचनों के अनुसार वाल्मीकि का 'अरण्यकांड' क्या कहता है? अथवा तो तुलसी के अन्य साहित्य में 'अरण्यकांड' के बारे में आपका क्या अभिप्राय है? इन सबका गुरुकृपा से हम समन्वय करेंगे। लेकिन बाबा भुशुंडि ने गरुड के सामने कथा का गायन किया जिसको मेरी व्यासपीठ 'भुशुंडि रामायण' कहा करती है और वहां 'अरण्यकांड' के इतने विशेष प्रसंग करीब-करीब सब ले लिये हैं उसकी एक जो सूचि दी है उसका हम स्मरण कर लें।

भरत रहनि सुरपति सुत करनी।
प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी।।

भुशुंडि की दृष्टि में शुरू होता है तो वो पहला प्रसंग हमारे सामने रखते हैं यह देखिए, एक संत की रहनी और उसको तुलसी चौपाई में कैसे जुड़ते हैं? पहला प्रसंग तुलसी लाते हैं जयंत का। 'सुरपति सुत' का। यद्यपि इससे पहले सुरपति सुत में यह प्रसंग आ ही गया क्योंकि इसके अंतर्गत है।

एक बार चुनि कुसुम सुहाए।
निज कर भूषन राम बनाए।।

तो पहला प्रसंग जिसको तुलसी नामाभिधान करते हैं, 'सुरपति सुत' जयंत प्रकरण। दूसरा प्रसंग भगवान और अत्रि का मिलाप इसमें अनसूया और सीता भी समझ लीजिए। यह भूमिका है।

कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजी सर भंग।
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभु अगस्ति सतसंग।।

बिराध बध, सरभंग की चर्चा, सुतीक्ष्ण के प्रेम का वर्णन और भगवान और अगस्त्यमुनि का संवाद। आगे गोस्वामी कहते हैं-

कहि दंडक बन पावन ताई।
गीध मइत्री पुनि तेही गाई।।
पुनि प्रभु पंचबटी कृत बासा।
भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा।।

दंडकवन की पावनता की बात कही। गीध-जटायु से मैत्री और भगवान पंचवटी में निवास करते हैं। फिर पंचवटी में जीवाचार्य लक्ष्मण, रामानुजाचार्य लक्ष्मण जगद्गुरु राम को पांच प्रश्न पूछते हैं। लक्ष्मणजी जीव के आचार्य है और भगवान राम इसी 'अरण्यकांड' में अत्रि के मुख से एक बिरुद प्राप्त कर चुके हैं, 'जगद्गुरुं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं।' पंचवटी में पांच प्रश्न। यह सब स्वतंत्र विषय है। इनमें से कई प्रसंगों पर स्वतंत्र कथाएं संतों की कृपा से मुझे गाने का अवसर मिला है लेकिन यहां सबको साथ लेकर कुछ गुरुकृपा से अवलोकन करें।

पुनि लछिमन उपदेस अनूपा।
सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा।।

लक्ष्मणजी और भगवान राम का संवाद संतों ने 'रामगीता' के रूप में किया है कि यह 'रामगीता' है और फिर शूर्पणखा को करूपता की जो बात आई वो बात सुनाई।

खर दूषन बध बहुरि बखाना।
जिमि सब मरमु दसानन जाना।।
दसकंधर मारीच बतकही।
जेहि बिधि भई सो सब तेहिं कही।।

खर-दूषण को निर्वाण दिया। दशमुख को यह खबर मिली। मारीच को लेकर रावण आया। उसने जो योजना बनाई।

पुनि माया सीता कर हरना।
श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना।।

माया सीता का हरण; भगवान की ललित नरलीला के रूप में प्रभु के विरह की कथा तुलसी ने गाई। भुशुंडि ने गाई और आगे-

पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्हि।
बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही।।

भगवान राम सीतान्वेषण करने के लिए निकले। जटायु की क्रिया की। बीच में एक कबंध को निर्वाण देकर भगवान राम शबरी के आश्रम में आये। शबरी को जहां से कभी लौटना न पड़े ऐसी परम गति का भगवान ने दान किया। उसके बाद गोस्वामीजी कहते हैं-

बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा।
जेहि बिधि गए सरोबर तीरा।।

सीता की खोज करते भगवान आगे गये। और सरोवर-पंपा सरोवर के तट पर आये। गोस्वामीजी कहते हैं-

प्रभु नारद संवाद कहि मारुति मिलन प्रसंग।
पुनि सुग्रीव मिताई बालि प्रान कर भंग।।

ठाकुर की नरलीला के कुछ पडाव है। लेकिन त्रेतायुग की यह कथा। अब भगवान राम को कितने साल हुए हैं उसके लिए पंडित लोग, विद्वानगण अपनी-अपनी एक्सरसाईज़ करते हैं! कोई कहे, इतने साल; कोई कहे, इतने साल। मैं उसमें न जाऊं। उस पर छोड़ दें। इतना तो पता है कि यह घटना त्रेतायुग में घटी है। हम आज कलियुग में है। इक्कीसवीं सदी में है। आज की पीढ़ी को, आज के पढ़े-लिखे समाज को आज के संदर्भ में यह जो छोटे-छोटे प्रसंग जिस रूप में उपकारक है उसका संवाद, उसका अवलोकन जरूरी है। घटना तो घटी ही है। इसमें तो कोई सवाल ही नहीं। सवाल यह है कितने साल पहले घटी? कोई कहे हजारों, कोई कहे लाखों, जो हो! मेरा यह क्षेत्र ही नहीं कि मैं उसमें जाऊं। यह विद्वानों पर छोड़ दें। लेकिन बहुत बड़ा अंतर है उस काल और यह कलिकाल के बीच में।

अरण्य यानी जंगल, बहुधा वैराग्य का प्रतीक रहा है। यद्यपि संसारी राजाओं इसी अरण्य का मृगया के रूप में भी उपयोग करते थे। शिकार के रूप में करते थे। और 'मानस' का एक प्रसंग तो कहता है कि उसीमें फंस भी जाते हैं, जो प्रतापभानु का प्रसंग हमारे पास मौजुद है। लेकिन बहुधा वन जिसको हम वानप्रस्थ कहते हैं, यह वैराग्य का प्रतीक है। जिसको वैराग्य के प्रति जाना है धीरे-धीरे उसको 'अरण्यकांड' के सभी बिंदुओं को बहुत छूना पड़ेगा साहब! भारतीय चिंतन, भारतीय दर्शन बहुत उदार रहा है। उसमें कोई जड़, संकीर्ण बात नहीं की।

मैंने कई बार अपनी कथा में कहा, रामकथा धर्मशाला नहीं है, रामकथा एक प्रयोगशाला है। यह नौ दिन की शिबिर है। इसमें बुज़ुर्ग लोग, युवानी को आशीर्वाद देंगे और कुछ परिणाम लेकर हम यहां से उठे। अभी भगवन् ने कहा, 'बिनु हरि कृपा मिलही नहीं संता।' 'सतसंगति दुर्लभ संसारा।' 'बिनु बिस्वास भगति नहीं।' आदि-आदि। यह 'सत्संग' शब्द आता है तो युवानों को लगता है, इसमें तो धर्म की बातें होगी! सत्संग का कृपया इतना छोटा अर्थ न करे। आप पढ़े-लिखे हो। आप काम करो। देश की प्रगति के लिए अपनी शक्ति और ऊर्जा का योगदान करो लेकिन यह ऊर्जा सही मार्ग पर जाए और इसलिए साल में एक बार नौ दिन का सत्संग भी करो। यह आवश्यक है। लेकिन 'सत्संग' शब्द आता है तो लोगों को लगता है कि ये बातें होगी! नहीं, सत्संग को छोटी फ्रेम में मत मढ़ो।

मैं आपसे प्रार्थना करूं, कथा साधन नहीं है, कथा साध्य है। जब कथा को हम साधन बनाते हैं तब बहुत घाटे का सौदा करते हैं। यह साधन है ही नहीं, साध्य है। आपको पता न हो, मुझको पता न हो ऐसे कितने ही जनम-जनम के साधन किये होंगे तो ही यह साध्य के निकट पहुंचे होंगे, यह याद रखना। मैं भी 'मानस' के पास पहुंचा हूं। मुझे आनंद है लेकिन खबर नहीं, कई जनम के सुक्रित है। आप (संगीतवृंद) भी यहां पे गाते हैं, मेरे साथ बजाते हैं। आप इतनी सालों से मेरी व्यासपीठ को सुनते हैं। यह अचानक नहीं हो रहा है बाप! कथा को साधन न बनाओ। कथा साध्य है। कथा लक्ष्य है। आज हम वहां पहुंचे। तो एक साध्य के पास पहुंचे हमें क्या मिले? किस रूप में यह हमारे जीवन को परिवर्तित करे? तो इससे नौकरी मिल जाए, पैसा मिल जाए? पैसा तो खर्चना पड़ेगा; मिलेगा तो नहीं। प्रतिष्ठा मिल जाये? हां, थोड़ी-बड़ी प्रतिष्ठा तो मिल जाती है लेकिन प्रतिष्ठा से ज्यादा आलोचना होती है कि हमारी व्यवस्था ठीक नहीं हुई! हमारे रहेने का ठीक नहीं हुआ! आलोचना भी आयोजकों की बहुत होती है। कथा से न प्रतिष्ठा, न पैसा, न कोई भौतिक उपलब्धि। कथा से एक बहुत बड़ी बात मेरे युवान भाई-बहन मिलती है और वो मेरे गोस्वामीजी ने कही है-

बिनु सतसंग बिबेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।

सत्संग से मिलता है विवेक। और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में नितांत आवश्यक है विवेक। व्यासपीठ पर बैठनेवाले में विवेक; कथा सुननेवाले में विवेक; भाई-भाई में विवेक; परिवार-परिवार, जात-जात, संप्रदाय-संप्रदाय, देश-देश, प्रांत-प्रांत सभी में विवेक हो। सत्संग से विवेक की प्राप्ति होती है और विवेक से एकदूसरे के बीच हमें अच्छे व्यवहार की उपलब्धि होती है। विवेक के कारण लोग एकदूसरे के प्रति अच्छा वर्तन करते हैं। विवेक न हो तो अच्छा वर्तन नहीं कर पाते। अच्छा वर्तन शुरू हो जाएगा 'रामायण' की कथा के माध्यम से तो फिर चरित्रनिर्माण होगा और चरित्रनिर्माण होगा आपके और हमारे जीवन में जितना भी हो सके तब 'रामचरित मानस' घर में नहीं रहेगा, घट में होगा। यह पूरी यात्रा विवेक से व्यवहार शुद्धि, व्यवहार से एक चरित्रनिर्माण।

तो हमारे जीवन में 'अरण्यकांड' के बिंदु को भुशुंडि ने छूआ है उसको आज के संदर्भ में उसके मूल को पकड़कर उसके नये-नये फूल के रूप में कैसे देखें? उसका गुरुकृपा से हम प्रयत्न करेंगे। 'मानस' में कई अरण्यों की चर्चा है, आप जानते हैं। अब तो नैमिष की भूमि में है। नैमिष तो बहुत बड़ी तीर्थ के रूप में मनु और शतरूपा की तपस्थली है। जहां अयोध्या में प्रगट होने से पहले ठाकुर यहां प्रगट हुआ था नैमिष की भूमि पर मनु और शतरूपा के सन्मुख। किन-किन, कितने-कितने रूप में आया वो!

कथा साधन नहीं है, कथा साध्य है। जब कथा को हम साधन बनाते हैं तब बहुत घाटे का सौदा करते हैं। यह साधन है ही नहीं, साध्य है। आपको पता न हो, मुझको पता न हो ऐसे कितने ही जनम-जनम के साधन किये होंगे तो ही यह साध्य के निकट पहुंचे होंगे, यह याद रखना। मैं भी 'मानस' के पास पहुंचा हूं। मुझे आनंद है लेकिन खबर नहीं, कई जनम के सुक्रित है। आप (संगीतवृंद) भी यहां पे गाते हैं, मेरे साथ बजाते हैं। आप इतनी सालों से मेरी व्यासपीठ को सुनते हैं। यह अचानक नहीं हो रहा है बाप! कथा को साधन न बनाओ। कथा साध्य है।

आदि शक्ति सहित दर्शन दिया। एक तो बहुत बड़ा अरण्य नैमिष; श्रेष्ठ तीर्थ। चित्रकूट का वन यह स्नेह का वन है। दंडक वन, कामद वन और प्रतापभानु जहां भूला पड़ा वो वन 'मानस' में है। रावण का अशोकवन भी इस 'मानस' में हैं। और सुग्रीव का वन यह भी 'मानस' में है। तो-

अब प्रभु चरित्र सुनहु अति पावन।

मेरे गोस्वामीजी जो वन में जा-जा करके सुर, नर, मुनि को भी भाये ऐसा जो चरित्र प्रभु ने निर्माण किया उस तक पहुंचने के लिए कथा एक बहुत बड़ी हमारे लिए उपलब्धि है। तो यह अरण्य को ध्यान में लेते हुए कल ही मेरे मन में यह बात आई। अभी-अभी मैंने 'मानस-किष्किन्धाकांड' को केन्द्र में रखकर कुछ बातें कही। गुरुकृपा से 'मानस-सुन्दरकांड।' इस बार हुआ कि 'मानस-अरण्यकांड' कहे। क्योंकि नैमिषारण्य निकट है उसके वृक्ष भी मुझे प्रेरित करेंगे। गौतमी का प्रवाह भी मुझे प्रेरित करेगा। लखनऊ नगरी भी नई-सी लग रही है इतनी सुंदर! अच्छी बात है। लखनऊ ने मुझे एक भेंट दी है तो वो ही कि सालों पहले जो एरपोर्ट से ऊतरा तो जहां देखूं, 'जरा मुस्कुराईए, आप लखनऊ में है।' मुझे बहुत अच्छा लगा। तब से मैं भी कहता रहता हूं। लखनऊ की एक ट्रेडिशन एक अदब गज़ब है! मैं उसका इतिहास देख रहा था तो लगा कि क्या-क्या नहीं है लखनौ में? कितने बड़े-बड़े शायर हुए! उसका संदर्भ कभी-कभी आया तो सहज ले लूंगा।

तो बाप! 'मानस-अरण्यकांड' को केन्द्र में रखते हुए नव दिन तक रामकथा का रस सत्त्व-तत्त्व का आस्वाद लेंगे। इतनी पहले दिन की भूमिका। अब आप सब जानते हैं, संतों ने प्रवाही परंपरा निर्मित की है। जिस सद्ग्रंथ की कथा हो उसमें पहले दिन इस ग्रंथ का परिचय अथवा तो इस ग्रंथ की महिमा, माहात्म्य वक्ता को चाहिए कि समाज के सामने पेश करे। पहले दिन यह जो माहात्म्य की बात होती है उसमें बहुत फलों की बात होती है। इससे यह फायदा होगा, यह फायदा होगा यह भी ठीक है। लेकिन ग्रंथ परिचय में मेरी दृष्टि में जो सद्ग्रंथ है उसका कम से कम जनता के सामने उसका परिचय कि यह सद्ग्रंथ क्या है? यद्यपि गांधीजी तो कहा करते थे जिसको इस देश में 'रामायण' और 'महाभारत' की जानकारी नहीं है उसको हिन्दुस्तानी होने का अधिकार नहीं है। और मुझे अच्छा लग रहा है। उसका परिचय खास करके युवा पीढ़ी के सामने और सबके सामने आना चाहिए।

तो 'रामचरित मानस' आप जानते हैं, इसमें सात सोपान है। वाल्मीकिजी कांड कहते हैं; तुलसी सोपान कहते हैं। यद्यपि हम प्रथम सोपान 'बालकांड' ऐसा कहकर

पूरा करते हैं। बाकी तुलसी ने उसको सोपान कहा है। इसमें बहुत रुचिर सात सोपान है-बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका और उत्तर। और जो प्रथम सोपान 'बालकांड' है उसमें तुलसी सात मंत्रों में मंगलाचरण करते हैं। संतों से सुना है कि सात श्लोक ही क्यों लिखे मंगलाचरण में? 'रामचरित मानस' एक ऐसा वैश्विक ग्रंथ है कि सात आसमान, सात पाताल सब जगह छाया हुआ है। 'रामचरित मानस' संगीतमय शास्त्र है। वो गाने का शास्त्र है। 'रामचरित मानस' से ज्ञान की प्राप्ति तो हो ही जाती है, लेकिन जरा कठिन है। 'रामचरित मानस' का ज्ञान हो तो बहुत बड़ी उपलब्धि है लेकिन कम से कम गान हो तो भी अद्भुत लाभ है। उसका गान भी किया जाय। यही तो पूरी परंपरा रही।

गावत संतत संभु भवानी।
अरु घट संभव मुनि बिग्यानी।।

शंकर और पार्वती निरंतर गाते रहते हैं। और एक उल्लेख तो यह भी मिला कि भगवान शंकर जब रामकथा पार्वती को सुनाते थे तब वाद्य स्वयं अपने पास रखते थे। गाते थे बाबा और जब शंकर गाये तो क्या कहना साहब! पर उस समय जो वाद्य का उपयोग होता था वो था रुद्रवीणा। मेरा भोलेनाथ, विश्वनाथ रुद्रवीणा को पहनता है। बहुत आदि वाद्य है हमारा। जब भी नारद ने गाया, इसी वीणा में गाया। ये नारद की वीणा। सरस्वती ने इसी वीणा में गाया। अब तो रुद्रवीणा के वादक भी कम हो गये हैं। मूल रूप में जो वादक है वो तो गज़ब है साहब! ज्ञान हो तो बहुत अच्छी बात है; न हो तो चिंता मत करना। गान काफी है। इसे गाया जाय। शिव ने गाया। ब्रह्मादिक ने गाया। वेद, पुराण और शास्त्रों ने गाया। व्यास आदि कविओं ने गाया। तो उसका गान बहुत मदद करता है। और संगीत के सूर सात होते हैं इसलिए मैंने संतो से सुना कि 'मानस' के प्रथम सोपान में सात मंत्र लिखे हैं क्योंकि यह सूरमय शास्त्र है।

'मानस' गुरु है। किसी भी विद्या का गुरु 'रामचरित मानस' है। दुनिया की कोई भी विद्या हो उसका गुरु 'रामचरित मानस' है। तो 'मानस' एक ऐसा शास्त्र है साहब! हर विद्या का यह सद्गुरु है-

सद्गुरु ग्यान बिराग जोग के।
बिबुध बैद भव भीम रोग के।।

सवाल है श्रद्धा। गुणातीत श्रद्धा जिसको 'मानस' पर है वो क्या नहीं पाता? कहां से कहां पहुंचा देता है 'मानस!' तो सात आसमान, सात पाताल, सप्तसिंधु, संगीत का सात सूर, दुनिया की जितनी-जितनी सात संख्या है, संतों ने जोड़कर के 'मानस' की महिमा का गायन किया है। तो सात मंत्र लिखे। अथवा तो सात मंत्र 'रामचरित मानस' का सातों सोपान का एक-एक मंत्र प्रतिनिधित्व करता है। तो सात मंत्रों से प्रथम सोपान की रचना शुरू होती है। हमारी देवगिरा, हमारी परम पावनी वाणी यह संस्कृत भाषा उसको इतना आदर देकर तुलसीजी पवित्र बोली में गाते हैं। पहला मंत्र, आप सब जानते हैं-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।
भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।।

पहले मंत्र में वाणी विनायक का स्मरण। फिर श्रद्धा और विश्वास के घनीभूत भगवान महादेव और पार्वती का स्मरण। त्रिभुवन गुरु के रूप में, विश्व गुरु के रूप में भगवान महादेव की वंदना की। सीताराम के गुण के अरण्य में निरंतर विहार और विचरण करनेवाले आदि कवि वाल्मीकि और हनुमानजी महाराज की वंदना की। 'उद्भवस्थिति संहार कारिणीम्' कहकर पराम्बा आदि शक्ति जगदंबा, परमात्मा की आह्लादिनी माँ जानकीजी की, राघवेन्द्र की वंदना की और ग्रंथ हेतु समझाकर गोस्वामीजी ने कहा-

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा।

जहां तक मेरा अवलोकन है, 'रामचरित मानस' में गुरुकृपा से तीन हेतु उद्घोषित किया है तुलसी ने। आरंभ में कहा, मैं यह वैश्विक ग्रंथ इसलिए गा रहा हूं, इसलिए उसमें ऊतरा हूं कि मुझे स्वान्तः सुख की प्राप्ति हो। दूसरा, 'करन पुनित हेतु निज बानी।' मेरी वाणी पवित्र हो। तीसरा, 'मोरे मन प्रबोध जेहि होई।' मेरे मन को बोध हो और मेरे अंतःकरण को सुख महेसूस हो। इसलिए मैं इस कथा में आगे जा रहा हूं। संस्कृत में मंगलाचरण किया। तुलसी को तो श्लोक को लोक तक पहुंचाना था। आखिरी व्यक्ति तक कथा को पहुंचानी थी। और कहते हैं, परम का संकेत मिला था बाबा को कि आप लोकबोली में, ग्राम्यगिरा में 'रामायण' को ले आओ। कल कोई ऊंगली न उठाये, कल कोई अकारण आलोचना करके संत का अपराध कर न बैठे इसलिए तुलसी ने सात मंत्र, सात श्लोक संस्कृत में लिखे। तो बाप! तुलसी ने वो काम किया जो

श्लोक को लोकबोली में प्रस्थापित किया आखिरी व्यक्ति तक। यु.पी.-बिहार प्रदेश का कहना ही क्या साहब! यहां तो खेत मजूरी करनेवाले कुछ पूछोगे तो चौपाई में जवाब देगा! यह बहुत बड़ी महिमा है इनकी। श्लोक को आदर देकर गोस्वामीजी बिलकुल ग्राम्यगिरा में, देहाती भाषा में, लोकबोली में शास्त्र को ऊतारते हैं।

तो बिलकुल लोकबोली में कथा है। 'मानस' का, 'रामायण' का एक अवतार किया तुलसी ने लोगों के बीच में। जो श्लोक में थी उसको लोक में बना दिया हमारे बीच में, हमारी बोली में। शास्त्र समझने के लिए बहुत ऊंची-ऊंची बोलियों की जरूरत नहीं है। बहुत पढ़ना भी जरूरी नहीं है। हमारी बोली में शास्त्र है। जितने लोग हैं उनकी अपनी-अपनी 'रामायण' है साहब! 'रामायण' पर सबने अपने-अपने विचार दिये हैं इसलिए कोई एक पर्टीक्यूलर बोली, भाषा की जरूरत नहीं है।

पांच सोरठें में गणेश, सूर्य, विष्णु, महादेव और पार्वती पंचदेव की स्थापना की। कितना बड़ा सेतुबंध! कितने बड़े जोड़ने का शुरू में प्रासादिक प्रयास किया! जो आदि गुरु भगवान शंकराचार्य ने सनातन धर्मावलंबियों को कहा कि आप पंचदेव का आश्रय लो- गणेश, दुर्गा, शिव, भगवान विष्णु और सूर्य। मेरे भाई-बहन, गणेश को पूजना चाहिए। लेकिन गणेश की पूजा करनी हो इक्कीसवीं सदी में तो गणेश विनय और विवेक का देवता है। व्यक्ति में विवेक हो तो वो निरंतर गणेशपूजा है। आदमी विवेकी हो वो गणेशपूजा। वो गणेशपूजा में तो हम कुछ दिन उसकी पूजा करके जल में विसर्जित कर देते हैं। विवेक ऐसा गणेश है जो एक बार आ जाए तो विवेक रखकर जीवन जीना यह गणेशपूजा। उजाले में रहकर जीवन जीना यह सूर्यपूजा। विशाल, उदार भावना यह विचार वो विष्णुपूजा। अखंड श्रद्धा यह दुर्गापूजा। और दूसरों का कल्याण करने का संकल्प वो शिवपूजा। इस तात्त्विक रूप में वो शिव अभिषेक करना चाहिए, दुर्गापूजा करनी चाहिए, गणेश उत्सव करना चाहिए, सूर्य को नमस्कार करना चाहिए, पुरुषसूक्त का पाठ करना चाहिए।

पहला प्रकरण 'मानस' का गुरुवंदना का है, जिसको मेरी व्यासपीठ गुरुगीता मानती है। कुछ पंक्ति का गायन करें-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
अमिअ मूरिमय चूरन चारू ।
समन सकल भवरुज परिवारू ।।

जो लोग कहते हैं, गुरु की जरूरत नहीं, यह सब वाया है! बीच में बहुत निंदात्मक शब्दो में भी गुरु की आलोचना हुई कि वाया क्यों? सीधा डायरेक्ट परमात्मा को पा सके। ऐसा हो सके तो भी कोई आपत्ति नहीं! लेकिन जहां तक हम जैसों का सवाल है, कोई ना कोई गुरु चाहिए। 'रामचरित मानस' में सात गुरु है। एक तो गुरु 'बंदउ गुरु पद कंज'; दूसरा गुरु, श्रीगुरु। 'श्रीगुरु चरन सरोज रज।' तीसरा धर्मगुरु। चौथा कुलगुरु। पांचवां है सद्गुरु। छठ्ठा है जगद्गुरु। सातवां है, 'तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना।' सात गुरु की प्रस्थापना हुई है इसमें। 'मानस' को उठाओ, सात गुरु का आशीर्वाद मिलेगा।

पहला प्रकरण गुरुवंदना का है। गुरु बिना आगे जाना मुश्किल है। किसी सद्गुरु के आश्रय में जीना यह बहुत आवश्यक है। गुरुचरन की रज से अपने नेत्रों को साफ़ करके 'बंदऊ रामचरित भव मोचन।' तुलसी ने घोषणा की है। पहले सबको प्रणाम करने लगे क्योंकि गुरु की चरण की धूली से जिसे नेत्र शुद्ध हो वो किसी की निंदा नहीं करेगा, वो वंदना ही करेगा। इसलिए ब्राह्मणों से वंदना शुरू करके तुलसी-

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

इसी वंदना के क्रम में फिर माँ कौशल्या की वंदना, महाराज दशरथजी की वंदना, जनकजी की वंदना, बीच में तुलसी ने नितांत आवश्यक हनुमानजी महाराज की वंदना की। और यह नितांत आवश्यक है। किसी भी विद्या, किसी भी साधनापद्धति में जाना है तो हनुमानजी की वंदना करो। हनुमानजी के रूप में न करो तो प्राण के रूप में करो। बिना प्राणतत्त्व साधना सफल नहीं है। 'मानस' के पांचों प्राणों की रक्षा श्री हनुमानजी ने की है, ऐसा संतों का निवेदन है। ऐसे हनुमानजी की वंदना तुलसीजी ने की है। आइए, हम सब मिलकर इस नौ दिवसीय रामकथा में श्रीहनुमानजी की वंदना कर लें 'विनयपत्रिका' की कुछ पंक्तियों को गाकर के-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

प्रेम गार्डन नहीं है, प्रेम नैमिषारण्य है

'मानस-अरण्यकांड', जो दो पंक्तियों का आश्रय हमने लिया है उसमें पहली पंक्ति की अर्धाली में गोस्वामीजी कहते हैं, 'पुर नर भरत प्रीति मैं गाई।' मैंने नगरजनों की और श्रीभरतजी की प्रीति का गायन किया। शब्द का चयन बहुत प्यारा है। यहां यह नहीं कहा गया कि मैंने नगरजन और भरत की प्रीति का कथन किया है। मेरे साधक भाई-बहन, याद रखना, प्रेम और प्रीत का कथन नहीं हो सकता। एक ऐसा धर्म है प्रेम, जो अवर्णनीय है, अकथनीय है। प्रेम सिद्धांत नहीं है, प्रेम जीवन का परम संतोष है। और सिद्धांत मिलता है शास्त्रों से और प्रेम मिलता है प्रेमानुभूति से। इसलिए हमारे यहां शायद फिलम की पंक्ति में भी कहा गया कि प्यार को प्यार ही रहने दो, उसको कोई नाम दो। तो यह कथन की बाहर की अवस्था है।

तो यहां जो प्रेम की चर्चा है; 'प्रीति' शब्द बड़ा प्यारा है। भगवान राम कहते हैं यह स्थूल प्रेम की बात नहीं। यहां प्रेमतत्त्व की बात तुलसी ने गाई है इसमें केवल भरत के प्रेम का ही गायन नहीं है; सामान्य नगरजन की भी बात है। एक सम्राट राजकुमार है भरत जिसको ओलरेडी पितावचन के कारण गादी दी गई है। पढ़ा-लिखा है। अरे छोड़िये, ब्रह्म का छोटा भाई है। उसके प्रीत के गीत तुलसी गाए तो कोई आश्चर्य नहीं। लेकिन तुलसी उसीके प्रीत के गीत गा रहे हैं जो सामान्य नगरजन है। इसमें तो सुमंत भी रोया है। इसमें कोई वर्ण का नाम नहीं लिखा। राम के साथ प्रीत करनेवाले जार-जार रोये हैं। जिसमें थोड़ा प्रेम है उसमें वियोग का वायरा आता है वो बुझ जाता है कि हमने इतना प्रेम किया फिर भी वियोग, फिर भी वियोग! लेकिन जिसके दिल में प्रचंड प्रेम है वो ओर बढ़ जाता है, ओर बढ़ जाता है। तुलसी पहली पंक्ति में पूरा प्रेमशास्त्र निचोड़कर रख देते हैं। प्रेम कभी उपदेश नहीं देता। उपदेश तो ओधव देता है। प्रेम तो गाता है-

जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः।
श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि।

मैंने कभी कोई कथा में कहा था कि बुद्धपुरुष जवाब नहीं देता, जागृत करता है। आप कोई प्रश्न पूछे किसी बुद्ध को वो जवाब देने के लिए बाध्य नहीं है। आप पूछने के लिए अधिकारी है, लेकिन वो जवाब के लिए बाध्य नहीं है। सच्चा बुद्धपुरुष जवाब नहीं देता, जागृत करता है। सच्चा बुद्धपुरुष अंधेरे के बारेमें लेक्चर नहीं करता, चराग जला देता है। क्योंकि अंधेरे के बारे में प्रवचन करने के लिए तो आप शास्त्र लोगे। यह शास्त्रीय प्रवचन हो जाएगा। वो बड़ा पुराना और प्रसिद्ध शे'र-

चरागे हुश्न जलाओ, बहुत अंधेरा है।
रुख से परदा हटाओ, बहुत अंधेरा है।

बुद्धपुरुष छोटी-सी मोमबत्ती जला देता है। एक बच्चा भी जानता है, बूढ़ा भी जानता है, यह दीपावली कोई चांद की रात नहीं है, अमावस्या है। ये अंधेरी रात है। उस दिन कोई अंधेरे की चर्चा करने नहीं बैठता। गरीब हो, तवंगर हो, अपनी औकात के अनुसार अपने आंगन में दीये जलाते हैं। यह तो शायरी की बोली में लेकिन हमारी बोली में 'घूंघट के पट खोल', अनावृत। प्रेम अडाबीड होता है। प्रेम यह लखनौ का गार्डन नहीं है, प्रेम नैमिषारण्य है। प्रेम को कोई पार्क न समझो; यह अरण्य है। जिसमें कोई व्यवस्था नहीं होती। जैसे जंगल में कहीं भी पेड़ उगते हैं। लताएं, वनस्पति, ऋषिमुनि, झरनें, जलाशय, नदियां, हिरन, शेर, कठियारें क्या नहीं है वन में! 'अरण्यकांड' की चर्चा इक्कीसवीं सदी में जरूरी है। आज जब सभी जगह जंगल काटे जाते हैं, नगर बसते जाते हैं; बसने चाहिए लेकिन यह देश तो अरण्य का देश है। यहां वनवास की बड़ी महिमा है। या तो वचन के कारण किसी को वनवास हुआ है या तो 'महाभारत' में किसी के नियमभंग के कारण वनवास हुआ है। या तो जुए के कारण वनवास हुआ है। यहां हमारा मनु कहता है, 'होई न बिराग...' एक अवस्था

होने पर आदमी अरण्य की ओर मुख रख देता है। वन की बड़ी महिमा है।

तो मेरे श्रावक भाई-बहन, यहां गायन की बात की है; बड़ी महत्त्व की बात की है। एक बात याद रखना, शब्द से सूर महान है। और सूर से भी परमात्मा ने जिसको अच्छा स्वर दिया है वो स्वर की महिमा है। और स्वर से भी नाद की महिमा है। और नाद से भी अनाहत नाद की महिमा है। यह अध्यात्मयात्रा है। मुझे पूछा गया कि 'बापू, हम थोड़ा आध्यात्मिक यात्री है तो इसमें कभी-कभी क्रोध आ जाता है। संसारी है, लोभ आ जाता है, कामना सताती है, तो यह आध्यात्मिक रुकावट है?' आपको भूख लगे और आप मर्यादा में भोजन करे तो यह भूख अध्यात्म में रुकावट है क्या? यह यात्रा है आध्यात्मिक। जो नाद अनाहत नाद तक साधक को पहुंचा देता है। तो यहां गाना पड़ेगा।

पुर नर भरत प्रीति मैं गाई।
मति अनुरूप अनूप सुहाई।।

मेरे गोस्वामीजी कहते हैं, मैंने नगरजन और भरत की प्रीति का गायन किया। और यह नगरजन और भरत की प्रीति की गाने की कोशिश करे तो कितनी गा पाएगा? इसलिए गोस्वामीजी कहते हैं, मति अनुरूप; यथामति। तुलसी ने यह नहीं कहा कि भरत जैसे परम प्रेम मुनिजन की प्रीति का पूरा का पूरा गायन मैंने किया। 'नाथ जथामति भाखे।' यहां केवल हमारी जितनी पहुंच है इतना। कोई दावा नहीं कर सकता कि मैंने गाया। नारद ने साहस किया लेकिन वो साहस इतना ही कर पाए जितना 'यथा व्रज गोपीकानाम्।' तुलना की, उपमा दी, प्रेम कैसा? तो कहे, गोपी के समान। फिर भी नारद संतुष्ट नहीं हुए होंगे कि मैंने प्रेम को पूरा गा लिया। क्योंकि उसको भी अनुभव होगा कि यह अनूप है; निरूपम है। प्रेम तराज़ू में थोड़ा तोला जाए? सब नापा-तोला गया। धड़कन नापी जाए, गिनी जाए; सांस नापी जाए, गिनी जाए; रक्त चाप पढ़ा जाए, रेकोर्ड किया जाए लेकिन प्रेम किससे तोला जाए?

मैं आपसे प्रश्न पूछुं मेरे प्यारे श्रोता भाई-बहन, आप सच-सच जवाब देना, प्लीज़। हिमालय को खबर होगी कि मुझमें ठंडक कितनी है? हिमालय ने गिनती नहीं की है कि मेरी शीतलता कितनी है? सूर्य को खबर होगी कि मेरे में उष्णता कितनी है? बिलकुल नहीं। कितनी गर्मी है वो सूरज को खबर नहीं। यह विज्ञान निश्चित करता है। मैं एक तीसरा प्रश्न पूछुं कि गंगा को खबर है कि मेरी कितनी पवित्रता है? उसमें यह तत्त्व कितना है? बेक्टेरिया कितना है? यह सब जांच का विषय है लेकिन उसकी पवित्रता का पता नहीं है। पृथ्वी को पता है कि मुझमें बीज कितने हैं? न आसमान को पता है कि मुझ में सितारे कितने हैं। अनगनित, असंख्य। वैसे एक पूर्ण प्रेमी को पता ही नहीं होता कि मुझमें प्रेम कितना है? असंभव। यह काउन्टेबल है ही नहीं। ऐसे बुद्धपुरुष को पता ही नहीं होता, सद्गुरु को पता ही नहीं होता कि मुझमें करुणा कितनी है। यह बिलकुल गणित से बाहर है।

नगरजन और भरत की प्रीति का मैंने गायन किया। कोई यह न समझ ले कि मैंने पूरा गाया। कहते हैं, मैं तो साज बिठा रहा था। बोले, गाने की कोशिश तो की। कितनी की? बोले, मति अनुरूप। जरा तोल तो बताओ, कितना गाया? तो कहे, अनूप। फिर हमारी इच्छा बढ़ गई, जरा तोलो तो सही कि इतना-इतना। कोई निर्णय नहीं आ रहा है। साधक ने पूछा। साधक ने क्या, मैंने पूछा, मोरारिबापू ने पूछा कि कुछ तो जवाब दो! तो कहे, सुहाई। सुंदर लग रहा है; अच्छा लग रहा है; प्यारा लग रहा है। हमें अच्छा लग रहा है।

यह सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।

बड़ा प्यारा शे'र-

जो बांटता-फिरता था जमाने को उजाले,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

- दीक्षित दनकौरी

तो यह स्थूल प्रेम गाने की बात नहीं है इसलिए भगवान राम 'मानस' में कहते हैं-

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा।

तेरा और मेरा जो प्रेम का तत्त्व है वो केवल मेरा मन महसूस कर पा रहा है। वहां बोल नहीं पाएंगे। कुछ-कुछ गा सकते हैं। प्रेम का जो तत्त्व है वो केवल मेरा मन ही समझता है। यह मन तो सीधा कायम तेरे पास रहता है। मैं इतना ही जानता हूं। मेरे गोस्वामीजी 'अरण्यकांड' का आरंभ करते हैं-

अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन।
करत जे बन सुर नर मुनि भावन।।
पुर नर भरत प्रीति मैं गाई।
मति अनुरूप अनूप सुहाई।।

गोस्वामीजी करुणा से कहते हैं, अब प्रभु-भगवान के चरित्र कैसे हैं? अत्यंत पवित्र। इससे आगे कोई पवित्र है ही नहीं। चरित्रवान के पास बैठने से पाप का नाश होता है। चरित्रवान का कथन करना, बयान करना, उसके बारे में वार्तालाप करना, पाप का नाश होता है। चरित्रवान के पास चुपचाप कुछ किये बिना मौन बैठने से पाप का नाश होता है। 'पाप' शब्द को मैं इतना इज्जत देनेवाला आदमी नहीं हूं। पाप मानी अशांत। यह पाप हो गया! यह हो गया! सुबह को स्नान नहीं किया तो पाप हो गया! ठंडी हो तो न करो, इसमें पाप कहां का? सीधी-सी बात है। प्रेक्टिकल होना चाहिए। पूजा नहीं हुई सुबह में तो पाप हो गया? नहीं। अरे, बच्चे को प्यार से अच्छा खाना खिलाओ, पूजा हो गई। पाप का मेरा मतलब असुख। पाप का मेरा मतलब अशांति। पाप का मेरा मतलब टेन्शन। पाप का मेरा मतलब आदमी का आक्रोश, आदमी की इर्ष्या, आदमी की निंदा, आदमी का द्वेष। चरित्रवान के पास बैठो, मात्रा कम होगी।

अरे साहब! अमरिका के प्रेसिडन्ट के पास कोई बैठता है और फोटो खिंचवाता है तो इज्जत बढ़ जाती है। 'रामायण' के पास बैठोगे तो इज्जत भीतर को छू लेगी। कोई बुद्धपुरुष के पास बैठो; कोई तसवीर खिंचवाने की जरूरत नहीं, भीतरी ऊंचाई छू लेती है। दुनिया के बड़े-बड़े लोगों के साथ भोजन करने के लिए बड़ी-बड़ी रकम देनी पड़ती है। महापुरुषों के साथ भोजन नहीं, उनके साथ कभी-कभी कीर्तन कर लो, भीतरी इज्जत बढ़ जाएगी। चरित्रवान का संग पाप से मुक्त करता है। चरित्रवान का कथन हमें अशांति से मुक्त करता है। केवल बैठना है। और बोलना है तो केवल सिद्धांत की बातें नहीं। एक बार मैंने ऐसे ही नाम दिया था चित्रकूट में बैठे थे तो, करना हो तो मुक्त सत्संग करो; कोई सब्जेक्ट नहीं। आपको कुछ कहना है कहो; आपको चुप रहना है तो रहो। मुक्त सत्संग। और बड़ी क्राइसिस यह है कि कोई किसी की सुनता नहीं! यह तो अच्छा है कि आप कथा सुनते हो! न बाप बेटे की सुनता है, न बेटा बाप की सुनता है! और बीबी, उसकी तो बात ही छोड़ो! कौन किसकी सुनता है? एक ओर कलि का प्रभाव और एक ओर कलि का स्वभाव कि लोग भगवान की कथा सुने जा रहे हैं। भाई-भाई की नहीं सुनता! सुनते तो अदालत में नहीं जाना पड़ता। भाई-भाई की सुनता, पडौशी-पडौशी की सुनता, प्रांत-प्रांत, राष्ट्र-राष्ट्र कितना सुंदर विश्व बन जाता!

मेरे पास पत्रकार लोग आते हैं, पूछते हैं, बापू, इतने व्यस्त समय में लोग कथा सुनने क्यों आते हैं? मैंने कहा, मैं कुछ कहूंगा तो आत्मश्लाघा होगी। आप मेरे श्रोताओं को ही पूछो, क्यों आते हैं? यह बहुत अच्छी बात है। श्रवण करते हैं। लेकिन बुद्धपुरुष बोले तो भी ठीक, न बोले तो भी ठीक; निकट बैठो। बोले तो बोले, न बोले तो न बोले। कोई विषय हो न हो; जिस मुद्दे पर चर्चा हो। एक प्याले में आप दूध पीओ तो प्याले में यही किनारे से पीना ऐसा नहीं है। यहां से भी पीओ, वहां से भी पीओ। ऐसे कोई भी टोपिक चरित्रवान के संबंध रखता है तो पाप का नाश है। राम का चरित्र तो अति पावन है। कैसा चरित्र जो प्रभु ने वन में किया! लोग कहते हैं, नगर में सभ्यता होती है। नगर में लोग सुशिक्षित होते हैं। अच्छी बात है; आवकार है लेकिन चरित्र तो वन में है। वनवासी, गिरिवनवासी, आख़िरी लोग, वंचित, तिरस्कृत; चरित्र तो वहीं दिखता है।

हमारे डोक्टरसाहब ने एक प्रश्न पूछा है शुद्ध और सिद्ध का। हमारे दूबेसाहब ने पूछा है। मेरा कहने का इतना ही है, शुद्ध जो होता वो सिद्ध होता ही है। सिद्ध जो होता है वो शुद्ध है कि नहीं, प्रश्नार्थचिह्न है। जो तथाकथित सिद्ध माने जाते हैं वो शुद्ध है कि नहीं वो कहना मुश्किल है। लेकिन जो शुद्ध है वो सिद्ध होता ही है। ध्यान देना, सिद्ध ऐसे समर्थ व्यक्ति को कहा जाता है कि जो चाहे वो कर लेता है; जो चाहे वो दूसरे से करवा लेता है। बच्चे के बारे में आपने क्या सोचा? वो निर्दोष शिशु, दूध पीता बच्चा बिलकुल शुद्ध-बुद्ध है। शुद्ध है इसलिए सिद्ध भी है। क्योंकि बच्चा जो चाहे करता है। जो चाहे, माँ-बाप से करवाता है। शुद्ध है जो चाहे करता है; जो चाहे करवा सकता है, जैसे बालक। तुलसी ने 'सिद्ध संत' नहीं कहा। तुलसी ने कहा 'विशुद्ध संत।' कोई ऐसा विशुद्ध संत उसीको प्राप्त होता है जिसको कृपालु ने कभी एक बार कृपा की हो; वो रेहमत किसी शुद्ध-बुद्ध से मिलन करवा देती है।

'बापू, आपने कहा कि दुनिया की सर्वश्रेष्ठ विद्याओं का गुरु 'रामचरित मानस' है। दुनिया में सर्वश्रेष्ठ विद्या कौन है?' तीन- सत्य, प्रेम और करुणा। तीनों का सद्गुरु 'रामचरित मानस' है। इनकी कंठी जो बांधेगा, सत्य पाएगा। इनमें जो दीक्षित होगा। संत ज्ञानेश्वर ने कहा, व्यक्ति को छोड़ दो, विचार को पकड़ो। कृति को छोड़ दो, कर्ता को पकड़ो। क्योंकि जब हम विचार को छोड़ देते हैं और व्यक्ति को पकड़ लेते हैं तब नये-नये पंथ खड़े हो

जाते हैं। यह ग्रंथ को सद्गुरु समझो; धोखा नहीं देगा। यह परमगुरु है। और मैं बहुत महसूस करता हूं। सत्य विद्या है, असत्य अविद्या है। प्रेम विद्या है, घृणा, नफरत, द्वेष अविद्या है। कठोरता, आक्रोश, अकारण क्रोध अविद्या है, करुणा विद्या है। सिद्धांत थोपा जाता है, स्वभाव प्रगट होता है। सत्य, प्रेम, करुणा को कभी सिद्धांत मत बनाना, स्वभाव बनाना। यह स्वभाव है।

गम खाओ। हमारे ब्रह्मलीन डोंगरेजीबापा जो भागवतकार थे वो कहते थे, गम खाओ। फिर 'गम' शब्द का ऊल्टा करो तो 'मग।' डोंगरेजी महाराज की एक कथा मैंने पूरी सुनी है। जे.पी.पारेख हाईस्कूल हमारे महुवा में, जहां मैं पढ़ा मेट्रिक तक। नापास हुआ लेकिन पढ़ा जरूर! तो वहां बापजी की कथा थी 'श्रीमद्भागवत' की। मैं उस समय सातवीं श्रेणी-आठवीं श्रेणी में पढ़ता था। हमारी हाईस्कूल के मैदान में कथा थी। तो सबको छुट्टी दी गई थी। मैं नित्य कथा सुनता था और डोंगरेबापा जो बोले वो मैं लिख लेता था। एक सुंदर डायरी मैंने तैयार की थी। यहां कथा पूरी हुई। यहां मेरी नोट पूरी हो गई। यहां बापजी चले गये। यहां मैं गांव तलगाजरडा आया। हमारे गांव के मुखिया

सरपंच जो थे; उम्रलायक थे। हम उसको दाता कहते थे। दाता मेरे पास आये; मुझे कहा, छोकरा, तूने वो डायरी लिखी थी? तू क्या करेगा? मुझे दे दे, ला! वो ले गया! जिसको कुछ नहीं करना था वो मेरा ले गये! सही में। फिर मैंने मन में तसल्ली की कि पुस्तक ले जा सकता है, मेरे मस्तक में जो मैंने लिख दिया है उसको कैसे निकाल सकता है? और मस्तक में जो मैंने नोंध की थी उसमें डोंगरे महाराज का एक वाक्य, 'गम खाओ और मग खाओ।' जैसे डोक्टर कहते हैं ना कि मग का पानी पीओ, मग खाओ। प्रेमवान गम खाता है; जानबुझकर फ़रेब खाता है। शायद प्रेम का एक वो भी पड़ाव रहता होगा कि आदमी को फ़रेब खाना पड़ता है। जानबुझकर छले जाए वो करुणानिधान। गुजराती की दो पंक्ति है। सुना दूं-

हुशियारीनी गांसडीओ सौने बंधवजे,
पण छेतराजे समज्यां छतां तुं एकलो।

गुजराती कवि कहता है, समझदारी की गठरियां सबके सिर पर रख देना और जानबुझकर छले जाना।

'सत्यवान, प्रेमवान, करुणावान क्या खाता है?' ये गम खाता है। आलोचना होगी। तुम जानबुझकर छले जाओगे; समझकर सहोगे; आपका गेरलाभ लिया जाएगा। लेकिन यह स्वभाव है, सिद्धांत नहीं है। खाता है क्या? गम खाता है। पीता है क्या? ज़हर पीता है। भगवान शंकर करुणावान है इसलिए विषपान करते हैं। विष पीना पड़ता है। करुणावान कैसे बैठता है? सहज बैठता है। 'बैठे सहज संभु कृपाला।' सहज बैठता है। धीरे-धीरे बैठता है। हड़बडी नहीं। और शंकराचार्य को पूछोगे तो कहेंगे, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।' भीड़ में भी अकेला बैठता है-

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
भीड में अकेला, अकेले में मेला।

जो पहुंचा हुआ महापुरुष है वो अपना एकान्त सुरक्षित रखते हैं। एकान्त को बरकरार रखते हैं। भीड़ में होते हुए भी ऐसे बैठता है। उठता कैसे है? बुद्धपुरुष बैठेगा धीरे-धीरे। उठना हो तो बहुत जल्दी उठेगा। इसलिए कि आश्रित पर कोई तकलीफ़ आई तो वो स्पीड में जाता है, दौड़ता है। जैसे द्वारिकाधीश द्रौपदी के लिए दौड़ा। जैसे गजेन्द्र के लिए कृष्ण दौड़ा। जैसे नरसिंह मेहता के लिए वैकुंठ अधिपति दौड़ा। जैसे मीरां का ज़हर पीने के लिए सांवरा दौड़ा। आश्रित को भीड़ होती है तो उसका उठना बहुत जल्दी

होता है। बुद्धपुरुष-करुणावान सोता है वो जागृति में सोता है। जिसकी निद्रा भी समाधि होती है। आराम तो कर लेगा। जागृत निद्रा; जागृत शयन।

पूछा गया, बापू, आपने कल कहा, दुनिया में सर्वश्रेष्ठ विद्या कौन है? सत्य, प्रेम, करुणा यह प्रस्थानत्रयी यह तीन विद्या मेरी दृष्टि में सर्वश्रेष्ठ है। ये तीनों को मैं श्रेष्ठ विद्या कहूंगा। आप पूछेंगे कि इन तीनों में श्रेष्ठ कौन? तो मुश्किल है बताना। यद्यपि दबाव डालोगे तो कहूंगा, श्रेष्ठ प्रेम है। लेकिन प्रेम को सत्य और करुणा का सपोर्ट न हो तो श्रेष्ठ नहीं, क्लिष्ट बन जाता है। यद्यपि प्रेम के समान कुछ नहीं है। मेरी तो कथा ही 'ल' से शुरू होती है। 'व' से पूरी होती है। 'लोकाभिरामम्' से शुरू और 'मानवाः।' जो पूछा गया दुनिया में सर्वश्रेष्ठ विद्या कौन है? तो यह तीन। और तीन में सत्य और करुणा के सपोर्ट में खड़ा है प्रेमदेवता। यह परमविद्या है। यह परमप्रेम परमविद्या है।

देवताओं की पूजा करो, बलिदान करो, यज्ञ करो, धन का हिस्सा देवताओं को दो, देवता खुश होते हैं। मनुष्य को इज्जत, वाह-वाह, प्रशंसा करो, उसको अच्छा लगता है। लेकिन मुनि को फुसलाना बहुत कठिन है। जो मुनि वाह-वाह से खुश हो जाए, समझना यह मुनि का लेबल है, लेवल नहीं है। जो कोई पद-प्रतिष्ठा के प्रलोभन से राजी हो जाये उसको अच्छा लगने लगे तो वो मुनि कहां का? तीनों को राजी करना बहुत मुश्किल है। एकमात्र तुलसी निमंत्रण देकर कहते हैं, मेरे राम ने अरण्य में जो चरित्र किये उसमें देवता भी राजी, मनुष्य भी राजी और मुनि भी राजी। प्रभु के पावन चरित्र स्वर्ग के देवताओं को भी अच्छा लगता है। क्योंकि प्रभु की पावन चरित्र लीलाओं में देवताओं के दुःख का अंत आता है। पृथ्वी पर रहे मानवों को परमात्मा के पावन चरित्र से शांति मिलती है; वैराग्य मिलता है; निर्मल वैराग्य मिलता है। और वन और अरण्य में रहते मुनिगण उसको भगवान के पावन चरित्र से सुख मिलता है।

'अरण्यकांड' का प्रथम प्रसंग शृंगार का है। 'अरण्यकांड' का बीच का प्रसंग वियोग का है। 'अरण्यकांड' का तीसरा प्रसंग नारी विमोह से मुक्ति का है। यह तीन विभाग है। उसका आदि पार्ट शृंगार है। भगवान राम स्वयं शृंगार कर रहे हैं किशोरीजी को। बीचवाला भाग जिसमें सीताहरण; एक बिछड़ना आ गया। आदि में जानकीजी की शृंगार की बात; मध्य में मायारूप सीता को रावण हर गया, एक वियोग। और आखिर में नारद ने भगवान को पंपासरोवर के तट पर पूछा कि मैं शादी करना चाहता था, आपने मुझे शादी क्यों नहीं करने दी? तब मातृशरीर के बारे में, माताओं के बारे में भगवान राम ने जो कुछ अवलोकन व्यक्त किया, वैराग्य की ओर नारद को प्रेरित किया। तुलसी का ये 'अरण्यकांड' का पहला भाग 'शृंगारशतक' है। मध्य का तुलसी का 'विरहशतक' है। आख़िर में 'अरण्यकांड' में 'वैराग्यशतक' है। तो यहां से आरंभ होता है 'अरण्यकांड' का ये प्रसंग-

एक बार चुनि कुसुम सुहाए।
निज कर भूषन राम बनाए।।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर।
बैठे फटिक सिला पर सुंदर।।

स्फटिक शिला पर ठाकुरजी बिराजमान है। चित्रकूट की परमात्मा की ये अंतिम लीला, उसके बाद प्रभु आगे बढ़ जाएंगे। एक बार भगवान राम ने अपने हाथों से अगल-बगल की बगियाओं से फूल चयन किया। लक्ष्मणजी बाहर गए हैं। कोई मर्यादाभंग नहीं हो रहा है। शील और विवेक छोड़ा नहीं गया; एकांत है। जहां बैठे हैं वह शिला स्फटिक है। स्फटिक शिला का अर्थ है, आरपार दिखे। राम-जानकी स्फटिक शिला पर बैठे हैं, इसका मतलब उनका हर एक व्यवहार आरपार है, दंभमुक्त है, रागात्मक नहीं है। तो प्रभु ने फूल चयन किए और फूल को हम सुमन कहते हैं। कुसुम मतलब सुमन। भगवान ने फूल में से वेणी बनाई; कुछ कंगन बनाए; बाजुबंध बनाए; सुंदर माला बनाई। यह बहुत गर्भित शृंगार है तुलसी का। परमात्मा ने सुंदर आभूषण बनाकर जानकीजी को सजाया। ये भूषण कुसुम के थे ये तो एक संकेतमात्र है। जानकीजी को विश्व के सामने पेश करते हुए राघव कहे, मेरी जानकी विश्व में चरित्रभूषण है। और सुमन है, पवित्र मन है; कोई कलुषित मन नहीं। स्थूल अर्थ में लूं तो भी कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। पति-पत्नी शादीसुधा है। भले ही वन में है। एकांत है। मर्यादा नहीं टूट रही है। छोटा भाई बाहर गया है। वहां एक आदर्श पति अपनी पत्नी को सजाए तो उसमें राम ने बुरा क्या किया? लेकिन परमात्मा के गुण इतने गूढ होते हैं कि जो हरि विमुख है, जिसे धर्म में रुचि नहीं, उसे नहीं समझ में आएगा।

युवान भाई-बहनों के लिए सीख है कि आप आदर्श दांपत्य जीओ। मर्यादा न टूटती हो तो निकट बैठकर एक-दूसरे को सजाओ। वन में हो या भवन में हो, तुम्हारा प्रेम अक्षुण्ण रहना चाहिए। राम जब ये काम कर रहे हैं तो पवित्र संकेत है, अपवित्र संकेत नहीं है। निकट बैठना ही यदि पाप है तो शादी में बगल में क्यों बिठाया? ब्राह्मणों की साक्षी में, अग्निदेवता की, दोनों परिवारों की साक्षी में आप दोनों को मिलाते हैं और फिर दोनों मर्यादा से बैठे हो और तुम कौए की तरह आकर चंचूपात करो तो उसमें राम का दोष नहीं, 'जयंत', तेरा दोष है! प्रारब्ध से, पुरुषार्थ से, बनाए छल-कपट से जिनको ऊंचाई मिली है, उनके सभी संतान जयंत ही होते हैं! कृपाप्रसाद आपको न मिला हो और आप उच्चपद पा गए हो अथवा पुण्य से आपको ये पद मिला है तो समझ लेना उसकी संतान जयंत ही होगी। वो सोचते हैं, किसी के भवन में और वन में भी हम विक्षेप कर सकते हैं।

राम ने जानकी का शृंगार किया। शृंगार तीन जगह होता है। पहला, नर नारी को शृंगार करे याने पति पत्नी को शृंगार करे। दूसरा, अस्तित्व की दृष्टि में पुरुष प्रकृति का शृंगार करे। तीसरा, भगवान भक्ति का शृंगार करे। तीनों की फलश्रुति बिलग है। यहां राघव की ललित नरलीला लो तो एक पति अपनी पत्नी का शृंगार कर रहा है। यहां परमात्मा के रूप में राम पुरुष है और जानकी प्रकृति है। पुरुष प्रकृति का शृंगार कर रहा है। बिलकुल आध्यात्मिक ऊंचाई पर चले जाओ तो भगवान भक्ति का शृंगार कर रहे हैं। सीयाजु भक्ति है, राघव भगवान है। नर जब नारी का शृंगार करता है तो उसमें देहप्रधानता होती है। उसमें काम की मात्रा होती है। आदर्श दांपत्य में काम बुरा नहीं, अच्छा है, जरूरी भी है। भगवान कृष्ण ने कहा है कि काम मेरी विभूति है। हमने कभी क्रोधदेव नहीं कहा; काम को ही देव कहा है। पुरुष प्रकृति का शृंगार करे उसमें पूरा जगत रचा जाता है, आदि सृष्टि प्रगट हो जाती है। भक्ति का शृंगार भगवान करे तब रामनाम, रामचरित्र, रामलीला, रामधाम प्रगट होता है। पुरुष और प्रकृति से शृंगार के देवता प्रसन्न होते हैं। नर-नारी के शृंगार से मनुष्य प्रसन्न होते हैं। और भगवान और भक्ति की बात हो तो मुनिगण प्रसन्न हो जाते हैं।

इन्द्र का बेटा जयंत चित्रकूट आता है, जहां प्रभु ये लीला कर रहे हैं। उसने दृश्य देखा तो उसे लगा कि ये कहां का राम? ये तो सामान्य कामी पुरुष की तरह अपनी पत्नी को फुसला रहा है! इसमें कहां ब्रह्मत्व है? और इन्द्र के बेटे में मूढ़ता जगी और परीक्षा करने के लिए, रघुपति का बल देखने के लिए उसने कौए का रूप लिया। भगवान राम ने देखा कि जानकी के चरण में रक्तधारा बह रही है। जिस सीक से भगवान मालाएं बना रहे थे उसी सीक का परमात्मा ने तीर बनाकर मंत्र जोड़कर भागे हुए कौए के पीछे छोड़ दिया। जयंत मुड़मुड़कर देखता है। बाण पीछा करता है। जयंत इन्द्र के पास गया, लेकिन पिता ने दरवाजे बंद कर दिए। राम जिसका रूठ जाता है, उसे कोई नहीं बचा सकता। शिवलोक, ब्रह्मलोक गया। किसीने उसे आश्रय नहीं दिया है। गोस्वामीजी कहते हैं, दुनिया में सब ठुकरा देते हैं तभी कोई मार्ग में मिला संत उसको आश्रय देता है। जयंत को बिकल देखकर स्वाभाविक संत स्वभाव के कारण नारद के हृदय में दया उठी। नारदजी ने कहा, एक भूल तूने ये की कि भगवान के पवित्र जीवन में तूने चंचूपात किया! और दूसरी भूल तू ये कर रहा है कि पाप चित्रकूट में किया और आश्रय लेने इन्द्र के पास गया? जिसका तूने अपराध किया हो उसकी शरण तुझे जाना चाहिए। नारद ने जयंत को कहा कि जानकी के चरणो में गिर पड़। आपत्तिकाल में अचानक कोई साधु मिल जाए तो बहुत अच्छा सगुन समझना और फिर उसीके सामने बुद्धि के तर्क मत करना। वो कहे ऐसा करना। जयंत जानकीजी के चरणों में गिरा। सीयाजु ने उसे राम के सन्मुख किया। तो ये पहला प्रसंग जो है वो शृंगार का प्रसंग है। इस प्रसंग के बाद भगवान राम ने सोचा, अब मैं ज्यादा यहां रहूंगा तो लोग मुझे जानने लगेंगे। लोग मुझे जान जाएंगे तो मुझे जो अवतारलीला, नरलीला करनी है; मेरे अवतार का जो हेतु है, वो सफल नहीं होगा। तो यहां से मैं यात्रा आगे करूं। इस प्रसंग के बाद जो प्रभु के अवतार का उद्देश है; उसीको पूर्ण करने के लिए भगवान आगे की यात्रा करते हैं। अत्रि और अनसूया के आश्रम में आते हैं।

आज थोड़ी रामनाम की महिमा का क्रम ले लूं। वंदना-प्रकरण में पूर्णांक में बहत्तर पंक्तियों में नव दोहे में गोस्वामीजी ने भगवान रामनाम की महिमा और नामवंदना की है। एक अर्थ में देखो तो सात सोपान में 'रामचरित मानस' है और यहां बहत्तर पंक्तियों में 'नामचरित मानस' है, 'नामायण' है। तुलसीजी कहते हैं, त्रेतायुग में भगवान राम ने जो-जो लीला की, आज कलियुग में राम हमारे प्रत्यक्ष नहीं है; उसके चरित्र और लीला भी वर्तमान नहीं है; हमारे लिए राम की त्रेतायुगीन लीला रामनाम कर रहा है। त्रेतायुग में जैसे भगवान राम ने एक तापस स्त्री अहल्या को तारा। आज कलियुग में हमारी अहल्या जैसी कुमति-जड़मति को नाम से सचेत किया जा रहा है। त्रेतायुग के राम ने खुद शिवधनुष्य तोड़ा था। आज कलियुग में उसका नाम साधक के अहंकार को तोड़ता है। त्रेतायुग में भगवान राम ने शबरी, गीध आदि को शरण में रखा। कोई वर्णभेद, आश्रमभेद, जातिभेद, वर्गभेद से मुक्त प्रभु राम का आचरण आज कलियुग में रामनाम करता है। इसीलिए मैं व्यासपीठ से मेरी जिम्मेवारी के साथ कहता रहता हूं कि राम सांप्रदायिक नहीं है, ये वैश्विक महानाद है। इस जगत की उत्पत्ति में भी राम है, मध्य में भी राम है और अंत में भी राम है। राम आदि, अनादि है, शाश्वत है। गांधीजी ने कहा, मैंने बहुत बड़ा अभियान चलाया, लेकिन जहां-जहां मेरी सफलता का राज़ है वो एकमात्र रामनाम है। ये बहुत सरल और सस्ता है इसीलिए हमारी समझ में उसका मूल्य कम होता जा रहा है, लेकिन है अमूल्य। जगत में कोई भी मंत्र आपको प्राप्त न हो तो सार्वभौम अस्तित्व ने एक मंत्र फैंका है सब के कान पर वो है राम। और मेरा कोई आग्रह नहीं कि रामनाम ही लो। अल्लाह, ईश्वर, बुद्ध, महावीर किसीका भी नाम लो। लेकिन नाम की मौसम है कलियुग।

भगवान राम ने गरीबों को, वंचितों को अपनी शरण में लिया। आज राम का नाम गणिका, अजामिल, ब्याध, गीध कैसे-कैसे अधमों को अपनी गोद में लेकर तार देता है! नाम जब आखिरी व्यक्ति तक जाता है, तो नाम की बातें करनेवालों को और रामनाम सुननेवालों को समाज के आख़िरी व्यक्ति तक जाना चाहिए। इस नाम को चरितार्थ करना होगा। सभ्य समाज को मेरी प्रार्थना। यु.पी. के अगल-बगल एक वंचित के घर भिक्षा लेने चला गया। दो-तीन जगह मुझे अलग-अलग अनुभव हुआ। उसी गांव के मुखिया चुस्त थे, वर्णाश्रमवादी थे, तो मुझे कहे, 'बापू, अविवेक हो तो माफ़ करिएगा। लेकिन कम से कम आप भिक्षा लेने जाए तो हमसे पूछा तो करो कि किस घर में आप जा रहे हो? जिस घर में आप गए, वो किस जाति के लोग थे आपको पता है?' मैंने एक छोटा-सा जवाब दिया, मैं जब भिक्षा लेने गया तो उसने मेरी जाति नहीं पूछी, तो मुझे क्या अधिकार है, उसकी जाति पूछुं?

मैं युवान भाई-बहनों को भी कहूं, आपको वेकेशन हो, कभी मौका मिले तो एक-दो दिन ऐसे वंचितों के पास जाओ जो दीन-हीन है। मेरे देश की युवानी राम की कथा सुन रही है, मेरी व्यासपीठ के सामने नतमस्तक है तो मैं आपसे प्रार्थना करूं कि साल में दो-तीन दिन ऐसे निकालो जो दीन, हीन, उपेक्षित, वंचित है; जहां पढ़ाई नहीं पहुंची, उनके पास जाकर उनका हाल पूछे। राष्ट्र के कई प्रांतों की समस्या का उकेल आ जाएगा। मैं आपको अपील कर सकता हूं क्योंकि मैं जब भी मौका मिलता है जाता हूं। 'इन्डिया टुडे' के इन्टरव्यू में मुझे पूछा, 'आपकी दृष्टि में महामानव कौन?' मेरी समझ में जो आया उन महापुरुषों का नाम लिया लेकिन मेरी दृष्टि में मैंने जो-जो झोंपडें में मानवता पाई वो भी महामानव है। अभी थोड़े दिन पहले मैं एक संस्था में गया। मैंने गंगाजल देकर कहा, मेरी रोटी बना दो। मैं उस गरीबों को पूछ रहा था कि यहां अन्नक्षेत्र चल रहा है? उन्होंने कहा, हां। तुम्हारे घर के नौकर को तुम न खिलाओ तो कौन-सी मानवता है? मैं तो अपील करता हूं उद्योगपतिओं को और मेरी बात मानने भी लगे हैं। मैंने कहा, तुम्हारी दुकान में, उद्योग में यदि सो-दो सौ वर्कर हो, उनको दोपहर का भोजन तुम्हारी ओर से खिलाओ। हम रामकथा के लोग हैं, अपनी हैसियत से करें। झोंपडे में माँ रोटी पकाती थी और आंख में से आंसू गिर रहे थे। मैंने उस गांव के मुखिया को कहा, गंगाजल, चूल्हे का अग्नि, अन्न ब्रह्म है और आंसू पवित्र है। इतनी पवित्रता इकठ्ठी हो वहां जात मत पूछो। राम ने यहां किया था। आज उनके नाम से हमारे से जितना हो पाए अहेतु करें। तुलसी कहते हैं, रामजी ने सेतु बांधा और सेना पार कराई। आज नाम ऐसा सेतु है कि धर्म-धर्म, प्रांत-प्रांत, भाषा-भाषा, राष्ट्र के बीच में सेतु हो। 'कहौ कहां लगि नाम बढ़ाई।' स्वयं रामजी अपनी महिमा नहीं गा सकते।

प्रेम अडाबीड होता है। प्रेम यह लखनऊ का गार्डन नहीं है, प्रेम नैमिषारण्य है। प्रेम को कोई पार्क न समझो; यह अरण्य है। जिसमें कोई व्यवस्था नहीं होती। जैसे जंगल में कहीं भी पेड़ उगते हैं। लताएं, वनस्पति, ऋषिमुनि, झरनें, जलाशय, नदियां, हिरन, शेर, कठियारें क्या नहीं है वन में! 'अरण्यकांड' की चर्चा इक्कीसवीं सदी में जरूरी है। आज जब सभी जगह जंगल काटे जाते हैं, नगर बसते जाते हैं; बसने चाहिए लेकिन यह देश तो अरण्य का देश है। यहां वनवास की बड़ी महिमा है।

मानस-अरण्यकांड : ३

विश्व को ऐसे साधु की जरूरत है जो अध्ययनशील भी हो और भजनशील भी हो

'रामचरित मानस' के 'अरण्यकांड' की कुछ प्रसंगों को लेकर सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम कर रहे हैं। कुछ आगे बढ़ें। पूछा है एक श्रोता ने, 'बापू, 'अरण्यकांड' के आरंभ में जो सोरठा लिखा गया है उसमें लिखा-

उमा राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति।
पावहिं मोह बिमूढ़ जे हरि बिमुख न धर्म रति।।

यहां तुलसी ने पंडित और मुनि को साथ जोड़ा है। उसके पीछे गोस्वामीजी का कुछ विशेष अवलोकन है?' मेरा जवाब सही मत मानना, आप अपना अनुभव साथ में जोड़ना। क्योंकि व्याख्या सभी परायी होती है, अनुभव अपना होता है। पंडित-मुनि में 'पंडित' नगरवासी शब्द है और 'मुनि' अरण्यवासी शब्द है। पंडित आपको नगरों में मिलेगा, मुनि आपको अरण्य में मिलेगा। पंडित आपको भवन में मिलेगा, मुनि आपको वन में मिलेगा बहुत। अधिकतर ऐसा पाया जाता है। गोस्वामीजी दोनों को जोड़कर बड़ा संदेश देना चाहते हैं। गुरुकृपा से ऐसा लगता है। 'पंडित' शब्द जो गोस्वामीजी ने यूझ किया है सो मैं कर रहा हूं। इसमें कोई आलोचना की बात नहीं है। और कोई साधु, कोई फ़कीर, कोई सांई, कोई बाउल, कोई सूफ़ी, कोई यति, कोई संन्यासी, कोई बुद्धपुरुष, कोई भी शब्द या तो कोई समाज की आलोचना नहीं करता। यदि करे भी तो ये संदेशमूलक होता है, द्वेषमूलक नहीं होता। इसके पीछे द्वेष नहीं। जैसे मेरी व्यासपीठ कहा करती है कि साधु निंदा नहीं करता, निदान करता है। तो यहां बहुत तंदुरस्त चर्चा के रूप में आप इसे लीजिए। अगर कबीर 'पंडित' शब्द की आलोचना करे तो क्या कबीर को आप आलोचक कहोगे? अभी हमारे यहां संतवाणी पर जब एक भजन मीमांसा चल रही थी तो उसके जो मंचसंचालक थे उसने बहुत प्यारी बात की कि कबीर सुधारक तो है ही लेकिन कबीर केवल सुधारक नहीं है, कबीर स्वीकारक है। कबीर सबको स्वीकार करते हैं। और साधु सुधारक नहीं होता। साधु केवल इतना ही करता है स्वाभाविक कि चलो, सबका स्वीकार ही कर लें। और सुधारने से दुनिया कभी सुधरी नहीं, वर्ना तो राम के काल में ही सुधर जाती। मात्रा में फ़र्क है। मेरे गोस्वामीजी ने तो कहा कि-

बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना।

ये सृष्टि में मात्राभेदे गुण-अवगुण मिश्रित है। कभी गुण की मात्रा बढ़ती है, कभी अवगुण की मात्रा बढ़ती है। ऐसा चलता रहता है। बाप बेटे को सुधारने की कोशिश न करे कृपया! ये मेरा बेटा है, उसको दुलार करने की कोशिश करे। स्वीकार से सुधार होगा, सुधार से शायद नफ़रत होगी। तुम बहुत दबाव करके सुधारने जाओगे तो तुम्हारा अस्वीकार होगा कि क्यों बार-बार हमको पिटता है? यद्यपि 'गीता' में तो पंडित की बहुत प्यारी व्याख्या है। तो शब्द गलत नहीं है, लेकिन मूल तो तपासना चाहिए। पंडित के पास व्यवस्था होती है। शब्दों की व्यवस्था है, व्याकरण की व्यवस्था है, भाषाशुद्धि की व्यवस्था है, छंद-प्रबंध की व्यवस्था है। उसके पास वैभव है। उसका गणवेश भी देखोगे तो बड़ा व्यवस्थित होगा। मुनि अवस्था के मालिक है। ये बड़ी प्यारी अवस्था के धनी है। और यहां पंडित की आलोचना और मुनि की सराहना अथवा तो मुनि की अवगणना और पंडित की गणना ऐसा नहीं है। इसलिए गोस्वामीजी दोनों को जोड़कर शब्द बनाते हैं, 'पंडित मुनि पावहिं बिरति।' पंडित होना जरूरी है लेकिन साथ-साथ मुनिपना भी बहुत आवश्यक है। व्यवस्था जरूरी है लेकिन अवस्था भी बहुत जरूरी है। भवन जरूरी है लेकिन वन भी तीसरी अवस्था में जरूरी है। मैं फिर मेरे 'रामचरित मानस' के मनु के विचार आपके सामने रखूं-

होइ न बिषय बिराग भवन बसत भा चौथपन।

इस देश में ऋषिमुनियों ने जो व्यवस्था की है वो अद्‌भुत है। और ये व्यवस्था अवस्था के मुद्दे पर आई है। कालिदास कहते हैं कि रघुवंश में अवस्थामूलक व्यवस्था थी। रघुवंशी राजा क्या करता था? तो कालिदास कहते हैं कि 'वार्धक्ये मुनि वृत्तिनां।'

जब वार्धक्य आता था तो ये मुनिवृत्ति में जीते थे। योग करते-करते 'तनु त्यजाम्।' योगी बनकर शरभंग की तरह; शबरी की तरह; माँ सती की तरह जोग अग्नि में। शैशव में विद्यार्जित करते थे रघुवंशी। तारुण्य में विषय भोग का इन्कार नहीं सम्यक् जीवन का रस प्राप्त करते थे रघुवंशी। रघुवंशियों ने सम्यक् विषयों का सेवन न किया होता तो रघुवंश खत्म हो गया होता। राघव की ललित नरलीला में तुलसी कहते हैं, सीता ने दो सुंदर बालकों ने जन्म दिया। ये ललित नरलीला है। ये गोस्वामीजी सेतुबंध के महापुरुष है। ये जोड़नेवाला संत है। ये पंडित और मुनि को जोड़ रहा है। व्यवस्था और अवस्था के बीच सेतु निर्मित कर रहा है। नगर और वन की मूल बातें समझा रहा है। पंडित मुखर होता है, उसे मुखर होना पड़ता है और मुनि मौन होता है। मौन में बहुत कुछ कह जाता है। मुनियों के पास नज़र मिली, घटना घटी।

मुझे उससे नज़र मिलाने से भी डर लगता है।
क्योंकि वो आंखों-आंखों में जान पढ़ लेता है।
- वसीम बरेलवीसाहब

वो हमारे सामने देखता है और नखशिख हमारी किताब पढ़ लेता है। बोलना कोई बुरा नहीं है, लेकिन मौन की तुलना में बोलना बहुत छोटा है। जिन्होंने परमात्मा की अगाधता, ऊंचाई और गहराई समझी है वो नहीं बोलता। पंडित सभ्य समाज का व्यक्ति है, नागरी व्यक्ति है; मुनि अरण्य में रहेवोवाला अवधूत फ़कीर है। पंडित के पास व्याख्या होती है; वो शब्द के आधार पर चलता है, मुनि अनुभव के आधार पर चलता है। पंडित अध्ययनशील है, मुनि भजनशील है। 'मानस' की रामयात्रा में प्रभु कितने पंडितों के पास गये हैं? निमंत्रण तो कई पंडितों ने संस्कृत में भी दिये होंगे। लेकिन मुनि के पास बिना न्योता प्रभु गए।

निसिचर हीन करउँ मही भुज उठाइ पन किन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमनन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह।।

सभी मुनियों के स्थानों में राघव नंगे पैर गये हैं। पंडितों की पूजा करनी चाहिए और मुनियों की सेवा करनी चाहिए। पंडित पूज्य है और मुनि सेव्य है। पूजा रूपिये में हो जाती है और सेवा स्वभाव से होती है। साधु की पूजा नहीं होती, आप मत करना; बल्कि साधु की सेवा करो, साधु का संग करो। यदि मेरे विचार के साथ आप सहमत हो तो मैं दबाव नहीं डालूं; यदि भगवान आपके पास प्रगट हो जाये और कहे कि मांगो तो ये मांगना कि हे हरि, तू भी जिसको याद करता हो ऐसे कोई साधु का संग दे दे। ऐसे बुद्धपुरुष के समीप हमें रखना। और 'मानस' उद्‌घाटन ही यहीं से करता है-

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

'साधु' शब्द पवित्रतम शब्दों में से एक प्रधान शब्द है। साधु ब्राह्मण नहीं होता। साधु क्षत्रिय नहीं होता। साधु वैश्य नहीं होता। साधु उपेक्षित नहीं होता। साधु सभी वर्णों से पर होता है। आपने कभी सोचा है मेरे भाई-बहन, हमारी यहां एक प्रवाही परंपरा है कि अवतारों के जन्म की भूमि पूजी जाती है। और साधुता समझनी हो तो तुलसी के इस 'विनय' के पद का जब-जब भी हो चिंतन करना, स्वाध्याय करना।

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।

किसी ने पूछा तुलसीजी को कि आप साधु है? बोले, इच्छा है कि मैं भी साधु का स्वभाव ग्रहण करूं। कबहूंक मानी एक क्षण भी। एक लम्हा भी मुझमें यदि साधुता आ जाये। बिजली कौंध जाये। उसके चमकारे में मोती पीरो लूं। 'रामचरित मानस' पर महाराष्ट्र के संत की एक बहुत बड़ी टीका है 'मानस-पीयूष'; वो तो जब ये पद गाते थे तो जार-जार रोते थे! मैं संन्यासी हो गया लेकिन साधु स्वभाव नहीं आया! कैसे आयेगा? 'मानस'कार 'विनय' में फ़रमाते हैं-

श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।
जथालाभसंतोष सदा, काहू सों कछु न चहौंगो।
परिहरि देह-जनित चिंता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो।

मेरे विचार में यदि आप सहमत हो जाये तो हरि मिले तो भी कहना कि मुझे साधुसंग दो। और साधु भजन का पर्याय है। साधु है तो भजन है। जहां भजन है वहां कोई भी कपड़े में, कोई भी वर्ण में, कोई भी आश्रम में, कहीं भी हो, साधु है। आदमी को चाहिए अपने जीवन में भरचक प्रयत्न करने चाहिए। साधु स्वभाव के कारण घटना घटती है।

मोर बचन सब के मन माना।
साधु साधु करि ब्रह्म बखाना।।

मीरांबाई के नाम पर भी तो पद है-

बेनी मारे भागे मळ्यो छे साधु रे पुरुषनो संग ...

हमारे गोपालदास 'नीरज' हमेशां कहते हैं कि मानव हो वो हमारा भाग्य है, लेकिन कवि होना हमारा सौभाग्य है। 'बड़े भाग पाइअ सतसंगा।' तो 'रामचरित मानस' में 'बड़े भाग मानुष तनु पावा।' मनुष्य शरीर मिलना ये बड़भाग है लेकिन इनमें साधु बनकर जीना परम भाग है।

तो साधु है भजन का पर्याय। इसलिए मैं कहता हूं कि साधु को भी कभी साधन मत बनाना, क्योंकि साधु हमारा साध्य है। उसको जब हम साध्य समझते हैं तब शायद हमें कोई साधन करने भी नहीं पड़ेंगे। जिसने साधु को साध्य समझ लिया है कि मुझे मिल गई मंज़िल। तो चर्चा चल रही है-

उमा राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति।

और गोस्वामीजी सेतु जोड़ रहे हैं। मुख और मौन के बीच का सेतु। व्यवस्था और अवस्था के बीच का सेतु। भवन और वन के बीच में सेतु। नागरी सभ्यता और वन्य सभ्यता के बीच में सेतु। मैंने कई बार कहा है कि ये अरण्य में जब भगवान अत्रि महाराज के पास जायेंगे और उनकी जो स्तुति करेंगे वो भी तो वन्य-नागरी दोनों मिश्रित है। पंडित और मुनि का जोड़ है।

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं।।

भजामि ते पदांबुजं। अकामिनां स्वधामदं।।

विश्व को ऐसे साधु की जरूरत है, जो अध्ययन शील भी हो और भजनशील भी हो; जिसके जीवन में वन और भवन का संयोग हुआ हो। गोस्वामीजी कहते हैं, हे उमा, शिव के शब्द है 'अरण्यकांड' के आरंभ में, हे भवानी, राम के गुण अतिशय गूढ़ है। याज्ञवल्क्यजी भी यही शब्द कहते हैं कि भरद्वाजजी, आप भगवान राम के गूढ़ गुण सुनना चाहते हैं। इसलिए कहते हैं कि-

कीन्हिहु प्रस्न मनहुँ अति मूढ़ा।

और हमारी माँ पार्वती भी यही कहती है कि-

गूढ़उ तत्त्व न साधु दुरावहिं।
आरत अधिकारी जहँ पावहिं।।

हे उमा, रामगुण बहुत गूढ़ है, रहस्यमय है। इनमें तो अध्ययनशील और भजनशील, अनुभवशील भी होगा वो ही वैराग्य प्राप्त कर पायेगा। बाकी तो जो ये नहीं है वो तो

'पावहिं मोह बिमूढ़।' विमूढ़ लोग जिसमें न विरति है, न ज्ञान है, न वैराग है वो तो इसमें से मोह प्राप्त करेगा। जो भगवान की भक्ति से विमुख है उसको तो उससे मोह मिलेगा। इन्द्रपुत्र जयंत ने, इस मूढ़ ने मोह पैदा किया, संदेह पैदा किया। और कल हमने सुना कि ये घटना घटी। इस घटना के बाद भगवान राम, लक्ष्मण और जानकी निर्णय करते हैं कि अब मुझे लोग जानने लगे हैं चित्रकूट में। अब हम वन में आगे प्रस्थान करें। आगे की लीला के समापन के लिए अब शेष लीला पूरी करना। इसलिए तीनों वहीं से प्रस्थान कर रहे हैं। और आप जानते हैं कि अत्रि महर्षि के आश्रम में भगवान पधारते हैं। और अभी हमने जो स्तुति का पाठ किया वो स्तुति की। लेकिन उसके बाद आप जानते हैं कि जानकीजी अनसूयाजी के चरणों में प्रणाम करके बैठती है। और अनसूयाजी जानकी की जिज्ञासा पर नारीधर्म का उपदेश देती है। और उसको हमारे संतगण 'अनसूया गीता' कहते हैं। मुझे ये अच्छा इसलिए लगता है कि 'अरण्यकांड' के आरंभ में अनसूया के द्वारा जानकी के समक्ष नारीधरम का उपदेश कराया गया, लेकिन आप ये अनदेखा क्यों करते हैं कि वो ही तुलसी ने 'अरण्यकांड' का पहला प्रसंग पुरुषधर्म का लिखा है-

एक बार चुनि कुसुम सुहाए।

ये पुरुष धरम का प्रसंग है कि एक आदर्श पति को चाहिए कि वन में हो या भवन में, जिस स्त्री सर्वस्व का त्याग करके उसके चरणों पर चली है उसे शृंगार करे। यहां पहले नारीधर्म को नहीं बल्कि पुरुषधर्म को प्रस्थापित किया है, बाद में नारीधर्म को। फिर मुझे फिलम की पंक्ति याद आती है-

कुछ तो लोग कहेंगे,
लोगों का काम है कहना।

दुनिया तो दुनिया है यारों! भक्ति करते रहो। हमारे मज़बूरसाहब का एक बहुत प्यारा शे'र है-

इकरारे महोब्बत चाहिए वक्त की मौज नहीं।
कृष्ण चाहिए मजबूर, कृष्ण की फौज नहीं।

और जो ऐसे परमात्मा पर सब कुछ छोड़ देता है उसको परमात्मा भी कहता है, 'यथेच्छसि तथा कुरू।' 'अर्जुन, अब जो तेरी मरजी है वो कर।' पानी बन जाओ मेरे भाई-बहन! साधक को चाहिए पानी बन जाये। और परमात्मा, मेरा बुद्धपुरुष, मेरा मालिक मुझे जहां ले जाये मैं वहां जाऊं। भरत का क्या निवेदन है?

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

चित्रकूट में भरत ने सर्व समर्पण करते हुए कह दिया कि प्रभु, आपका मन जिस निर्णय में प्रसन्न हो, कोई भी निर्णय हमारे मन के अनुकूल न हो तो भी हम आपको कठोर नहीं समझेंगे।

तो दोनों धर्म; पहले पुरुषों के लिए कहा उसके बाद बहनों के लिए कहा गया। मेरे तुलसी ने तो कहा ही है कि-

नारी बिबस नर सकल गोसाईं।
नाचहिं नर मर्कट की नाईं।।

तुलसी पर ऊंगली उठाने से पहले तुलसी ने नारी के दो रूप 'मानस' में लिखे हैं ये देखना चाहिए। एक मायारूपी नारी; दूसरी भक्तिरूपी नारी। तुलसी ने भक्तिरूपी नारी की कहीं भी आलोचना नहीं की है। मायारूपी नारी की आलोचना हुई है। तो बाप! भगवान अत्रि आश्रम में पधारे हैं। दर्शन करके अत्रिजी ने भगवान की बड़ी स्तुति की है। 'मानस' की कई स्तुतियां है। मैं मेरे युवान भाई-बहनों से कहूं कि समय मिले तो थोड़ी कंठस्थ कर लेना। अर्थ समझ में ना आये तो कोई चिंता नहीं। तुम सार्थक हो जाओगे।

स्वागत हुआ प्रभु का अत्रि आश्रम में। फिर अवसर पाकर जानकीजी अनसूया के चरणों में प्रणाम करती है। जनक की कन्या है; दशरथ की पुत्रवधू है। उसका शील, उसकी मर्यादा कौन कहे? माँ से जिज्ञासा की है कि माँ, मुझे आप नारीधर्म की सीख दीजिए। खुद को निमित्त बनाकर विश्व के नारीसमाज को कुछ संदेश दिलवाना चाहती थी इसलिए जानकीजी जिज्ञासा करती है, नारीधर्म के लिए कुछ कहो कि पातिव्रत्य धर्म किसको कहते हैं? एक पुरुष को अपनी पत्नीपरायण कैसे रहना चाहिए, ये पूरा चित्रण कर दिया। अब पत्नी को पति के साथ कैसे रहना चाहिए ये बेलेन्स कर दिया। अनसूयाजी ने जानकी को कहा कि सीते, नारी के चार प्रकार है- उत्तम, मध्यम, नीच, लघु। ये चार प्रकार बताये। और फिर एक-एक पंक्ति में उसकी पहचान कराते हैं।

उत्तम के अस बस मन मांही।
सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं।।

मध्यम परपति देखई कैसें।
भ्राता पिता पुत्र निज जैसें।।
धर्म बिचारि समुझि कुल रहई।
सो निकिष्ट त्रिय श्रुति अस कहई।।

जानकी, उत्तम प्रकार की स्त्री वो है जो सपने में भी ऐसा लगता है कि उसके अन्य कोई पुरुष दुनियां में है ही नहीं। ये भक्तिरूपी नारी की व्याख्या है। बाप! उत्तम प्रकार की स्त्री है 'ओर देवता चित्त न धरई। हनुमंत सेई सर्व सुख करई।' बस, मेरा पति जो है उसमें सब आ गया। दूसरे प्रकार की स्त्री के बारे में कहते हैं कि जो दूसरे पुरुष को देखती तो है लेकिन भ्रातृभाव से, पितृभाव से, पुत्रभाव से उसे देखती है। तीसरे प्रकार की स्त्री जिसका मन थोड़ा मलिन होता है, लेकिन धर्म का विचार आने पर और अपने कुल की मर्यादा को याद करते हुए वो कुमारग से बच जाती है। धर्म जिसको बचा दे, सत्संग जिसको रोक ले, कुल की मर्यादा जिसको गलत मार्ग से रोक ले, वो तीसरे प्रकार की स्त्री है। और न धर्म जिसको रोक पाये, कुल-मर्यादा की ऐसी-तैसी करे फिर भी बच जाये; और भय है, किसी का दबाव है इसके कारण जो बच जाती है वो चौथे प्रकार की स्त्री है।

अब तुलसी ने प्रारंभ में कह दिया कि पुरुष की ये फ़र्जें है। अब विस्तार से माता ने चार प्रकार की नारी के बारे में बताया। लेकिन व्यासपीठ पर बैठा हूं; 'रामायण' गा रहा हूं। इक्कीसवीं सदी चल रही है तो मुझे मेरी जिम्मेदारी से यही सूत्र लेकर पुरुष के धर्म कहने हैं कि उत्तमपुरुष वो है कि जिसे सपने में भी कोई ओर स्त्री न दिखे। ये जोड़ना पड़ेगा। दिखाई दे तो एक पवित्र भाव से ही दिखाई दे। जैसे शंकराचार्य को लगा कि 'न मे जाति भेद:।' ये उत्तम पति की व्याख्या है। फिर मध्यम पति ये है जो अन्य स्त्रियों को देखे लेकिन बेटी के भाव से या तो माता-बहनों के भाव से, चलो, मित्र के भाव से देखे। ये दूसरा प्रकार पुरुष का होना चाहिए। मुझे पुरुषधर्म कहना ही था। और यहां यह प्रसंग चला है तो मैं भार देकर कहूं। और आनेवाली पीढ़ियां शायद इसे स्वीकारे भी। उसमें अच्छा-बुरा जो हो जिम्मेवारी मेरी। मेरे युवान भाई-बहन, युवानी का भी एक अपना धर्म होना चाहिए। तीसरे प्रकार का पुरुष वो है जो धर्म का विचार करे और कुल-मर्यादा सोचकर के जो आदमी रुक जाये कि नहीं, मुझे ऐसा नहीं सोचना चाहिए। धर्म रोकेगा। मन तो गिरा, गिरने की तैयारी है लेकिन धर्म ने बचा लिया। बिलकुल अधम पुरुष वो है जो अवसर न पाने के कारण, दूसरों के दबाव के कारण बच जाता है। सब शास्त्र संशोधन मांग रहा है। और 'भागवत' में वक्ताओं के लक्षण का वर्णन करते हुए व्यास भगवान कहते हैं, 'वेद शास्त्र विशुद्धिकृत।' मूल को पकड़कर के नये फूल खिलाना चाहिए। हमारी जो शाश्वत परंपरा है, वैदिक धर्म जो है वो हमारा मूल है। वो शिव है। धर्म की जड़ है। मैं रिवर्स में जा रहा हूं।

ऊल्टा नाम जपत जग जाना।

हमारी भारतीयता, हमारी संस्कृति, हमारी सभ्यता, हमारी वेदमूलक प्रवाही परंपरा वो अक्षुण्ण रहनी चाहिए। लेकिन फूल तो रोज खिलने चाहिए। तो संशोधन जरूरी है। करना चाहिए; साहस है। और राजनेता को भी साहस करना चाहिए। परिणाम थोड़े दूरगामी होते हैं लेकिन साहस करने चाहिए। तो चार प्रकार के पुरुष। यद्यपि एक बार तुलसी ने पुरुषधर्म कह दिया है लेकिन फिर भी जैसे नारी का धर्म वैसे पुरुष का धर्म। तो ये 'अनसूया गीता' जो जानकी के सामने उनका कथन हुआ है। ये दूसरा पार्ट भी पुरुष समाज याद रखें। ये 'अनसूया गीता' है। ये 'मोरारिबापू गीता' है; ये 'पुरुष गीता' है। मैं मेरी जिम्मेवारी से बोल रहा हूं। भगवान वहां रुकते हैं। फिर प्रभु की यात्रा वहां से आगे चलती है।

कथा क्रम थोड़ा लूं। वंदना-प्रकरण में गोस्वामीजी ने क्रमश: नाम महाराज की वंदना की। उसके बाद आप जानते हैं कि भगवान राम की इस कथा का पूरा इतिहास दिया है। सबसे पहले ये कथा शिव ने रची और अपने मानस में रख लिया। 'रामायण' के आदि कवि यद्यपि वाल्मीकि है, लेकिन हमारे पंडित रामकिंकरजी महाराज कहा करते थे कि वाल्मीकि ये 'रामायण' के आदि कवि है, लेकिन शिवजी ये 'रामचरित मानस' के अनादि कवि है। वो ही रामकथा, वो ही 'मानस' शिव ने कागभुशुंडिजी को दिया और बाबा भुशुंडि ने गरुड के प्रति उसका गायन किया। वो ही कथा इतनी ऊंचाई पर, एक कैलास पर और दूसरी नीलगिरि पर, लेकिन करुणा करनेवाले के लिए ये रामकथारूपी गंगा धीरे-धीरे नीचे उतर रही है। और तीरथराज प्रयाग में परम विवेकी याज्ञवल्क्य महाराज ने परम प्रपन्न भरद्वाजजी के सामने ये कथा का गायन किया। मेरे पूज्यपाद गोस्वामीजी कहते हैं, मैंने सुकरखेत में वराहक्षेत्र में गुरु भगवान के चरणों में बैठकर ये कथा सुनी। लेकिन उस समय मेरा बचपन था तो मैं पूरी कथा समझ नहीं पाया इसलिए आज तक अचेत रहा हूं। गुरु ने बार-बार ये कथा मुझे सुनाई तब जाके कुछ मेरी मति के अनुसार मेरी समझ में बात उतरी। और जब समझ में आई ही तो मैंने तुरंत शिव संकल्प कर लिया कि-

भाषाबद्ध करबि मैं सोई।
मोरे मन प्रबोध जेहि होई।।

जिसके कारण मेरे मन को बोध हुआ। मेरे भाई-बहन, भगवान की कथा हमें बार-बार सुननी पड़ेगी। क्योंकि हम अचेत है। उम्र तो जिसकी जो हो लेकिन अभी बचपन है; बचपन से भी बचपना ज्यादा है। इसीलिए किसी आचार्य के चरण में बैठकर उसे बार-बार सुनना पड़ेगा। और फिर श्रोताओं को चाहिए कि कथा सुनते-सुनते जब ठीक से समझ में आ जाये तो वैसे तुलसी ने भाषाबद्ध करने का निर्णय लिया, वैसे हम भाषाबद्ध न करे, कम से कम भावबद्ध करे। कथा जब भावबद्ध हो जाये तो ये ही भाव रखना कि मेरे मन को बोध हो। तुलसी ने निरंतर अपने मन को ही कथा सुनाई।

राम भज सुनु सठ मना।

हे मन, तू राम भज। मध्यकालीन समय में जितने भी संत आये उस समय इन सबने अपने मन को ही प्रबोध किया। और तुलसी ने शरणागति के घाट पर बैठकर कथा को अपने मन को सुनाना शुरू किया। तो इस तरह एक रूपक बनाया 'मानस' का। चार घाट बनाये। ज्ञानघाट पर शिव पार्वती से कथा कहते हैं। कर्म के घाट पर भरद्वाजजी याज्ञवल्क्यजी को सुना रहे हैं। उपासना के घाट पर बाबा भुशुंडि गरुड को और नितांत शरणागति और प्रपन्नता के घाट पर बैठकर कलिपावनावतार पूज्यपाद गोस्वामीजी महाराज अपने मन को कथा सुनाते हैं। और शरणागति के बाद लोग ऐसा समझते हैं कि अब कुछ काम नहीं करना है। शरणागति का मतलब ये है कि अब तुम्हें कोई आध्यात्मिक मार्ग से कुछ साधन करने की जरूरत नहीं है। लेकिन तू शरीर लेकर आया है; तेरा कुछ संसार है; तेरा कुछ उत्तरदायित्व है, इसलिए शरणागति के बाद शरणागति के भाव से अकर्ता भाव से तू कर्म भी कर। इसलिए कथा शरणागति के घाट से सीधी तीरथराज प्रयागराज के कर्मघाट पर जाती है। और वहां से भरद्वाजजी और याज्ञवल्क्य महाराज के संवाद से कथा का आरंभ करते हैं।

एक बार महाकुंभ हुआ। कल्पवास करके मुनिगण, महात्मागण, सब जो-जो आये थे वो बिदा होने लगे। महाराज याज्ञवल्क्य जो परमविवेकी है उसने भरद्वाजजी से बिदा मांगी तो भरद्वाजजी ने चरण पकड़कर के महाराज को आग्रह किया कि प्रभु, आप मत जाये। बोले, मेरे मन में एक बहुत बड़ा संशय है। आप मेरे मन को नि:संदेह कर दो। भरद्वाजजी कहते हैं कि ये रामतत्त्व क्या है भगवन्, जिसका नाम निरंतर अविनाशी होते हुए भी शिव जपते हैं! विनाशी जपे समझ में आये। जीव जपे समझ में आये। लेकिन ये शिव जो अविनाशी है वो भी सतत जप रहे हैं, 'राम, राम, राम।' जिस नाम का इतना अमित प्रभाव है तो ये रामतत्त्व है क्या? भरद्वाजजी की बात सुनकर तुलसीजी बोलते हैं कि 'जागबलिक बोले मुसुकाई।' और वो समझ गये कि आपको पूरी की पूरी राम-प्रभुता विदित है; आप राम के बारे में पूरा जानते हो। फिर भी आपने मूढ़ की तरह प्रश्न इसलिए किया कि आप मेरे से गूढ़ से गूढ़ राम रहस्य सुनना चाहते हैं। इसी बहाने मैं कहता रहता हूं कि आचार्यों को मुस्कुराना चाहिए। हमारे राम तो किसी से भी बात करते हैं तो वचन बाद में आते हैं, पहले मुस्कान आती है। मुस्कुराकर याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि आप जैसा श्रोता मिले और मुझे कथा कहने का अवसर मिले तो मैं जरूर रुककर आप को कथा सुनाऊंगा। रामकथा पूछने पर रामकथा से पहले याज्ञवल्क्यजी शिवकथा गाने लगे। ये भी है सेतुबंध, समन्वय। पूछा राम के बारे में और बताया शिव के बारे में। शिव है प्रवेश रामकथा में जाने के लिए। तो ये है सेतुबंध। वैष्णवी कथा; आरंभ शिवकथा से। तो यहां शिवचरित्र है। वाल्मीकिजी सीता के चरित्र को ही महत् फ़रमाते हैं। रामचरित्र तो ये है ही, फिर भरतचरित्र है। हनुमंतचरित्र है और आखिर में बाबा भुशुंडि का चरित्र है। ये चरित्रों का मेला है 'मानस।' तो पहले शिवकथा सुनाते हैं। और शिवकथा में हम प्रवेश कल करेंगे।

साधु है भजन का पर्याय। इसलिए मैं कहता हूं कि साधु को भी कभी साधन मत बनाना, क्योंकि साधु हमारा साध्य है। उसको जब हम साध्य समझते हैं तब शायद हमें कोई साधन करने भी नहीं पड़ेंगे। जिसने साधु को साध्य समझ लिया है कि मुझे मिल गई मंज़िल। विश्व को ऐसे साधु की जरूरत है, जो अध्ययनशील भी हो और भजनशील भी हो; जिसके जीवन में वन और भवन का संयोग हुआ हो।

जिस धर्म के मूल में कल्याण है वह धर्म विशेषणमुक्त धर्म है

बाप! गोमती तट पर बसी इस नगरी में नव दिन के लिए आयोजित रामकथा के चौथे दिन की कथा के आरंभ में व्यासपीठ से सभी को प्रणाम करता हूं। विशेष रूप से मेरे बहुत आदरणीय महोतरम मौलाना कल्बेसाहब, आप सहज और अपनी स्वाभाविक उदारता लिये हुए यहां पधारे और हमारे आग्रह पर कुछ मिनटों के लिए आपने अपने दिल के उद्‌गार व्यक्त किये। मैं बहुत आदर के साथ व्यासपीठ से आपको आदाब करता हूं। मेरे पर बहुत स्नेहादर रखते हैं। सालों से आप से महोब्बत का नाता रहा है। कई बार संग-संग तकरीर करने का मौका मिला है। आपके विचारों से बहुत लोग परिचित है। और आपने अभी जो सुना मेरे भाई-बहन, महामुनि विनोबा भावे ने एक बार कहा था, आचार्य कैसा होना चाहिए? तो विनोबाजी ने तीन सूत्र दिये। धर्माचार्य के तीन लक्षण। एक तो वो निर्भय होना चाहिए। दूसरा, वो निष्पक्ष होना चाहिए। और तीसरा, वो निर्वैर होना चाहिए। आज लखनऊ से इस मंच पर आकर आपने जो बात की। कितने निर्भयता से आपने विचार प्रस्तुत किये और कितने निष्पक्षता से? मैं ये नहीं मानता कि यहां रामकथा है और हिंदुसमाज या सभी समाज के लोग यहां बैठे हैं ये सभी को खुश करने के लिए ये उद्‌गार आपने कहे। ये आपकी निष्पक्षता का परिचय है। और निर्वैर; किसी के प्रति द्वेष हो ऐसी वृत्ति से आपने नहीं कहा। निर्वैर वृत्ति से कहा। कम धर्माचार्य ऐसी वृत्ति से जाहेर मंच पर से अपने विचार ऐसे व्यक्त कर सकते हैं। चाहिए साहस, अभय। और अभय सत्य के बिना नहीं आ सकता। फिर एक बार मैं आपका आदर करता हूं। आपके ये विचार सदा-सदा भारत को, दुनिया को प्रकाश देता रहे ऐसी अल्लाह से उम्मीद करता हूं।

धर्म उसको कहते हैं जो सबका कल्याण करे। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः।' जिस कांड की चर्चा इस कथा में हम विशेष रूप से कर रहे हैं ये 'अरण्यकांड' में गोस्वामीजी विशेषरूप में कह रहे हैं, कल्याण जो है, शिव मानी कल्याण; सबका जिसमें कल्याण है उस परमतत्त्व को भारतीय मनिषियों ने शिव कहा है। एक विग्रह के रूप में तो अपनी रुचि के अनुसार रूप निर्मित करके पूजते ही है लेकिन एक निराकार के रूप में, एक व्यापक के रूप में कल्याण जो सबका शुभ करे। चाहे इस्लाम के द्वारा सबका शुभ होता हो; चाहे हिन्दु धर्म के द्वारा सबका शुभ होता हो; चाहे इसाई, बौद्ध, जैन किसी के द्वारा। बिस्मिल्लखानसाहब बनारस की गंगा के तट पर शहनाई में साधना करते हैं, तो पंडित रविशंकर सितार में साधना करते हैं। क्या फ़र्क पड़ता है? राग तो दोनों को किसी अनुराग की ओर पेश करना है। कोई वायोलिन लेकर। ओमकारनाथ पंडित वोही अपने ढंग से गाता है। सवाल है कल्याण का। और राम का नाम कल्याण का निधान है। अल्लाह का नाम, परमतत्त्व का नाम शुभकारी है; कल्याण का खजाना है, ये तो सबने कुबूल किया है। तो जिस धर्म के मूल में कल्याण है वो धर्म विशेषणमुक्त धर्म है। वो केवल धर्म है। हम अपने-अपने ढंग से बंदगी करे ये हमारा गौरव है। तो कल्याण, इस कांड में जो हमने आश्रय लिया है। शंकर के लिए तो यही बात लिखी है-

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम्।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ स्वः सम्भवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलङ्कशमनं श्रीरामभूपप्रियम्।।

तो मूर्ति के रूप में शंकर; आकार के रूप में। निराकार के रूप में कल्याण, सबका शुभ। कोई भी धर्म हो, उसका मूल कल्याण। आकार के रूप में देखे तो शंकर और विचारधारा निराकार के रूप में देखे तो कल्याण। शिवतत्त्व, कल्याणतत्त्व ये प्रत्येक धर्मरूपी वृक्ष की जड़ है। जिस धर्मरूपी पेड़ के मूल में कल्याण नहीं है तो वो वृक्ष ज्यादा टिकाउ नहीं है। ये वृक्ष सीमा में आबद्ध है; खत्म हो जाएगा।

तो गोस्वामीजी ने यहां छः बिंदु कल्याण के बताये हैं 'अरण्यकांड' के मंगलाचरण में। क्या है शिव? क्या है कल्याण? जो धर्मरूप वृक्ष की जड़ है। विवेक आंतरिक-बहिर् सब में होता है; सभी धर्म में होता है। क्योंकि सत्संग से विवेक आता है। सभी लोग अपने-अपने धर्म के धर्मगुरुओं के सत्संग सुनते हैं और इससे विवेक उत्पन्न होता है। हम सब में मात्राभेद विवेक तो होता ही है। और विवेक को यहां समुद्र कहा। लेकिन विवेकरूपी समुद्र को ज्यादा प्रसन्न करनेवाला तत्त्व चंद्र है। मुझे और आपको कथा से क्या प्राप्त करना है? वो ही धर्मरूपी वृक्ष फले-फूले, छांव दे; समाज के बच्चे उसकी शाखा पर झूले; छोटे-बड़े पक्षी अपने आशियाने बनाये; पथिक विश्राम प्राप्त करे। और ये शाश्वत वृक्ष, अक्षय वृक्ष तभी हरा रह सकता है जब उसके मूल में कल्याण हो।

दूसरा सूत्र कल्याण। विवेक का रूप समुद्र को आंदोलित करता है चन्द्र बनकर। विवेक सब में है कम-ज्यादा। लेकिन उसे ऊर्मिसभर करने के लिए चाहिए चन्द्र। ये पूर्ण चंद्र है शंकर। भगवान शिव चंद्र भी है, शिव सूर्य भी है। वैराग भी थोड़ी-बहुत मात्रा में सबमें होता है कम-ज्यादा समय के लिए। हमारे यहां शब्द है 'स्मशानवैराग्य।' उसको ओर विकसित करने के लिए कल्याणरूपी भास्कर भगवान शिव है। आकाश में बहुत ताप हो, बादल उमड़ आये, अंधेरा हो ऐसे समय में आकाश से उत्पन्न वायु सबको इतर-भीतर कर देता है। हमारे मोह को, हमारी दांभिक मान्यताओं को, संताप को कल्याण वायु बनकर इतर-भीतर कर देते हैं वो है शंकर।

ब्रह्मा के आत्मज माने गये शिव। यद्यपि शिव अजन्मा है, सबकी आत्मा है लेकिन लीला के कारण 'वन्दे ब्रह्मकुल'; ब्रह्म मानी व्यक्ति नहीं; ब्रह्म मानी परमतत्त्व। कल्याण उसका आत्मज है। कल्याण वहीं से प्रगट हुआ है। तुलसी आखिर में उसे 'कल्याण' शब्द से सन्मानित करते हैं। जो राम कलंक को मिटानेवाला है। दुनिया के समस्त कलंक को मिटाये उसको राम कहा है। जो कलंक मिटानेवाला तत्त्व वो जिस को प्रिय है उसी तत्त्व का नाम है शिव।

कोई भी धर्म हो उसकी जड़ है शिव विग्रह के रूप में और कल्याण के रूप में निराकार विश्व, ऐसा पहले मंत्र में सूचित किया गया है। दूसरे मंत्र में कहा, सीता और लक्ष्मण के साथ भगवान राम वनयात्रा कर रहे हैं, ऐसे राम का मैं भजन करता हूं। अकेले राम नहीं, सीता-लक्ष्मण संयुक्तं। सीता मानी भक्ति, लक्ष्मण मानी वैराग्य। भक्ति और वैराग्य सहित मैं वो रामतत्त्व को भजता हूं। और भक्ति, वैराग, रामतत्त्व बंधियार नहीं है, प्रवाही है, चलनेवाला है। रामतत्त्व को किसी कारणवश हम छोटा कर देते हैं तब संघर्ष पैदा होता है। ये प्रवाह है, धारा है। अनवरत वैराग उनके साथ चलता है। भक्ति उनके साथ चलती है। ऐसे राम को तुलसी कहते हैं, मैं भजता हूं।

कल तक की कथा जो हम गा रहे थे उसमें राम लक्ष्मण-सीता सहित अत्रि ऋषि के आश्रम में आये। अत्रि ने स्तुति की। जानकीजी ने अनसूयाजी से नारीधर्म का संदेश अपने को निमित्त बनाकर पूरे विश्व को सुनाया। जानकी तो परम शक्ति है। उसके बहाने जगत को उपदेश दिया। जानकीजी ने अनसूयाजी के चरणों में प्रणाम किया और उसके बाद भगवान राम अत्रि से विदाय मांगते हैं। भगवान की यात्रा आगे बढ़ती है। रास्ते में विराध नामक राक्षस मिलता है। परमात्मा ने आते ही उसे कल्याण प्रदान किया। उसके बाद भगवान आगे बढ़े, जहां शरभंगमुनि बिराजमान है। शरभंग बहुत प्रसन्न हुए।

नाथ सकल साधन मैं हीना।
कीन्ही कृपा जानि जन दीना।।

शरभंगजी कहते हैं, महाराज, मैं समस्त साधनों से हीन हूं। आपने मुझे अपना जन, अपना दास समझकर सामने से कृपा की। आपका दर्शन ये कोई साधनसाध्य वस्तु मैं नहीं समझता क्योंकि मेरे पास कोई साधन है ही नहीं। एक बात पक्की है, हम जीव है। हम कितने भी साधन करेंगे जप, तप, पूजा, प्रार्थना कुछ भी करें; गायें, सुने लेकिन उसकी एक मर्यादा है। और सीमित साधनों से असीमित को पाना जरा मुश्किल है। हम सीमा में आबद्ध है।

हमारे शरीर में ये पंच अंक का नाटक चलता है। पंच अंक के नाटक में दो छोर है जन्म और मृत्यु। पहला अंक खुलता है जन्म। नाटक शुरू हो जाता है, हमारा जनम हुआ। दूसरा अंक है बाल्यावस्था। तीसरा अंक है युवावस्था। चौथा अंक है बूढ़ापा। और पांचवां अंक है मृत्यु। ये पंच अंकी नाटक में हम सब है। 'श्रीमद् भागवत' में जाये तो नव अंक का नाटक लिखा है। आदमी का गर्भाधान 'भागवत' का पहला अंक। कोई चेतना माँ के गर्भ में आती है। दूसरा अंक गर्भवर्धन। तीसरा अंक है जनम। चौथा बिलकुल नवजातशिशु। पांचवां अंक है कुमारअवस्था। छठ्ठा युवावस्था। सातवां अंक है आधेड अवस्था। आंठवां अंक है बूढ़ापा। नववां अंक है, 'राम बोलो भाई राम।' ये नव अंकी

नाटक है। अब 'गीता' में जाये, 'जन्म मृत्यु जरा व्याधि दु:ख दोषसु दर्शनम्।' फिर यहां जन्म, मृत्यु, बूढ़ापा, व्याधि, दु:ख, दोष नाटक पूरा। ये बिलग-बिलग नाटक की सृष्टि है और इन सीमा में हमारे सबके नाटक है। मैं कल शेक्सपियर का एक पन्ना पढ़ रहा था। उसने सात अंक के नाटक की बात लिखी। मुझे बल मिल गया। सभी सयाने एक मत। ये कहते हैं कि आदमी के शरीर में सात अंक का नाटक चलता है।

मेरे भाई-बहन, इनमें हमारा नाटक चलता है। हम क्या साधन कर पायेंगे? करना चाहिए जो हमसे हो। लेकिन परमात्मा की कृपा, दर्शन, परमतत्त्व का साक्षात्कार ये साधनसाध्य नहीं है। आज का मेडिकल सायन्स कहता है, कोई रोग हो तो दवा साधन है। आप दवा करो पर जब तक तुम्हारा बोडी उसको सपोर्ट न करे, तुम्हारा बोडी स्वयं सहयोग न करे तो कोई भी दवा सफल नहीं होती। आध्यात्मिक सायन्स क्या कहता है? वो कहता है, तुम परमतत्त्व को पाने के लिए कितने भी साधन करो, अच्छे हैं। लेकिन तुम्हारे अंदर कोई कृपातत्त्व है, वो सपोर्ट करे ये जरूरी है। वहां देह सपोर्ट न करे तो कारगत नहीं होता। और यहां अंदर का कृपातत्त्व, परमतत्त्व की कृपा, एक करुणा जो अंदर कोई तत्त्व बैठा है, ये जब तक सपोर्ट न करे तब तक ये नहीं होता। महाराज शरभंग कहते हैं, मैं साधनहीन हूं। मैंने मान लिया। आपने कृपा की इसलिए आज मैं धन्य हो गया हूं। तो साधन करना चाहिए। कोई गलत मेसेज नहीं जाना चाहिए कि हम प्रमादी बन जाये। व्यास ने प्रमाद को मृत्यु का पर्याय कहा है। लेकिन यह समझ होनी चाहिए कि हमारे साधनों से अंततोगत्वा कुछ होनेवाला नहीं। शरभंग भगवान की स्तुति करते हैं। उसके बाद योगअग्नि में अपने शरीर को समर्पित करके उस परमधाम की ओर चले गये।

एक प्रश्न, 'शबरी भी रामदर्शन के बाद योगअग्नि में चली गई। शरभंग भी योगअग्नि में बिदा ले गये। तो आदमी को परमात्मा के दर्शन के बाद शरीर को पूरा कर देना चाहिए? चलो, योगी है, पर परमात्मा के दर्शन के बाद तो ज्यादा रस से जीना चाहिए। यहां तो ये सब जा रहे हैं! ये कैसा?' बात तर्क की दुनिया में ठीक है। अमृत किसीको मिल जाय। अमृत, कल्पतरु, कामदुर्गा गाय ये सुनने में आता है, देखने में नहीं आता। लेकिन मानो अमृत है; जैसे रामनाम अमृत है, कथा अमृत है, भक्ति अमृतस्वरूपा है। तो अमृत हमें मिल जाय तो पीना चाहिए। एन्जोय करना चाहिए। ये तो अमृत सामने होने के बाद भी मरने की बात कर रहे हैं! और उपनिषद तो कहते हैं, हमें मृत्यु से अमृत की ओर ले चलो। मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि एवरेस्ट के शिखर पर चढ़ जाने के बाद इसके आगे कुछ नहीं है। इससे आगे जाया ही नहीं जाता। बस उसमें डूब जाना होता है। आगे कोई मंज़िल नहीं। खुमार बाराबंकवी का शे'र है-

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे,
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।

मंज़िल मिल जाय फिर क्या? यात्रा खत्म हो जाएगी। शरभंग को लगा होगा कि परमतत्त्व की प्राप्ति के बाद जीने से शरीर के धर्म स्पर्श करने के कारण कहीं ये ऊंचाई का जो आनंद है थोड़ा क्षीण न हो जाय इसीलिए बेहतर है, अब हम यात्रा पूरी कर दें। क्योंकि शरीर में क्षीणता वृद्धि होनेवाली है। जिन्होंने जान लिया वो अखंड आनंद में डूबने से ऐसी लीला में समर्पित हो जाते हैं। तुकाराम महाराज 'विठ्ठल-विठ्ठल' कहते समा जाते हैं, ऐसा कहा जाता है। चैतन्य महाप्रभु के बारे में कहा जाता है, वो 'हरिबोल हरिबोल' करते-करते समा गये। वैसे मीरां द्वारिकाधीश के श्री विग्रह में समा गाई। एक ऊंचाई के बाद अखंड आनंद में डूबने की इन महापुरुषों की चेष्टा है। उसके बाद प्रभु आगे की यात्रा करते हैं।

एक जिज्ञासा, 'बापू, 'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।' बापू, भगवान ने ब्राह्मणों, गाय, देवता और संतों के लिए मनुष्य अवतार लिया तो राजा दशरथ के समय इनके हितों की रक्षा नहीं हो रही थी?' अच्छा सवाल है। दशरथ के काल में इन चारों का हित होता था, होता था, होता था। लेकिन उसी काल में रावण का जनम हुआ। राम बाद में आये। रावण के जनम के कारण दशरथ का शासन तो चलता था लेकिन इन चारों का हित खतरे में पड़ गया। गायें कटने लगी। राक्षस लोग ऋषिमुनियों के सिर काटने लगे। बौद्धिक लोगों को काटे गये। दैवी विचारों को देश निकाला गया। ये सब 'रामायण' में लिखा है। तो रावण के कारण ये सब घटना घटी। इन सब का हित दाशरथी शासन में तो था लेकिन दशाननी वृत्तियों का प्रकोप हुआ। इसके कारण इन चारों का हित खतरे में आया तब जाके राम आये और राम ने इन चारों के हित के लिए अवतार धारण किया। इसी रूप में देखना होगा। और सही में है। ये मेरा व्यक्तिगत अभिप्राय है। और

रामजी त्रेतायुग में प्रकट हुए। आज आप देखो तो गाये काटी जा रही है!

मेरे देशवासियों को कई बार कह रहा हूं, प्रार्थना करूं कि गाय की पूजा जरूर करो, लेकिन गाय से प्रेम करो। पूजा एक रूपये में हो जाती है, प्रेम करने में पूरी जिंदगी देनी पड़ती है। ये तो कंकु डाल दो; पूछ इधर-उधर कर दो; घास डाल दो। आप कहे, सगुन! सगुन तो तब मिलेगा जब माता से प्यार किया जाय। गंगा से प्यार किया जाय। तो बाप! रावण के शासन के कारण ऋषिमुनियों को बहुत तकलीफ़ दी गई। जो वेद-पुरान की चर्चा करते थे उनको देश निकल कर दिया गया। दाशरथी शासन में चारों का हित हो ही रहा था। पुण्यश्लोक राजा थे। लेकिन आसुरीवृत्ति का प्राबल्य होने के कारण विप्र, धेनु, सुर, संत का परमहित करने के लिए भगवान को आना पड़ा।

निसिचर निकर सकल मुनि खाए।

अस्थियों के ढेरों को देखकर भगवान की जिज्ञासा है, ये किसकी हड्डियां है? तब जाके मुनियों ने अपने दर्द कहे। सब आसुरी वृत्तियों ने ऋषिमुनियों को खत्म कर दिया। तभी भगवान ने प्रतिज्ञा की इन आसुरी वृत्तियों से धरती को मुक्त करूंगा। ऐसी प्रतिज्ञा करके भगवान की यात्रा आगे बढ़ती है। सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम पधारे। सुतीक्ष्ण राम का बड़ा प्रेमी महात्मा है। 'मानस'कार लिखते हैं, भगवान राम आ रहे हैं, ऐसा सुनते ही इतने भाव में डूब गये! अतिशय प्रीति सुतीक्ष्ण की देखकर भगवान राम इनके हृदय में प्रगट हुए। अपनी प्रीति में खोये हुए सुतीक्ष्ण को पाकर भगवान उनके हृदय में प्रगट होते हैं। हृदय में जैसे परमात्मा के दर्शन हुए सुतीक्ष्णजी आंखें बंद करके बैठ गये। अंदर परमात्मा का अनुभव में लीन हो गये। भगवान राम-लक्ष्मण निकट आये। उसको जगा रहे हैं। जिसका अंदर दर्शन कर रहे हैं वो तत्त्व उसको जगा रहे हैं। लेकिन ध्यानजनित सुख छोड़ता नहीं, चाह रहा है।

एक सुख का नाम है ध्यानजनित सुख; 'मानस' का जो सुख है। यहां जो ध्यान करते हैं उसको जो अंदर सुख मिलता है। आज लोग दुनिया में मेडिटेशन बहुत करते हैं। अच्छी बात है। और कोई सही गुरु से योगा सीखकर के कोई ध्यान आदि करे जो पतंजलि का मार्ग है, तो उसको जरूर सुख मिलता है। ध्यान से उत्पन्न होनेवाला एक सुख है। लेकिन सबको ध्यानवाली जो पद्धति है वो राश न भी आये। क्योंकि ध्यान तक पहुंचने के लिए पतंजलि ने

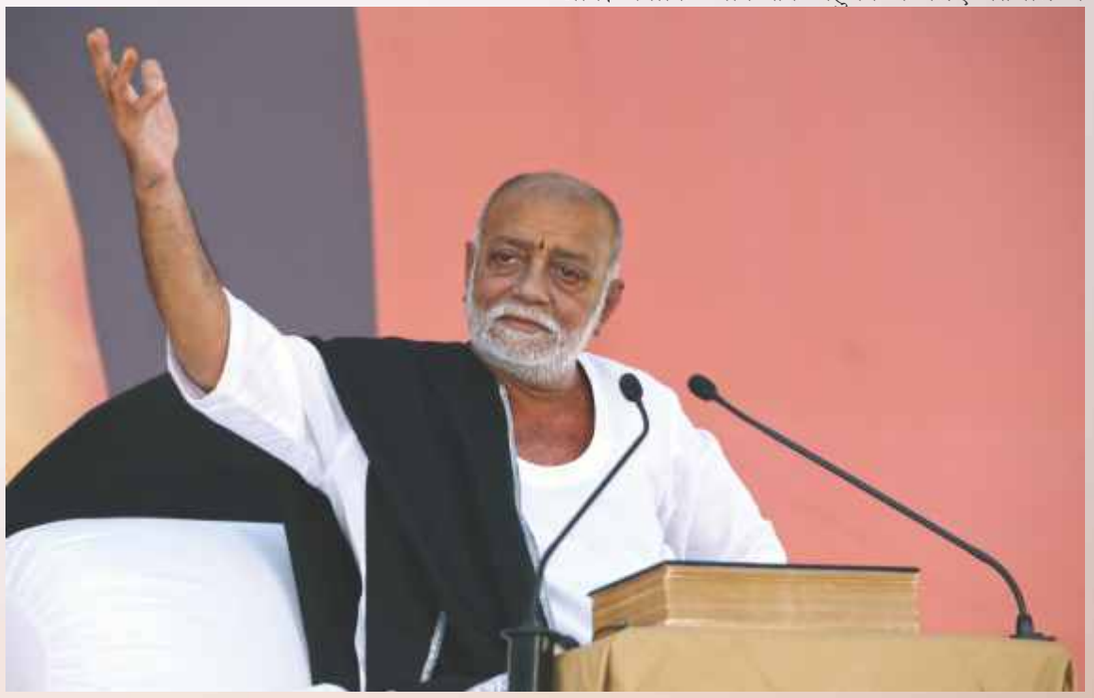

कितने-कितने पड़ाव बताये! यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा कितना चलना पड़ता हैं! तब जाके ध्यान तक आदमी पहुंचता है। इसीलिए एक सुख दूसरा है जो केवल ध्यानजनित सुख नहीं है। उसका नाम मेरी व्यासपीठ कहना चाहेगी, नामजनित सुख। आदमी बैठा-बैठा हरि, हरि बोले। कृष्ण, कृष्ण बोले। ये नामजनित सुख है। नाम जपे। कलियुग में ये सरल, सुलभ है। कई लोग कहते हैं, लोग नाम यंत्रवत् जपते हैं! यंत्रवत् तो यंत्रवत् लेकिन ऐसे जपते-जपते नामजनित सुख की उपलब्धि होगी।

एक है ध्यानजनित सुख। दूसरा है नामजनित सुख। तीसरा है गानजनित सुख। मेरी बात कहना आत्मश्लाघा जैसा लगेगा। लेकिन मैं 'रामायण' गाता हूं तो मुझे गानजनित सुख मिलता है। मुझे गाने का अपना एक सुख है। और आपको भी इसलिए मैं गवाता हूं कि आपको भी गानजनित सुख मिले। गोपियों को विरह का दु:ख बहुत पीड़ा देने लगा तब वो गानसुख लेने लगी। आंखों से आंसू निकल रहे हैं और वो कृष्ण को गा रही है। कई प्रकार के आध्यात्मिक सुख बताये गये। इनमें ये सुख हम समझ सकते हैं।

मेरे भाई-बहन, जिस रास्ते में सुख मिले वो रास्ता छोड़ना नहीं। मिल गया उसको लूट लो। इस लम्हे को पकड़ो। आप राम के उपासक है, लेकिन कृष्ण बोल के आपके आंख में आंसू आ गया तो सुख मिला तो अरे, अरे, मैं तो राम का आदमी हूं और कृष्ण क्यों बोला? इसमें जाना मत वर्ना तुम सुख को धक्का दे रहे हो। कई लोग मेरे पास आते हैं; कहते हैं, हम गायत्रीमंत्र के उपासक हैं। गायत्रीमंत्र जपते हैं लेकिन आपकी कथा सुनते-सुनते गायत्रीमंत्र तो जपते हैं लेकिन अचानक 'हनुमानचालीसा' शुरू हो जाता है। मैंने कहा, जो सहज हो वो कर। कई लोग कहते हैं, ध्यान हम दूसरे का करते हैं, दिखता है हनुमान!

सुतीक्ष्ण बड़ा अनोखा मुनि है। भगवान जगा रहे हैं। नहीं उठता तब भगवान ने सुतीक्ष्ण के हृदय में रामरूप जो प्रगट हुआ था वो हटा दिया और हृदय में चतुर्भुज रूप दिखाया। और वो चतुर्भुज उसको अनुकूल नहीं पड़ता तो एकदम अकुला गये और जैसे आंखें खोली ही सन्मुख राम-लखन-जानकी को पाते हैं। चरण में गिर जाते हैं। परमात्मा ने सुतीक्ष्ण को हृदय से लगाया। अविरल भगति, विरति की मांग की। गुरु-चेला दोनों अविरल भक्ति, विरति मांगते हैं। सुतीक्ष्ण भी अविरल भक्ति, विरति मांगते हैं और कुंभज भी अविरल भगति, विरति मांगते हैं। लेकिन एक साथ में विज्ञान जोड़ता है; एक साथ में सत्संग जोड़ता है। कुंभज अविरल भगति, वैराग और विज्ञान की मांग ओर एक मुनि सत्संग की मांग करता है। एक ज्ञानी है, एक प्रेमी भक्त है। कुंभज विज्ञानी है, 'अरु घट संभन मुनि विज्ञानी।' आरती में हम रोज गाते हैं। कुंभज अगस्त्य विज्ञानी है। कई रूप में आप उसे विज्ञानी सिद्ध कर सकते हैं, 'बढ़त विधि जिमि घटज निवारा।' एक तो विंध्याचल जो विस्तरित होता था उसे रोका था। दूसरा, ये कुंभज सप्तसिंधु का पान कर सकता है। बड़ी प्यारी पौराणिक कथाएं उसके संदर्भ देखनी पड़ती हैं। विज्ञान की ये शक्ति है। कोई ऐसी शक्ति विस्तरती चलें तो विज्ञानी अपने विज्ञान के द्वारा उस पर रोक लगा सकता है। ये कुंभज का जन्म ही वैज्ञानिक रूप में हुआ है। इसलिए कुंभज कहते हैं। घट से पैदा हुआ इसलिए उसे घटज कहते हैं। ये कितनी बड़ी बात है, पैदा घड़े से होता है ओर पी जाता है समुद्र को! बहुत विरोधी बात लगती है।

तुलसीदासजी ने बहुत सन्मान दिया है विज्ञान को 'मानस' में। 'उत्तरकांड' में भगवान राम कहते हैं, ज्ञानी से भी विज्ञानी मुझे ज्यादा प्रिय है। अब्दुल कलाम जैसे विज्ञानी अल्लाह को ज्ञानी से ज्यादा प्रिय हो सकते हैं। लेकिन गांधीजी की एक बात सुनाउं। गांधीजी ने सात सामाजिक पाप गिनाए हैं। इनमें एक है संवेदनहीन विज्ञान सामाजिक पाप है। कोई कभी भी किसीकी हत्या कर सकता है विज्ञान के कारण। लाखों की जो हिरोशिमा की स्थिति चंद लम्हों में लाखों लोग मार दिये गये! संवेदनाशून्य समाज! उस विज्ञान की आलोचना की बाकी तुलसी ने हनुमानजी को, वाल्मीकि को विज्ञानी कहा हा है। कुंभज विज्ञानी है। वाल्मीकि विज्ञान विशारद है। ये विज्ञान के पहुंचे हुए हैं आचार्य है सब।

वैज्ञानिक 'सुन्दरकांड'का पाठ करते हैं तो मुझे एक बार बुलाया, आप आये। मैंने कहा, मैं मैट्रिक में तीन बार फैल! आप को क्या बोलूं? मैं विद्यार्थीओं को कहूं, निराश मत होना कभी फैल हो तो! मोरारिबापू को याद करना! होंसला बढ़ेगा यार! तीन-तीन बार फैल होने के बाद भी आनंद में जीता हूं यार! जिंदगी में फैल मत होना। हरि भजो यार! जीवन में फैल नहीं होना; अध्ययन में थोड़ा हो गया, हो गया। मैं 'सुन्दरकांड' में गया। फिर उन्होंने आग्रह किया, बापू, कुछ तो बोले। 'सुन्दरकांड' में हनुमानजी की कथा आती है। वाल्मीकि और हनुमानजी विज्ञानी है। तो सब चौंक गये! हनुमानजी विज्ञानी? कई विद्वान 'वाल्मीकि रामायण' का 'सुन्दरकांड' का पाठ करते हैं। एक बंदर वैज्ञानिक? सब चौंके! जब सब वानर सीताजी की खोज के लिए निकले। आख़िर में हनुमानजी ने प्रणाम किया जो दक्षिण में ग्रूप जा रहा था जानकी की खोज के लिए। हनुमानजी सब के पीछे प्रणाम करते हैं और भगवान को लगा, ये सीता की खोज कर पायेगा। तो भगवान ने निकट बुलाया, मुद्रिका दी। तो हनुमानजी को सीताशोध का दायित्व दिया गया। सीता है उर्जा शक्ति। और उर्जा की खोज वैज्ञानिक ही कर सकता है। हनुमानजी विज्ञानी है इसलिए जानकीरूपी परम उर्जा की खोज उसको सौंपी गई। और वाल्मीकि विज्ञानी है। और वो ही सीता सगर्भा हुई रामराज्य के बाद जब सीतात्याग का प्रसंग आया तो भगवान राम जानकी को वशिष्ठ के आश्रम में भेज सकते थे। त्यागना ही था तो दूर वाल्मीकि के आश्रम में सीता को छोड़ने की बात क्यों आई? वर्ना वशिष्ठजी तो कुलगुरु थे। सीताजी को छोड़ने लक्ष्मणजी गए। जानकी है उर्जा और उर्जा सगर्भा है। कब इस उर्जा से क्या प्रगट हो खबर नहीं! और ऐसी प्रगट होनेवाली सगर्भ उर्जा को किसी वैज्ञानिक के हाथों में सौंपना ही जरूरी है वर्ना कब विस्फोट हो, कोई पता नहीं। इसलिए वाल्मीकि के आश्रम में जानकी को भेजना इसी संदर्भ में मुझे योग्य लगता है। कुंभज विज्ञानी है। वो अविरल भगति, वैराग चाहते हैं लेकिन साथ-साथ विज्ञान की भी जरूरत है।

तो विज्ञान घड़े में उत्पन्न हुआ आदमी समुद्र को पी सकता है। उसको कहते हैं गागर में सागर। और विस्तरित एक शक्ति विंध्य के रूप में विस्तरती जा रही थी कई जंगलों ओर कई कुछ विनाश की ओर उसी समय। उबढ़ती शक्ति को कुंभज ने रोका था। ओर विज्ञानी को चाहिए अविरल भक्ति की जरूरत है। वैज्ञानिक को वैराग की जरूरत है। सुतीक्ष्ण अविरल भगति मांगते ही है। वैराग के साथ-साथ सतसंग की भी मांग है। प्रभु ने बहुत कृपा की। उसके बाद प्रभु बिदा लेने की तैयारी में है तब सुतीक्ष्ण ने कहा, बहुत दिनों से मैं गुरु के दर्शन को नहीं गया। प्रभु, आप कहे तो मैं साथ-साथ चलूं? ओर बगल में ही मेरे गुरु का आश्रम है। मुझे ये बात अच्छी लगी। अच्छा शिष्य हो तो गुरु के पास भगवान को ले जाता है। अच्छा आश्रित गुरु को भी परमात्मा का दर्शन करा देता है।

सुतीक्ष्ण का ये इरादा था कि जितनी घड़ियां इन परमतत्त्व के साथ बिताई जाय वो मेरे हित की है। यात्रा आगे बढ़ती है और कुंभज ऋषि के आश्रम में प्रभु पधारते हैं। कुंभज और भगवान राम का मिलन होता है। प्रभु बीच में बैठे हैं। मुनि-मंडली चारों ओर बैठी है। तब प्रभु कहते हैं, मुझे आप से एक मंत्र लेना है क्योंकि मेरे अवतारकार्य का ये अंतिम चरण है। 'विनाशाय च दुष्कृताम्।' अब मुझे आसुरी वृत्ति का नाश करना है। तो आप से विचारविमर्श करना चाहता हूं।

भगवान की वनयात्रा में तीन मुनिओं से प्रभु ने तीन जानकारी प्राप्त की। अयोध्या से निकले और भरद्वाज के आश्रम में आये तो भगवान ने पूछा, आप मुझे रास्ता बताइए कि अब मैं कौन रास्ते पर यात्रा करूं? भरद्वाजजी को मार्ग पूछा। उसके बाद वाल्मीकि को कहा, आप हमें स्थान दिखाओ कि मैं किस स्थान में रहूं? और ये तीसरे मुनि है जिसको मंत्र पूछते हैं। मंत्र का अर्थ है विचार। कोई ऐसा विचार मुझे दो जो मैं आसुरीवृत्ति का समापन कर सकूं। कुंभज कहते हैं, 'तुम्हरि हि कृपा' आप की कृपा से मैं कुछ आप की महिमा जानता हूं। आप यहां से दंडकवन में प्रस्थान करे। वहां गोदावरी के तट पर पंचवटी नामक स्थान है। ऋषि-मुनिओं का उग्र शाप होने के कारण पूरी वनश्री खतम हो गई है। फिर उस भूमि को नवपल्लव करें। तो ये मंत्र दिया। निर्माण करने के लिए कुछ निर्वाण भी करना पड़ता हे। इसलिए ये सूत्र दिया, आप पंचवटी में निवास करो। अब राम-लखन जानकी आगे की यात्रा करते हैं। रास्ते में गीधराज जटायु मिलता है, जो दशरथजी का

सबका जिसमें कल्याण है उस परमतत्त्व को भारतीय मनिषियों ने शिव कहा है। एक विग्रह के रूप में तो अपनी रुचि के अनुसार रूप निर्मित करके पूजते ही है लेकिन एक निराकार के रूप में, एक व्यापक के रूप में कल्याण जो सबका शुभ करे। चाहे इस्लाम के द्वारा सबका शुभ होता हो; चाहे हिन्दु धर्म के द्वारा सबका शुभ होता हो; चाहे इसाई, बौद्ध, जैन किसी के द्वारा। बिस्मिल्लखानसाहब बनारस की गंगा के तट पर शहनाई में साधना करते हैं, तो पंडित रविशंकर सितार में साधना करते हैं। क्या फ़र्क पड़ता है? राग तो दोनों को किसी अनुराग की ओर पेश करना है। तो जिस धर्म के मूल में कल्याण है वो धर्म विशेषणमुक्त धर्म है।

मित्र है। पितातुल्य आदर प्राप्त करता है। जटायु और राम से प्रीत प्रगाढ़ हुई। फिर गोदावरी के निकट पर्णकुटि बनाकर के राम-लखन-जानकी निवास करने लगे। भगवान के आने के बाद मुनिओं के वृंद त्रास से मुक्त होने लगे। सुंदर वातावरण बन गया।

कथा का क्रम। याज्ञवल्क्य महाराज से भरद्वाजजी ने जिज्ञासा की थी, रामतत्त्व क्या है? याज्ञवल्क्य प्रसन्न होकर रामकथा सुनाने लगे। लेकिन कथा के पूर्व उसने शिव कथा सुनाना शुरू किया। एक बार त्रेतायुग में शिव अपनी धर्मपत्नी सती को लेकर कुंभज ऋषि के पास कथा सुनने हेतु गए। कुंभज ऋषि ने भगवान शिव की पूजा की। नियम तो ऐसा है, श्रोता वक्ता को आदर दे। लेकिन वक्ता शिव की पूजा करते हैं तब सती के मन में ये हुआ कि ये आदमी क्या कथा सुनायेगा जो अभी से हमारी पूजा कर रहा है! घड़े में जन्मा है वो समुद्र जैसी कथा क्या खाक गायेगा! दक्षकन्या होने के कारण ऐसा बौद्धिक तर्क करती है। कथा शुरू हुई। भगवान शिव ने पूरी कथा सुख मानकर सुनी। सती बैठी तो होगी लेकिन सुना नहीं होगा। पहले से ही ग्रंथि बांध ली कि इससे क्या सुनना? भगवत् कथा का रस चुक गई सती। कथा पूरी हुई। भगवान शिव प्रसन्न हुए। अधिकारी समझकर भक्ति दी। फिर शिव-सती दंडकारण्य से जा रहे हैं। वर्तमान त्रेतागयुग में राम की लीला चल रही है। सीता का अपहरण हुआ है। विरही के रूप में प्रभु रोतेरोते घूम रहे हैं। शिव ने जान लिया, जिस ठाकुर की कथा सुनी उस प्रभु की लीला वर्तमान है। दूर से दर्शन करते हुए शिव ने 'हे सच्चिदानंद, हे जगपावन' कर दूर से प्रणाम किया। सती ने ये देखा। ओह! एक आदमी पत्नी के विरह में रो रहा है और मेरे पतिदेव उसे प्रणाम कर रहे हैं! सती के मन में संदेह प्रगट हुआ। शिव जान गये। शिव ने कहा, देवी, आप का नारीस्वभाव है। संशय न करो। शिव ने बहुत समझाया। सती न मानी। शिव कहते हैं, मेरे कहने से भी आप का संशय न गया तो आप जाकर परीक्षा करो। आप परीक्षा करो, राम ब्रह्म है कि मैं बोला वो सब भ्रम है? आप निर्णय करे। मेरी व्यासपीठ मुखर हुई है कि परमतत्त्व परीक्षा का विषय है ही नहीं; थोड़ी समीक्षा कर सकते हैं। जैसे वेद की समीक्षा। बाकी उसकी प्रतीक्षा करनी होती है। प्रेम करना है, भक्ति करनी है, उसी तत्त्व तक पहुंचना है तो प्रतीक्षा करनी होगी।

मेरे भाई-बहन, जब हमारे सभी प्रामाणिक प्रयास निरर्थक हो जाय तब प्रभु पर छोड़ देना। इससे पहले नहीं। आदमी को चाहिए पुरुषार्थ करता रहे। लेकिन जब लगे कि सभी प्रामाणिक पुरुषार्थ का कोई नतीजा नहीं आया तब हरि पर विश्वास। शिवजी बैठे-बैठे हरि का नाम जपने लगे। और सती जाती है। सीता का रूप लेती है। रूप सीता का लिया। सीता के वेश में सती को राम ने देखा। प्रभु ने प्रणाम किया, मैं दशरथ आत्मज हूं। मेरे पिता भगवान शिव कहां है? राम के प्रश्न पूछने पर सती पकड़ी गई और एक भी शब्द बोले बिना भाग निकली! राम ने अपनी ऐश्वर्यलीला दिखाई। शिव ने पूछा, आप कुशल तो है? किस प्रकार परीक्षा की? सती कहने लगी, कोई परीक्षा नहीं ली। शिव ने ध्यान में देखा। सती ने जो किया वो जान लिया। शिव सोचने लगे, सीता तो मेरी माँ है। मेरी पत्नी सती सीता का रूप ले तो फिर इससे अगर सांसारिक संबंध रखूं तो अपराध हो जाएगा। जब तक सती का ये शरीर हो, मेरा और उनका मिलना न हो। अपनी प्रतिज्ञा का विचार करके घर के बाहर स्वरूप में लीन होते हैं और अखंड समाधि को उपलब्ध होते हैं।

शिव ने सतासी हजार साल तप किया। सतासी हजार साल बाद शिव जागे, 'राम, राम' उच्चारण करने लगे। सती ने सोचा जगतपति जागे। चरणों में प्रणाम किया। जैसे सती आई डरती, प्रणाम किया और करुणा उड़ेलने लगे। 'सनमुख संकर आसनु दीन्हा।' सती, मेरे सन्मुख बैठो। उसी समय वो घटना घटी। दक्ष प्रजापतिपद पाया तो बड़ा यज्ञ आयोजित किया। सब देवताओं को आमंत्रित किया। शिव और सती को आमंत्रित नहीं किया बदला लेने के लिए। विमानों की गुंज सुनके सती का ध्यान विमानों में जाता है और सती शिव से पूछती हैं कि भगवन्, ये विमान में देवगण कहां जा रहे हैं? तब शिव ने कहा, आप के पिता बहुत बड़ा यज्ञ कर रहे हैं। मुझे, ब्रह्मा, विष्णु को निमंत्रण नहीं है। यहां शिव ने समझाया। सती मानती नहीं। दक्ष के यज्ञ में जाती है। वहां अपमान होता है। शिव अपमान सहा नहीं गया और फिर दक्ष के यज्ञ में सभी को संबोधन करती हुई अपने शरीर को योगाग्नि में भस्म कर देती है। यहां हाहाकार हो गया! यज्ञ विफल हो गया। जलते समय सती भगवान से मांगती है, 'जनम जनम सिव पद अनुराग।' इस भाव को लेकर सती दूसरे जन्म में हिमालय के घर पुत्री के रूप में जनम लेती है। फिर शिव के लिए तपस्या करती है। फिर आख़िर में देवताओं की योजना बनती है। भगवान विष्णु ने शिव को आग्रह किया और शिव पुनः पार्वती को ब्याहने के लिए तैयार होते हैं।

'अरण्यकांड' में शृंगारलीला, संहारलीला और सत्संगलीला है

आज मेरे पास कई प्रश्न आये हैं। मैं इसका उत्तर देने की यथामति यथासमय कोशिश करूंगा। दो बातें व्यक्तिगत रूप में पूछी गई है, ''बापू, आपको यदि जिज्ञासावश पूछा जाय कि 'रामचरित मानस' तो है ही पर 'श्रीमद्भागवत' में से पांच श्लोक बताने हो जो आपको अत्यंत प्रिय है।'' यहां के एक विश्वविद्यालय के अध्यापकसाहब ने ये पूछा है। 'श्रीमद्भागवतजी' मेरा बहुत प्यारा सद्ग्रंथ है। यद्यपि मैं 'भागवत' का वक्ता नहीं हूं; छात्र भी नहीं हूं। श्रोता जरूर हूं; साल में तीन बार पूरा 'भागवत' का पारायण करता हूं। ये मेरा काम है। सालों से मैंने 'गोपीगीत' पर कुछ बातें की; ये तो केवल मैंने गाया था। 'गोपीगीत' का मुझे कुछ अभ्यास या ऐसा कुछ नहीं है। पर 'भागवत' मुझे बहुत प्यारा सद्ग्रंथ लगता है। 'मानस' तो मेरे लिए क्या नहीं है? पर आपको भी निवेदन करूं कि यथासमय 'भागवत' का भी दर्शन करें। जिसको विश्व के समस्त ज्ञान को साररूप में पाना है तो 'भागवत' का स्मरण करे। जगतभर के भावों का कोई निष्कर्ष प्राप्त करना है तो 'भागवतजी' का दर्शन करें। विवेक, वैराग्य न जाने जीवन के पहलूंओं को हम छू सकते हैं। एक अद्भुत सद्ग्रंथ संहिता है। और आप सब जानते हैं, 'श्रीमद्भागवतजी' को परमहंसों की संहिता माना गया है। 'रामचरित मानस' के तो परमहंस श्रोता है। 'संहिता' के आगे कोई शब्द हो तो लगाने पड़े 'मानस' के लिए पर ये मेरे पास है ही नहीं। कितना प्यारा शब्द है 'संहिता!' शब्दब्रह्म है संहिता। वेद की संहिता, चारों वेदों की संहिता, वैसे ही ये परमहंसों की संहिता है। इसके प्रत्येक मंत्र पापनाशक है, शांतिदायक है। अब आप मुझे पूछते हैं प्रोफेसरसाहब कि आपको सबसे प्रिय श्लोक है वो मुझे बतायें। किसको चुनूं और किसको छोडूं? लेकिन आपकी जिज्ञासा है तो मैं बताउंगा भी। इसका मतलब ओर श्लोक की कम महिमा है ऐसा नहीं है। 'श्रीमद्भागवतजी' के जो महापुरुष है इससे आप पूछेंगे तो आपको ज्यादा जानकारी प्राप्त हो सकती है पर आप मुझे पूछ रहे हैं तो पांच बस्तु मैं कहूं आपको। और मेरे कदमों पर मैंने कह दिया इसलिए नहीं आप उस पर सोचियेगा। खासकर तो आप प्रोफेसरसाहब सोचे, जिसका यह प्रश्न है।

यं प्रवजन्तमनुपेतमपेतकृत्यं
द्वैपायनो विरहकातर आजुहाव।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदु-
स्तं सर्वभूत हृदयं मुनिमानतोऽस्मि।।

शुकदेवजी महाराज का स्मरण किया गया है इस श्लोक में। व्यक्तिगत रूप में मेरा बहुत प्यारा श्लोक है। मैं इस श्लोक से बहुत महोब्बत करता हूं। बहुत कुछ कहने को जी करता है आपकी जिज्ञासा पर लेकिन चलें, आगे बढ़ें। दूसरा 'श्रीमद् भागवतजी' का एक श्लोक उठाउं तो मुझे ये बहुत प्रिय है-

तव कथामृतं तप्तजीवनम्।

ये किसको प्रिय नहीं हो? अभागा है जिसको ये मंत्र प्रिय न हो! और हम जैसों आप में जो कथाजगत के रोगी है, एक दर्द लेकर बैठे हैं, मेरा तो मुझे तो कोई बहाना चाहिए बोलने का! हे हरि, हे गोविंद, तेरी कथा ही अमृत है और हम जैसों के जीवन के तप्त उत्पातों का एकमात्र शातादाता है-

कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रामदाततं...

कल मैं बोल रहा था कि ध्यानजनित सुख, नामजनितसुख। एक सुख है श्रवणजनित। है ना? आप कथा सुनते हैं। यदि आपकी कथा में प्रीति है, रुचि है, तो आपको श्रवणजनित याने श्रवण से पैदा हुआ सुख मिलता है। ये तो सिद्ध बात है।

श्रवणमंगलं श्रीमदाततं।
भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जना:।

मेरी दृष्टि में ये मोरारिबापू का पंचामृत-भागवतामृत है। तीसरा मंत्र-

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णश:
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम्।।

श्री उद्धवजी ने ये श्लोक का गायन किया है। मैं इन व्रजांगनाओं को-व्रजस्त्रीओं को वंदन कर रहा हूं। इनकी पादरेणु, इनकी चरणरज और ये वो जो हरिगीत गाती है, क्रिष्नगीत गाती है, गोविंद का गीत गाती है तो 'पुनाति भुवनत्रयम्'; 'सकल लोक जग पावनी गंगा।' तो स्वाभाविक हम कथा के जगत में हैं तो श्रवणम् भी अच्छा लगता है। इसलिए 'तव कथामृतम्' और गायन भी अच्छा लगता है इसलिए 'यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम्।।' आप माने या न माने परंतु भगवद्कथा के मंगलमयी मंत्रों को गाने से एक अर्थ में पर्यावरण शुद्धि होती है, यस। सरकार ने स्वच्छता अभियान शुरू किया है ये तो बहुत आवकारदायक है। लेकिन व्यासपीठों ने तो आदिकाल से स्वच्छता अभियान शुरू करके रखा है। जो कलियुग के मैल और आदमी के मन के मैल को धोने का एक स्वच्छता अभियान है। तो आपने पूछा है पांच श्लोक तो आपको गुलदस्ता बनाकर देते हैं। बाकी कोई भी मंत्र, 'भागवत' 'भागवत' है!

सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं
सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं
सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्ना:।।

सत्य के बारे में व्यास भगवान ने परमहंस शुकदेवजी को जो पूर्णांक में प्रस्तुति की है। सत्य के समान कोई व्रत नहीं। सत्य के समान कोई परम नहीं। त्रिकाल में जिसका कोई बाधक नहीं; वो त्रिसत्यम्। 'सत्यस्य योनिं' 'भागवत'कार कहते हैं, सत्य की योनि सत्य है। सत्य से सत्य प्रगट होता है। सत्य गर्भस्थ माँ की योनि से सत्यशिशु प्रगट होता है। 'सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये।' निहित में भी सत्य निमित्त है। झूठ में भी सत्य निमित्त है। आप कभी अपने झूठ का स्वीकार करो कि मैंने ये झूठ बोला था तो ये सत्य नहीं है क्या? मैं कह दूं कि मैं उस समय झूठ बोला था तो ये सत्य नहीं है क्या? इतनी विशद सटीक नि:शंक सार्वभौम व्याख्या मिलना मुश्किल है, जो 'भागवत' दे सकती है।

भगवान शंकर के नेत्रों के बारे में कहा गया, 'बहभीर बहभीर नयनम्' किसी के नेत्र चांद, सुरज्ञ बनाये गये शिव आदि के कई के 'मानस' में दो-दो नेत्रों की चर्चा आयी 'ग्यान विराग नयन पुरारी।' दूसरी व्याख्या आयी, 'मोरें भरतु रामु दुइ आंखी।' दशरथजी कहते हैं, मेरे राम-भरत मेरी आंख है। 'भागवत' क्या कहते हैं? 'ऋत सत्यनेत्रम्' सत्य की दो आंख है? ऋत और सत्य दो सत्य देवता की दो आंखें हैं। सत्य ही आत्मा है। इस सत्य की शरण में प्रपन्न है। मेरा बहुत प्यारा श्लोक है। तो ये चौथा मंत्र। और पांचवां-

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतकलेशनाशाय गोविन्दाय नमो नम:।।

ये 'भागवत' का मंत्र है; बहुत प्यारा मंत्र है, 'प्रणत क्लेषनाशाय' नाश करनार कृष्ण है, शर्त इतनी है, हम प्रणत हो। हम तो गलत है, मतलब हम गणतरीवाले हैं! प्रणत कहां है?

एक दूसरी बात भी ले लूं। जो व्यक्तिगत तौर से आयी तो उसको उठा लेता हूं। विनोबाजी के किसी सर्वोदयी साधक ने पूछा है, 'बापू, विनोबाजी ने ऐसा कहा कि कोई मत नहीं है। मेरे पास विचार है। विनोबाजी के पास कोई मत नहीं कि मेरा ये मत है, मेरा ये मत है, मेरे पास विचार है। उसके बारे में कुछ कहे, प्लीज़। और फिर आपको चालीस साल से सुन रहे हैं। इसलिए आपके पास मत है, विचार है, क्या है?' अरे यार! क्यों मुझे परेशान कर रहे हो! पहली बात, एक तो महामुनि विनोबाजी की लाईन में मुझे खड़ा न करो। विनोबाजी के बारे में मेरी अपार आस्था है। मेरी आंखों से देखा एक ऋषि है। कुछ पलों का मुझे संग भी मिला है। उसके साथ मंच में शेर करने का अवसर मिला है और उनको मौन था तभी उनकी उपस्थिति में बैठने का। वो ऋषि है मेरी दृष्टि में, ये महामुनि है। विनोबाजी एक ऋषि चेतना है।

मेरा मत मांगते हैं तो पहले तो मैं ये खुलासा करूं कि ये तो बहुत ऊंचाई है कि मैं कुछ महापुरुषों के विचारों से मेरे हृदय की सहमती से सहमत हो जाता हूं। ऐसे कुछ है जिसमें विनोबाजी है, शरणानंदजी है। हां, स्वामी

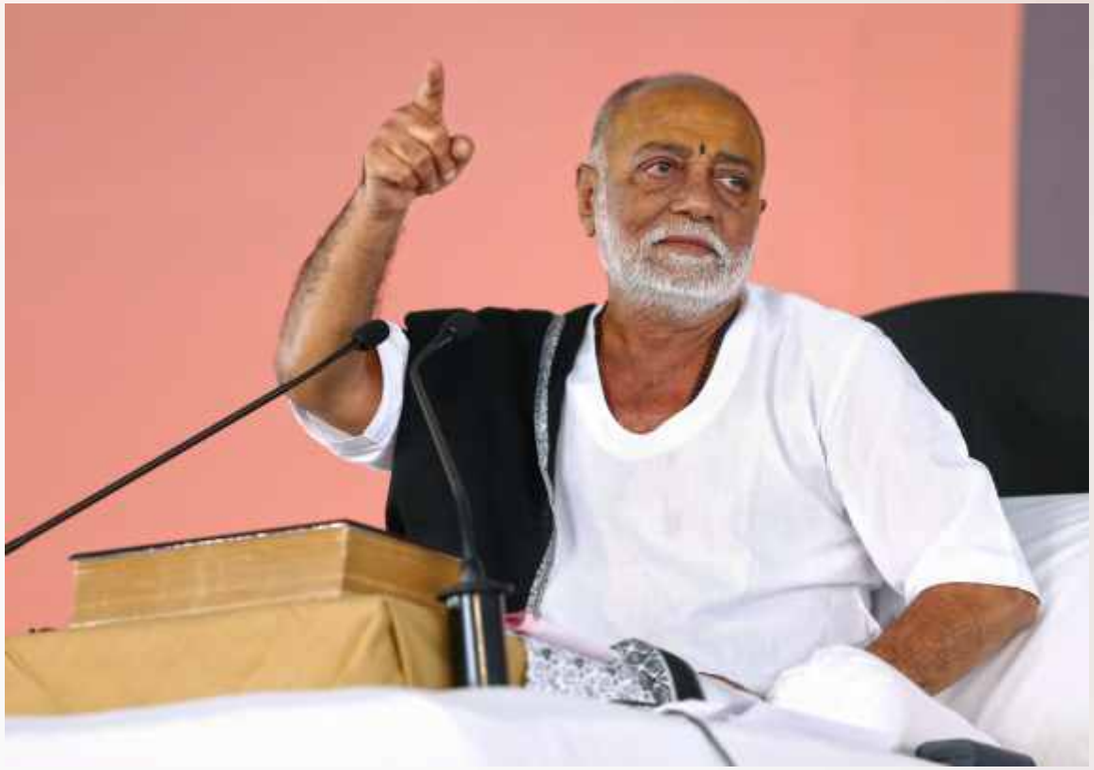

रामसुखदासजी है। कभी उसकी जो वर्णाश्रमी परंपरा का जो आग्रह है उससे मेरा मेल नहीं बैठता था। वो भी जानते थे, लेकिन अद्भुत महापुरुष! मैं आपके सामने ओशो की बात भी पेश करता रहता हूं लेकिन ओशो के सभी विचारों के साथ मेरी सहमती न हो या मैं नहीं समझ सका हूं! इतने बड़े लोग है, सब कहां समझ सकें! गांधीबापू के सत्य और अहिंसा के विचारों के बारे में कहना ही क्या? उसको तो सभी को कुबूल करना पड़ेगा नि:शंक। कृष्णमूर्ति को मैं भी पूरा नहीं समझ पा रहा हूं। बहुत कठिन और जटिल महापुरुष है। कई महापुरुष ऐसे होते कि जिसके विचारों से आनंद आता है। विनोबाजी उसमें से एक है। उसकी लाईन में कहां बैठे? उसके पांव के पास बैठा था। वो अपने बेड पर बैठे थे। हम नीचे बैठे थे। इतना ही दूर दो फिट दूर बैठे थे। वो उपर बैठे थे, हम नीचे बैठे थे। ये मुझे आज भी पता है कि ये उपर है और मैं नीचे हूं। ये भान रहे ये जरूरी है। लेकिन जो विनोबाजी का दर्शन है वो बड़ा अद्भुत है! इसका 'गीता' प्रवचन विश्व की एक संपदा है। कृष्ण जेल में जन्मा और विनोबा की 'गीता' भी जेल में जन्मी! दोनों जेल में प्रगट हुए! कृष्ण जेल में मथुरा में और विनोबाजी ने ये गीताप्रवचन दिये हैं वो जेल में दिये हैं। अद्भुत है बंधन में मुक्ति का संदेश! जेल में मोक्ष का निवेदन सुंदर है। कई लोगों ने अपने गीताभाष्य विनोबाजी से चुरा-चुराकर लिखे हैं अपने नाम से चालाक लोगों ने! उसकी चतुराई को नमन! मेरी समझ में नहीं आता कि कोई महापुरुष का विचार हमको अच्छा लगता है और हम उसको समाज में पेश करने से लोगों को भी अच्छा लगता है तो उसका नाम लेने से लोगों को आपत्ति क्या है? लोग नाम नहीं लेते हैं! कंजूस है, लोग कृपण है! तो विनोबाजी की महिमा ओर है। सदी का सद्भाग्य कि ऐसे महापुरुष हमको मिले। सर्वोदयी साधकों को विनोबाजी में श्रद्धा होनी ही चाहिए और है भी। लेकिन मेरी आस्था कुछ गज़ब है, यस! कल हमारे वो पांडेजी आये थे ना, जिसने गज़ल सुनायी थी-

जो सजर सूख गया हरा हो कैसे?
जिसको मैं जानता ही नहीं वो खुदा हो कैसे?

जो पेड़ सूख गया है वो हरा कैसे हो सकता है? इस्लाम धर्मकी कथा है उस शे'र के पीछे। फिर मैंने उसको कहा कि एक पेड़ सूख गया था। पैगम्बरसाहब को पूछा कि आप यदि पैगम्बर है तो इस सुखे हुए पेड़ को हरा कर दो। तो पैगम्बरसाहब ने पेड़ को हरा हो जा ऐसा कहा, तो पेड़ हरा हो गया! ये पूरा जुमाला है इस मत्ला के पीछे। विनोबाजी कहते थे कि मेरे पास कोई मत नहीं, विचार है। और मत तो कभी-कभी जड़ होता है। ये बुद्धपुरुष के विचार की बातें है। मतावलंबी आदमी नहीं होते? जड़, छोड़ते ही नहीं! प्रेक्टिकल होते ही नहीं! आदमी को व्यवहारु होना चाहिए देशकाल के अनुसार। गांधीबापू भी कहते थे कि मैंने आज जो विचार दिया वो कल मैं बदल सकता हूं और 'हरिजनबंधु' मैं छाप दूंगा कि मेरे आज के विचार बिलग है। विनोबाजी भी कहते हैं कि मैं भरोसेलायक आदमी नहीं हूं। मैं क्षण-क्षण बदल रहा हूं। मतावलंबी बदलता नहीं। सदियों से पीटीपिटाई बात करते हैं। विचार तो रोज नये ताजे हो। इसलिए महामुनि ने ठीक कहा, मेरा मत नहीं कोई, मेरा विचार है। अच्छी बात है।

मुझे उसकी पंक्ति में प्लीज़, मत बिठाओ। इसलिए तुम्हारे सामने इतना बोलना पड़ा कि कोई गैरसमझ आपके मन में न आ जाय। मैं आपसे बहुत विनम्रता से निवेदन करना चाहता हूं कि मेरे पास भी कोई मत नहीं है। मैं मतावलंबी हूं ही नहीं। और मेरे पास विचार भी कहां यार! 'विचारक' तो बहुत ऊंचा शब्द है। विचार-विचार हमारे पास नहीं है। ये तो भाषा की पाबंदी के कारण कहता हूं कि ये मेरे विचार है, ये मेरी जिम्मेवारी है। अपने विचार की क्या महत्ता? ये तो बुद्धपुरुष लोग, विचारक लोग, चिंतक लोग पेश कर सकते हैं। आपने पूछा है तो बहुत विनम्रता के साथ कहना चाहूंगा कि न मत है, न इतने कोई विचार है। कुछ है वो भी अल्लाह करे, निकल जाये। लेकिन ये व्यक्तिगत जिज्ञासा का उत्तर है, व्यक्तिगत रूप में यदि कोई विचार है भी तो विवेकविचार है, बस। 'कहहुं बिवेक बिचारी।' कोई भी विचार पेश किया जाय तो विचार के पीछे गुरुकृपा से विवेक है। और थोड़ा रेशनालिस्ट भी; मैं कोई बातें नहीं मानता तो आपको लगे कि बापू नास्तिक लगते हैं! लेकिन विवेकबुद्धि रखता हूं। आदमी को चाहिए विवेकविचार, विवेकबुद्धि, विवेकवचन।

आज मेरे पास एक प्रश्न ये भी है कि 'बापू, भिक्षा और माधुकरी में क्या अंतर है?' भिक्षा और माधुकरी में छोटा-सा अंतर है। भिक्षा घर-घर लेने जाना पड़ता है। भिक्षाटन, अटन लेने जाना पड़ता है। लेकिन कभी-कभी भिक्षा एक घर से भी हो जाती है कि कोई कहे कि एक घर; वर्ना पांच घर जाने की बात है। कोई बार एक घर से कोई कहे देश-काल के अनुसार बाबा, ये ले लो तो दूसरे घर जाने की ही आवश्यकता न पड़े। या कोई कहे, यहां बैठकर पालो भिक्षा। मैं भी भोजन करने का समय हो गया ऐसा कम बोलता हूं। भोजन ही बोलना चाहिए संसारी जो ठहरे लेकिन मैं ये शब्द यूज़ करता हूं कि भिक्षा कर लें अब। क्योंकि पवित्र शब्द यूज़ करने से भी फायदा होता है। भोजन कर लें ऐसा मैं कम बोलता हूं। तो भिक्षा एक जगह हो सकती है। माधुकरी कभी एक जगह नहीं होती। कभी भी नहीं। एक मधुकर, एक भंवरा एक फूल पर बैठता है फिर वहां से कुछ ले कर वो दूसरे फूल पर बैठता है। वहां से कुछ लेता है फिर कुछ फूलों से चुनकर मधु इकठ्ठा करता है। उसको माधुकरी कहते हैं। मेरा क्या है? कभी विनोबाजी से माधुकरी कर ली; कभी गांधीजी से कर ली; कभी 'भागवत' से कर ली। ऐसा-ऐसा है। तो गंगासती कहती हैं-

वचन विवेकी जे नरनारी पानबाई!
तेने ब्रह्मादिक लागे पाय;
सद्गुरुना वचनना थाव अधिकारी,
मेली द्यो अंतरनुं मान.

विवेकयुक्त यथार्थवचन ने जिसके संकेत समझ लिया, हमारी गंगासती कहती है, उसको जगत में कुछ करने का शेष नहीं रहा। अद्भुत बात कही है! हम तो जीव है। कभी-कभी चुक भी जाये लेकिन जिसने उसका निर्वहण किया। विवेकबुद्धि, जो रेशनालिजम का एक बहुत बड़ा सिद्धांत माना गया है विवेकबुद्धि। स्वागत करना चाहिए।

तो विवेकविचार, विवेकबुद्धि और विवेकवचन और विवेकदर्शन, बस ये बात है। अवलोकन कहता है साधु का कि 'रामचरित मानस' को तीन लीलाओं में विभाजित की जा सकती है। स्फटिकशिला में बैठे राघवेन्द्र जानकीजी

का शृंगार करते हैं। जिसकी बातें हमने आपके सामने रख दी। जिसमें जयंत विक्षेप डालने आता है। ये 'अरण्यकांड' की लीला को हम नाम दे सकते हैं शृंगारलीला। ये शृंगारलीला। भले छोटी-सी है, शृंगारलीला है। शृंगारलीला मनुष्यों को अच्छी लगती है ज्यादा स्थूलरूप में भी, और जीव विषयी होता है इस कारण भी वो मनुष्य को अच्छी लगती है। तो शृंगारलीला हम जैसे जीवों को, हम जैसे संसारियों को अच्छी लगती है। दूसरी लीला है 'निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाई पन कीन्ह।' जिसको व्यासपीठ नाम देना चाहेगी संहारलीला। एक बात मैं और आपको स्पष्ट कर दूं कि वाल्मीकि का 'अरण्यकांड' और तुलसी का 'अरण्यकांड' करीब-करीब मिलता-जुलता है। कुछ अंतर जरूर है। और ये अंतर आवश्यक भी है। बहुत बड़ा वरदानी काम किया गोस्वामीजी ने कि कुछ प्रसंगों में वो वाल्मीकिजी को प्रणाम करके कुछ हटके बात करते हैं। अथवा तो उस समय जो शब्दप्रयोग वाल्मीकिजी ने किये हैं अथवा तो आज का जगत नहीं समझ पायेंगे तो थोड़ा शब्द बदल दिया क्योंकि एक शब्द बदलने पूरी वस्तु बदल जाती है साहब! पर जहां जरूरी था, तुलसी ने भाव बदले हैं, परिप्रेक्ष्य बदला है। ये साधुकार्य किया है। तुलसी ने बड़ा उपकार किया है। और तुलसी के कथनों के बाद आज के संदर्भो में भी 'मानस' के प्रसंगों के नये-नये अवलोकन आते हैं तो अच्छा लगता है कि आज के संदर्भो ये भी होना चाहिए। तुलसी ने स्वयं मारग दिया है कि देखो, मैं वाल्मीकिजी की बातों से थोड़ा हटके जा रहा हूं। तो वाल्मीकि और तुलसी का 'अरण्यकांड' के करीब-करीब सभी प्रसंग क्रमशः मिलते हैं। लेकिन अंतर भी बहुत है। वो तुलसी का वरदान है।

तो शृंगारलीला से मनुष्य राजी हो जाता है; उसको अच्छा लगता है। संहारलीला से देवलोक खुश हो गये कि राक्षस मरे तो देवों के भोग सलामत रहे। और तुलसी कहते हैं, राम जहां-जहां गये, चाहे शरभंग के पास, चाहे सुतीक्ष्ण के पास, चाहे अत्रि के पास, चाहे कुंभज के पास, आखिर में जाये तो सब मुनिवृंद के साथ संग-संग चलते हैं। कई मुनियों के साथ प्रभु का इस तरह मिलना और आखिर में नारदमुनि से बात करना; ये तीसरा अध्याय है 'अरण्यकांड' का उसको मेरी व्यासपीठ कहेगी सत्संगलीला। शृंगारलीला नर को प्रिय। संहारलीला देवता को प्रिय और सत्संगलीला मुनियों को प्रिय। इसलिए मेरे तुलसी ने सत्संगलीला को आधार लेकर लिखा है-

करत जे बन सुर नर मुनि भावन।
अब प्रभु चरित सुनहु अतिपवान।
पुर नर भरत प्रीति मैं गाई।
मति अनुरूप अनूप सुहाई।

'अरण्यकांड' से ही एक ओर जिज्ञासा, 'बापू, क्या रावण के हाथ तीर्थ है?' 'अरण्यकांड' का जटायुवाला प्रसंग। जब जानकी का अपहरण करके रावण जा रहा है और जानकी विलपती है और ये आरतगिरा सुनकर गीध दौड़ा रावण को पकड़ने के लिए। हमला किया तो रावण ने देखा कि ये मैनाक है, खगपति है; मेरे बल को जाननेवाला ये साहस कर रहा है? और उसके मालिक के साथ होना चाहिए, अकेला नहीं होना चाहिए। पर जैसे जटायु निकट आया तो रावण ने कहा, ये तो बूढ़ा जटायु है! कोई डरने की जरूरत नहीं। और रावण ने कहा, मेरे हाथ तीर्थ है। तो ये तीर्थों में देहत्यागने-प्राणत्यागने आया है।

तो ये प्रश्नकर्ता ने अच्छा प्रश्न किया कि क्या रावण के हाथ तीर्थ है? रावण क्या, दुनिया में सभी के हाथ तीर्थ है। दो हाथवालें दो हाथ भी तीर्थ है। तो उसको बीस हाथ थे ये बीसों तीर्थ थे लेकिन हम तीर्थों को तीर्थ कहां रहने देते हैं! हाथ तो मौलिकरूप में सबके तीर्थ है लेकिन तीर्थ को तीर्थ हम नहीं रहते देते यार! वर्ना गंगा इतनी गंदी नहीं करते। गंगा के तट पर बसे जितने-जितने नगर है। और जो-जो फेक्टरीओं से गंदा पानी आता है! हम तीर्थों को कहां तीर्थ रहने देते है! नदियों को तीर्थ कहा है साहब! हर तीर्थ में गंदगी दिखती है। देखो, हर तीर्थ अंदर से पवित्र है। हाथ तीर्थ है, लेकिन हाथों में गंदगी है। रावण के हाथ तीर्थ है पर हाथों में चुराई हुई चीज है। हाथ पवित्र है लेकिन हाथ चोरी करे तो हथकडी! मेरे श्रावक भाई-बहन, चाहें असुर हो, ऋषि हो, नारी हो, नर हो, सबके हाथ तीर्थ है। मैं नहीं कहता, भगवान वेद कहते हैं, 'अयं मे हस्तो भगवान।' मेरे हाथ भगवान है। इसमें राम और रावण का भेद नहीं हो सकता। जिसके पास हाथ वो भगवान है। तो हाथ पवित्र है; रावण के भी पवित्र है, अवश्य। लेकिन ये ही हाथ समर्पण के बदले अपहरण करे तो अपवित्र हो जाते हैं; तीर्थ पवित्र है लेकिन हम गंदगी करे तो! मंदिर

पवित्र है लेकिन मंदिर में इधर-उधर कचरा डाले तो! प्रत्येक व्यक्ति का घर पवित्र है लेकिन इधर-उधर आप गंदगी करो तो! हम खुद पवित्र को अशुद्ध कर रहे हैं। रावण के हाथ जरूर तीर्थ है, लेकिन रावण ने इन बीस भुजाओं को गंदे कर दिये, लूंटा, छीना, अपहरण किया! हाथ पवित्र है। एक बाप अपनी कन्या को एक दुल्हे के पवित्र हाथ में देता है और वो दुल्हा इस हाथ को गंदा कर दे तो? सबके हाथ पवित्र है। बस, अपने विवेक से इस कलिकाल में जितना पवित्र बनाने की कोशिश कर सकते हैं, करे।

''दुनिया में तीन बड़ी शक्तियां काम कर रही है। बापू, एक आत्मज्ञान शक्ति। दूसरी विज्ञानशक्ति। और तीसरी साहित्यशक्ति। दुनिया पर इन्हीं शक्तियों का प्रभाव है। लोगों को चित्त पर इनमें से किस शक्ति का ज्यादा से ज्यादा प्रभाव पड़ता है और हमें कौन-सी शक्ति अपनानी चाहिए?'' सीधी बात है, सबसे प्रभावितशक्ति है व्यक्ति की आत्मशक्ति। आत्मशक्ति के पास विज्ञान की शक्ति भी नहीं पहुंच पाती और साहित्यशक्ति भी नहीं पहुंच पाती। इसका समाधान करते हुए आदमी को आत्मशक्ति का ज्यादा से ज्यादा उपयोग करना चाहिए। हमारे नरसिंह मेहता ने गुजराती में कहा है-

ज्यां लगी आत्मा तत्त्व चिन्यो नहीं,
त्यां लगी साधना सर्व जूठी।

आख़िरी लक्ष्य तो आत्मउपलब्धि है। अणुबोंब से आत्मबोंब की शक्ति ज्यादा है। आपको और हमको पता नहीं साहब! इस दुनिया में जितने आण्विक शस्त्र इतने आ गये कि कितनी भी सुरक्षा करो तो फिर भी कहीं से एक ऐसा शस्त्र फेंक दे, नासमझी कर दे तो हजारों की हत्या हो सकती है। ऐसी आण्विक शक्तियां सबके पास है। लेकिन किसी न किसी भजनानंदी, परमचेतनाओं कहीं भी बैठी हो उनकी चेतना के कारण ये रुक जाता है, ऐसा मेरा पूरा भरोसा है साहब! लेकिन हमें पता नहीं। हम ऐसे लोगों को पहचानते नहीं जो कोई बैठे हैं आत्मशक्ति के बादशाह। वो बैठे हैं उसके द्वारा कुछ नियंत्रण हो रहा है। जिसकी आत्मशक्ति ज्यादा वो इतना प्रभावक होता है। सही संचालन पूरे विश्व का तो कोई बुद्धपुरुष लोग ही करते हैं।

एक ओर श्रोता की जिज्ञासा है, 'बापू, आपने बहुत पहले कहा था कि नव दिन ईश्वर साक्षात्कार के लिए पर्याप्त है। इन नव दिन में क्या करना चाहिए?' नव दिन तो मैंने ऐसे ही कह दिये होंगे। साक्षात्कार के लिए कोई भी लम्हा काम आ जाता है। गुरुनानक देव अन्न की मंडी पर बैठे-बैठे गिनते थे एक, दो, तीन, चार, पांच, छ, सात, आठ, नव, दस, ग्यारह, बारह, तेरह। एक मिनट भी नहीं हुई और तेरह गिने ही साक्षात्कार हो गया! तथागत बुद्ध की परंपरा में कई भिखु ने चांद को कुए में देखा और कुए में चांद की प्रतिछाया देखकर आत्म उपलब्धि हो चुकी है! कई ने घड़े से पानी टपकते हुए देखकर कुंडलिनी जागृत हो गई ऐसा महसूस किया है। लम्हे में होता है। और न हो तो 'जनम-जनम मुनि जतन कराई।' ये भी है कि बहुत जन्मों के बाद भी उपलब्धि न भी हो। हो सकता है। लेकिन हो तो क्षण में।

'जीवन में निरंतर मिलती असफलताओं में से जब आपका विश्वास हिलने लगे तो बापू, क्या करना चाहिए?' बार-बार निष्फलता मिले किसी भी कार्य में तो विश्वास हिलने लगता है। स्वाभाविक है। हम जीव है। हो सकता है। तो क्या करना चाहिए? मेरा जवाब बिलकुल तर्कयुक्त नहीं है पर श्रद्धायुक्त है। मेरा जवाब है, ओर विश्वास करिये। अहल्या ने किया। क्या एक बार राम के चरणों में प्रणाम काफी नहीं था? ओर विश्वास रखिये। मैं तो विश्वास क्षेत्र का आदमी रहा। इसलिए मेरा तो यही जवाब है। प्रेक्टिकल न भी लगे तो सोरी! लेकिन मेरा तो जो भी कदम है वो तेरी राह में, शंकर की राह में। और शंकर है विश्वास। पकड़े रखो! आगे 'आप बता दीजिये, हमें क्या करना चाहिए? पूजा या नौकरी या कुछ नहीं?' कुछ नहीं, ऐसा तो मैं नहीं कहूं। मैं इतना ही कहूं कि नौकरी पूजा भाव से करो। नौकरी करो पूजाभाव से। मेरा प्रत्येक कर्म तेरी पूजा है। शंकराचार्य कहते हैं, मेरी निद्रा समाधि है। मेरे विषयभोग भी तेरी पूजा है। मैं चलता हूं तो तेरी ही परिक्रमा है। जो मैं करता हूं उसके केन्द्र में तू है। आप नौकरी करो या जो-जो अपना कार्यक्षेत्र हो उसमें सेवाभाव से करो कि मैं इस क्षेत्र में पूजा कर रहा हूं, तो गलतियां कम होगी और गलती करने का मन भी नहीं होगा।

बाबा शिव को गनों ने शृंगार किया। जटा-मुकुट बनाया। मुकुट मौड पर सर्प को बिठा दिया। शरीर में भस्म का लेपन किया। और नंदी की सवारी। और जगत के सभी भूतप्रेत आये हैं कि बाबा भूतनाथ ब्याहने जाते हैं। कहते हैं कि सब जगह स्मशान होते हैं और हमने कभी देखा नहीं, लोग कहते हैं, स्मशान में भूत हो सकते हैं। स्मशान में जाने की जरूरत क्या है? भूत घर-घर में है! अकारण जहां-जहां संघर्ष ये भूत-प्रेत नहीं तो ओर क्या है साहब! मैना की अगवानी में सब सखियां शिव का परिछन आरती करने गई ही और भगवान शंकर के भाल में दुज का चांद देखते ही महाराणी मैना के हाथ से आरती की थाली गिर गई! सखियां मैना को लेकर निजमंदिर में गई। इतने में सप्तर्षि, नारद और हिमाचल को खबर मिली कि मैना बेहोश है। सब गये वहां! नारदजी सबको समझा रहे हैं कि सुनो मैना, जिसको तू अपनी पुत्री समझती है, वास्तव में वो तेरी बेटी नहीं है। तू और पूरी दुनिया उनकी बेटी है। मतलब ये जगदंबा है, पराम्बा है, ये विश्ववंद्या है। सबकी भ्रांति को नारद जैसे सद्गुरु ने निवारा। नारद के वचन के बाद सब पार्वती के चरणों में वंदन करने लगे। और नारद ने कहा, द्वार पर जिसका तुम सन्मान न कर पायी मैना, वो शिव है। व्यासपीठ का अवलोकन कायम हुआ है कि हमारे द्वार पर शिवतत्त्व होता है, हमारे घर में ही शक्ति होती है लेकिन नारद जैसा कोई बुद्धपुरुष हमारे पास आकर हमें समझाये ना तब तक परिचय नहीं होता कि कौन शिव है, कौन शक्ति है? इसलिए जरूर पड़ती है कोई बुद्धपुरुष की।

नूतन आदर प्रकट हुआ। विवाहमंडप के द्वार पर दुल्हेमहाराज पधारे हैं। लोक और वेदविधि से दोनों प्रकार का सन्मान हुआ है। देवताओं को सबको आदर देते हुए मेरे भोलेनाथ स्वर्णसिंहासन पर विराजमान हुए हैं। आठ सखियां उमा को दुल्हन के रूप में सजाकर विवाहमंडप में लाये हैं। देवताओं ने पुष्पवृष्टि की। हर-गिरिजा का ब्याह संपन्न हुआ हैं। पार्वती की बिदाई की बेला आई और माता-पिता और ये भोलेभाले पहाड़ीप्रदेश के लोग अपनी कन्या उमा को बिदा देते समय गद्गद् हुए! रो पड़े! ढीले हो गये! और पार्वती अपनी डोली में विराजमान हुई पतिगृह के लिए। और मैं हरवक्त कहता रहा कि दुनिया में खासकर भारत में तो कोई ऐसा बाप नहीं जो अपनी बेटी को बिदा देते समय जरा ढीला न हुआ हो। चाहे नगाधिराज हिमालय हो; चाहे वो जानकी वैदेही का पिता जनक हो; चाहे कालिदास की शकुंतला का पालक पिता महर्षि कण्व हो। आज शैलराज की शैलजा पतिगृह जा रही है। उमा ने डोली से सबको प्रणाम किया। महादेव के संग चली महादेवी। हिमालय पिघला।

केवा शुकनमां पर्वते आपी हशे विदाय।
निज घरथी नीकळीने नदी पाछी वळी नथी।

जलन मातरीसाहब का एक शे'र है कि कैसे पर्वत ने नदी को बिदा दी होगी कि एक नदी पर्वत से निकल जाती है तो जिंदगीभर वो नदी पर्वत के पास आ नहीं सकती, सिंधु में समा जाती है। आज बेटी जा रही है। सब चुप हो गये है। सन्नाटा हो गया।

यहां भगवान शिव उमा को लेकर सबके साथ कैलास पहुंचे हैं। सभी देवलोक भगवान महादेव और भगवती महादेवी की स्तुति करके अपने-अपने लोक की ओर प्रस्थान कर गये। मेरे 'मानस'कार कहते हैं, शिव और पार्वती का नितनूतन विहार चला। सुखजुत काल बितता है। पार्वती ने पुत्र को जन्म दिया। षड़मुख कार्तिकेय का जन्म हुआ है, जिसको तुलसीदासजी आध्यात्मिक अर्थ में पुरुषार्थ कहते हैं। उस कार्तिकेय के षड़मुखी पुरुषार्थ के कारण ताडकासुर नामक आसुरी शक्ति का निर्वाण हुआ और देवगण भय से मुक्त हुए। ऐसा सुंदर शिवचरित्र याज्ञवल्क्य ने गाया। फिर शिव कैलास के सदाबहार वटवृक्ष के नीचे सहजासन में बैठते हैं। पार्वती सामने जाकर विराजती है वामांग और भवानी शिवजी से जिज्ञासा करती है रामकथा के बारे में। और फिर कैलास से महादेव रामकथा शुरू करते हैं। इसीमें रामजन्म की कथा आयेगी लेकिन कल आयेगी।

स्फटिकशिला में बैठे राघवेन्द्र जानकीजी का शृंगार करते हैं। ये 'अरण्यकांड' की लीला को हम नाम दे सकते हैं शृंगारलीला। दूसरी लीला है 'निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाई पन कीन्ह।' जिसको व्यासपीठ नाम देना चाहेगी संहारलीला। शृंगारलीला से मनुष्य राजी हो जाता है। संहारलीला से देवलोक खुश हो गये कि राक्षस मरे तो देवों के भोग सलामत रहे। और राम जहां-जहां गये, चाहे शरभंग के पास, चाहे सुतीक्ष्ण के पास, चाहे अत्रि के पास, चाहे कुंभज के पास; तो कई मुनियों के साथ प्रभु का इस तरह मिलना और आखिर में नारदमुनि से बात करना, ये तीसरा अध्याय है 'अरण्यकांड' का उसको मेरी व्यासपीठ कहेगी सत्संगलीला। शृंगारलीला नर को प्रिय। संहारलीला देवता को प्रिय और सत्संगलीला मुनियों को प्रिय।

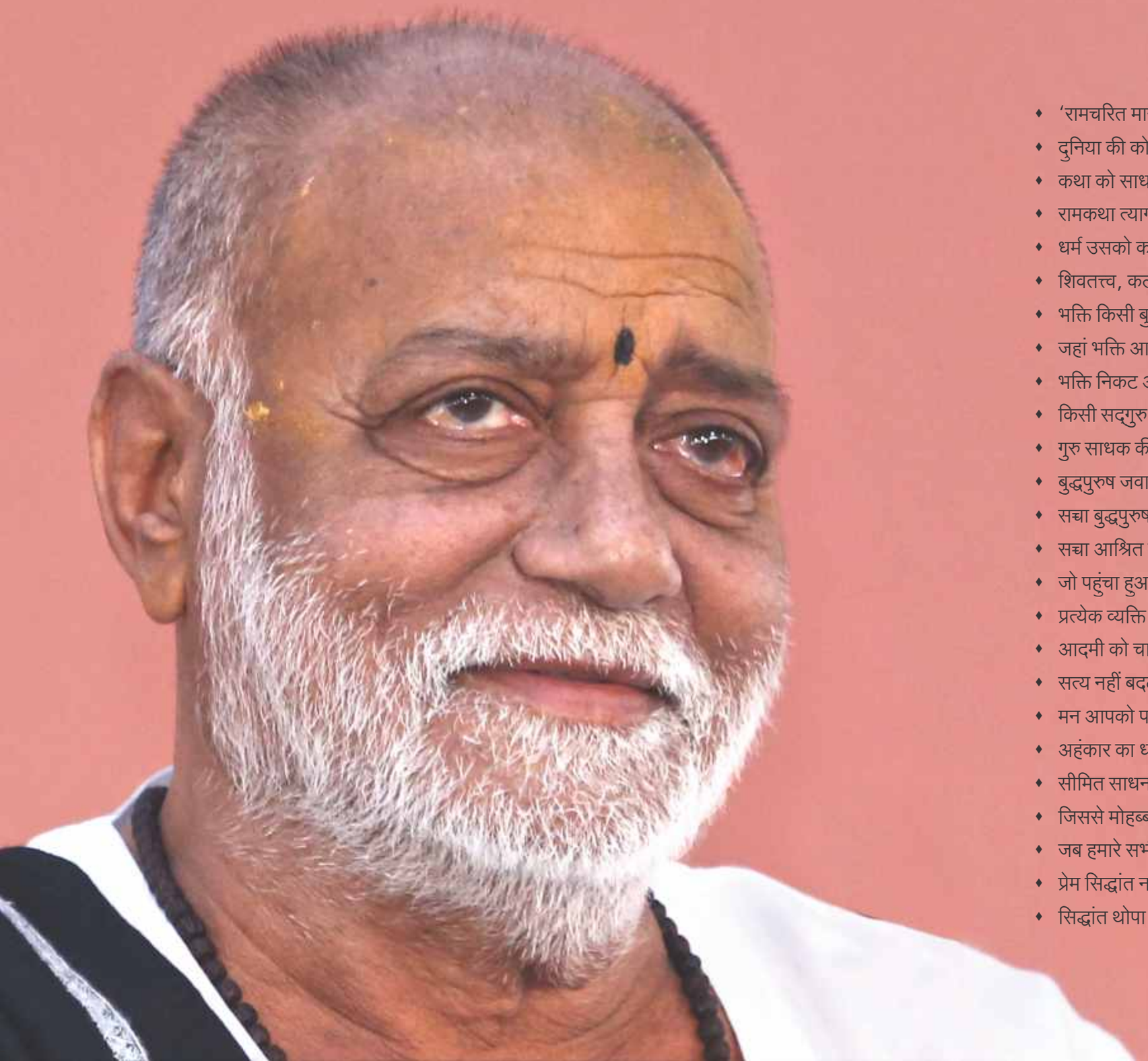

कथा–दर्शन

- 'रामचरित मानस' का निचोड़ है सत्य, प्रेम, करुणा।
- दुनिया की कोई भी विद्या हो उसका गुरु 'रामचरित मानस' है।
- कथा को साधन न बनाओ। कथा साध्य है।
- रामकथा त्याग की कथा है।
- धर्म उसको कहते हैं जो सब का कल्याण करे।
- शिवतत्त्व, कल्याणतत्त्व ये प्रत्येक धर्मरूपी वृक्ष की जड़ है।
- भक्ति किसी बुद्धपुरुष की प्रसन्नता का प्रसाद है।
- जहां भक्ति आई वहां ज्ञान, वैराग्य अपनेआप आ जाता है।
- भक्ति निकट आती है तो बड़ों–बड़ों का गुस्सा शांत हो जाता है।
- किसी सद्गुरु के आश्रय में जीना यह बहुत आवश्यक है।
- गुरु साधक की ऊर्जा को निरंतर काबू में रखता है।
- बुद्धपुरुष जवाब नहीं देता, जागृत करता है।
- सच्चा बुद्धपुरुष अंधेरे के बारे में लेक्चर नहीं करता, चराग जला देता है।
- सच्चा आश्रित गुरु को भी परमात्मा का दर्शन करा देता है।
- जो पहुंचा हुआ महापुरुष है वो अपना एकान्त सुरक्षित रखते हैं।
- प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में नितांत आवश्यक है विवेक।
- आदमी को चाहिए विवेकविचार, विवेकबुद्धि, विवेकवचन।
- सत्य नहीं बदलता पर सत्य के उपासक को क्षण–क्षण बदलना चाहिए।
- मन आपको परेशान नहीं कर रहा है। आप ही मन को उलझाए जा रहे हैं।
- अहंकार का धनुष्य तो विनम्रता से टूटता है।
- सीमित साधनों से असीमित को पाना जरा मुश्किल है।
- जिससे मोहब्बत होती है, उसके समान बोलने को जी करता है।
- जब हमारे सभी प्रामाणिक प्रयास निरर्थक हो जाय तब प्रभु पर छोड़ देना।
- प्रेम सिद्धांत नहीं है, प्रेम जीवन का परम संतोष है।
- सिद्धांत थोपा जाता है, स्वभाव प्रगट होता है।

सब को अपना समझो तो राग-द्वेष कम होगा

'रामचरित मानस' अंतर्गत 'अरण्यकांड' की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम कर रहे हैं। कुछ जिज्ञासाएं आज भी है। देखूंगा बीच में। ब्रह्म का यह मंजर गोदावरी के तट का याद करिए। भगवान वनयात्रा करते-करते पंचवटी में पहुंचे हैं। सुख आसीन बैठे हैं। और इस अवसर लक्ष्मणजी सामने आते हैं। और प्रभु को कुछ छलमुक्त वचन निवेदित करते हैं, आप तो सचराचर के स्वामी है। लेकिन मैं आज जो आपको पूछना चाहता हूं वो मैं अपने स्वामी समझकर पूछना चाहता हूं। यह अधिकार है साधक को। कोई भी बुद्धपुरुष, कोई भी अवतार सबका होता है, लेकिन उसके आश्रित उसके साथ निजता का नाता जोड़ने का अधिकारी है। जैसे कि राम सबका है। कल मुझे पत्रकार भाईलोग भी पूछ रहे थे कि बापू, राम को कुछ लोग सांप्रदायिक कहते हैं! अब ये उसकी सोच लेकिन राम सूर्यवंशी है। सूर्य यदि सबका है। राम आकाश है। आकाश यदि सबका है। राम पर्वत है। पर्वत यदि सबका है। राम जल है; राम याने पृथ्वी ये सबका है। तो ये सबका है। सूर्य उपासक सूर्य को अपना समझकर पूजता है। अपना भाव जो होता है।

मुझे एक बार पूछा गया था तलगाजरडा में बैठा था कि बापू, इतनी कथा सुनने के बाद भी राग-द्वेष नहीं जा रहा है, हम क्या करें? उसकी पीड़ा थी पूछने में। ये सबकी पीड़ा है। कोई उपाय बताए। कथा सुनते हैं बापू, हमारे राग-द्वेष क्यों नहीं जाते? कोई सरल उपाय बताए। तब मैंने कहा कि उपाय तो है। लेकिन उपाय भी जरा कठिन है। मैंने कहा था कि सबको अपना समझो तो राग-द्वेष कम होगा। जैसे 'अरण्यकांड' का प्रसंग है खर-दूषण का। उसमें खर-दूषण मर ही नहीं रहे हैं। आख़िर में भगवान राम ने ऐसी लीला की, एक राक्षस दूसरे को देखता है तो उसको राम दिखता है। और दूसरा उसको देखता है तो उसको राम! और मारने लगता है। और परस्पर संग्राम करके सब मर गये! और संतों ने कहा कि खर और दूषण ये दोनों राग और द्वेष के प्रतीक है। आज खर-दूषण हमारे साथ लड़ने नहीं आते हैं। आज का खर-दूषण है हमारा राग-द्वेष। उसका नाश कथा सुनने के बाद परस्पर सबको अपना राम देखे तो हो सकता है।

सबको अपना देखने से राग-द्वेष मिट जाता है। लेकिन अब ऐसा कलिप्रभाव है कि अपनों में ही राग-द्वेष शुरू हो गया है! एक भाई को भाई के साथ राग-द्वेष होता जा रहा है। अरे! पति-पत्नी में राग-द्वेष! मित्र-मित्र में राग-द्वेष! श्रोता-श्रोता में राग-द्वेष! वक्ता-वक्ता में राग-द्वेष! कोई क्षेत्र छूटा नहीं है! तो कैसे इससे हमें मुक्ति मिले? तो इस सरल उपाय है कि सूर्य सबका है। ये सूर्य मेरा है, ऐसा मानकर मैं सूर्य को पूजुं लेकिन दूसरे का भी सूर्य है। इसके अधिकार पर मैं बाधा न बनूं। दूसरा अपने ढंग से उसको पूजता है।

सूरज मेरा है। मेरे आंगन से मैं देखता हूं। लेकिन इसका मतलब तो ये नहीं कि दूसरे का नहीं है। अपना भाव जोड़ो। लक्ष्मणजी कहते हैं, राम, आप सचराचर के हैं, लेकिन मैं आज आपसे बात करता हूं तो मेरे स्वामी के रूप में करता हूं। इसका मतलब ये नहीं कि आप सचराचर के मिट जाओ। मैं आपको निज प्रभु की तरह पूछना चाहता हूं। यहां एक बिलग-सा निजता का संबंध जोड़ दिया गया है। मुझे समजाइए प्रभु कि ये पांच वस्तु है क्या?

कहहु ग्यान बिराग अरु माया।

मुझे बताओ, ज्ञान क्या है? मुझे बताओ, वैराग्य क्या है? मुझे बताओ, माया क्या है? मुझे बताओ, आप कृपा करके दान में देते हो वो भक्ति क्या है? और जीव और ईश्वर में भेद क्या है? सुंदर पांच प्रश्न है। जैसे रामके आने से पंचवटी पावन हो गई। दंडकवन पावन हो गया। ये ऋषिमुनियों का त्रास खतम हो गया। जैसे हमारी जीवन की पंचवटी में यदि ये राम के बचन उतर आए तो मुझे लगता है, ये दंडकवन जिसको हम अधम शरीर कहते हैं वो श्रेष्ठ हो सकता है; वो धन्य हो सकता है। तो है तो बड़ी आध्यात्मिक चर्चा। पांचों तत्त्वों की चर्चा ये कोई सामान्य चर्चा नहीं है।

लक्ष्मण निमित्त बन रहे हैं हमारी जागृति के लिए। ज्ञान की एक परिभाषा है जागृति। लक्ष्मणजी तो चौदह साल चौबीस घंटो जाग रहा है; उसको ज्ञान के बारे में पूछकर ज्ञानी क्या खाक होना है? वैराग के बारे में पूछकर उसको क्या वैरागी होना है? वो पत्नी को छोड़कर आया है; निद्रा छोड़कर आया है; पूरी राज्यसत्ता छोड़कर राम के पीछे आया है। माया के बारे में ये क्यों पूछे? माया से तो ये असंग हो चुका आदमी है। लक्ष्मणजी तो माया से ओलरेडी असंग है। तो माया के बारे में पूछकर उसको क्या विशेष जानकारी लेनी थी? भक्ति लक्ष्मण जैसी किसकी? और ईश्वर-जीव का भेद पूछते हैं। तो वो तो खुद को पता है कि आगे जो चल रहा है वो ब्रह्म है; जो बिलकुल पीछे चल रहा है वो मैं जीव हूं। इसमें राम को पूछने की क्या जरूरत है? ओलरेडी वो ज्ञान से भरपूर है, जागृत है, वैरागी है, भक्त है, वो माया से असंग होकर यात्रा कर रहे हैं। फिर ये पांच प्रश्न क्यों पूछ रहे हैं? पहला जवाब तो ये है कि हमारे लिए पूछ रहे हैं। और दूसरा कारण 'सब तजि करौं चरन रज सेवा।' महाराज, मैं सब छोड़ दूं। मैं केवल आपके चरणरज की सेवा में लग जाऊं। क्योंकि चरणसेवा में भी व्यक्तिपूजा का भय है। चरणसेवा की बात नहीं, चरणरज की सेवा। इसलिए तो तुलसी 'रामचरित मानस' का उसका उद्घाटन करते लिखते हैं-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

रज की बहुत महिमा हैं-

श्री गुरु चरन सरोज रज निज मन मुकुर सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायक फल चारि।।

अपनी-अपनी निजी बातें कहना ठीक नहीं, लेकिन आप मेरे अपने हैं तो मैं बोलता रहता हूं। मैंने शायद पहले भी एक बार निवेदन किया कि हम जीव है। मेरे दादाजी के पास जब वो कृपा कर रहे थे विशेष। और जब वो हमारे तलगाजरडा के छोटे से घर में माँ गोबर की गार कर लेती। आठ दिन में तो वो बिगड़ जाती जो लिंपन होते हैं देहातों में। फिर आठ दिनों में माँ गोबर की वो करती थी। और फिर दादा भोजन करने के लिए आए तो उसमें दादाजी के पैर लग जाते तो उसके निशान हो जाते। तो ये छोटा मोरारिबापू, छोटा मीन्स उम्र में, तो मैं इस गोबरवाली रज एक डिब्बी में रखा करता था। क्योंकि व्यक्ति चली जाएगी। कभी न कभी जाएगी। ये रज मुझे बहुत काम में आई। चंदन तो हमारे नसीब में कहां था? केसर कहां था? पीला रंग भी कहां नसीब में था? इतने अभाव में जीए हैं! केवल गोपीचंदन का तिलक करते। और गोपीचंदन भी जब द्वारिका कोई कुल का बुजर्ग जाता तो गोपी तलाव है द्वारिका में वहीं से अंदर से निकालकर ले आते और उसीका ही तिलक लगा लेते थे। मैं उसी रज को गोपीचंदन में मिला करके कभी-कभी तिलक किया करता था। रज काम करती है बाप! अनुभव करके देखना। रजोगुण की मात्रा रज कम कर देती है। जिन्होंने जाना है वो लोग इन बातों पर पक्के हैं। तो लक्ष्मणजी चाह रहे हैं सब छोड़कर मैं इन चरणरज की सेवा करना चाहता हूं। वो रज जो मेरे अंत:करण को विशुद्ध रखे; मेरी दृष्टि को पावन रखे; मेरे विचारों को पवित्र रखे।

सब तजि करौं चरन रज सेवा।

सब छूट जाएंगे। आपकी बोली छूट जाएगी। आपके चरण छूट जाएंगे। आपकी तसवीर भी हमारे पास नहीं रहेगी। और वो पुराने जमाने में तो किसीकी तसवीरें भी कहां थी? तब क्या बचेगा? गुरुचरण की रज। जिज्ञासा करने के बाद उसका लक्ष्य क्या है लक्ष्मणजी का? लक्ष्य है चरणरज की सेवा। मैं केवल चरणरज सेवुं। उसको मैं जीवन का लक्ष्य बनाऊं। भगवान प्रसन्न हुए। और परमात्मा लक्ष्मणजी से कहते हैं, मैं तुझे थोड़े में सब कुछ बता दूं।

थोरेहि महँ सब कहउँ बुझाई।
सुनहु तात मति मन चित लाई।।

'सुनहु तात' हे बाप! सुनो; तीन वस्तु रखकर सुनना। बुद्धि से सुनो, मन से सुनो और चित्त से सुनो। आप जानते हैं? हमारे यहां एक अंत:करण है। अंत:करण ये अंदर की इन्द्रिय उसको अंत:करण चतुष्ट कहते हैं शास्त्र में- मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। यहां प्रभु ने क्या कहा? तू सुन, मन से सुन, बुद्धि से सुन और चित्त से सुन। चौथा निकाल दिया; अहंकार से मत सुन। मन से सुनना। चित्त से सुनना। और बुद्धि से सुनना। मैं भी मेरे श्रोताओ को आग्रह करूं। आप सुनते हैं तो बुद्धिपूर्वक सुने निर्णय करके मेरे लिए क्या उपयोगी है? इनमें मैं से मेरे स्वभाव के अनुकूल क्या पड़ता है? बिना बुद्धि मत सुने जाओ। हां, मन इधर-उधर भटके तो सुनने का कोई अर्थ नहीं रहेगा। मन लगाकर सुनो। और चित्त की एकाग्रता बहुत जरूरी है। चित्त की एकाग्रता करके कोई सुनने का अभ्यासी हो जाए तो वो सुनता नहीं है, वो ध्यान करता है, वो योगा करता है। हमारी तकलीफ़

ये है साहब! हम मन लगाकर नहीं सुनते। इसकी आलोचना के रूप में नहीं कह रहा हूं। क्षमा करें। हमारा मन कई जगह भटकता रहता है। हम सुने जा रहे हैं। हमारा मन नहीं लग रहा है। लेकिन अभ्यास करने से मन धीरे-धीरे लगेगा। चलो, कथा सुनते समय कभी मन मेरा-आपका इधर-उधर हो भी जाए। लेकिन कथा का आपको व्यसन हो गया तो एक दिन आपको सुनने को न मिले तो फिर मन तड़पता है कि अब कब मौका मिले? इसका मतलब कि मन अभ्यस्त हो सकता है। एक बात आप ध्यान रखना, मन आपको परेशान नहीं कर रहा है। आप ही मन को उलझाए जा रहे हैं। हमने मन के साथ बहुत दुश्मनी की। बेचारा मन भटकता रहा।

भगवान को छलहीन वचन से पूछा गया और यहां परमात्मा की प्रासादिक वाणी शुरू हुई-

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं।

देख ब्रह्म समान सब माहीं।।

पहली जिज्ञासा, ज्ञान क्या है? लक्ष्मणजी के लिए हमारे लिए भगवान कितने थोड़े शब्द में कितनी बड़ी बात समझा देते हैं! लक्ष्मण, पहला तो सीधा दोटूक ज्ञान उसको कहते हैं जहां मान आदि एक भी तत्त्व नहीं। अठारह तत्त्व है। ज्ञान के ये अठारह तत्त्व में मान आदि कहके सत्रह और गिना देते हैं। इनमें से एक भी जहां न हो, वो ज्ञान है। 'श्रीमद भगवद्गीता' के तेरहवें अध्याय में अठारह चीज है। तुलसी ने केवल 'मान' शब्द लेकर के कह दिया कि जहां मान नहीं है। मान के बारे में तीन वस्तु मैं विशेष कहना चाहूं। मान का एक अर्थ है अभिमान। ज्ञान उसको कहते हैं, जहां बिलकुल अभिमान नहीं। निपट सादगी हो। बेश सादा, बोली सादी, व्यवहार सादा, वृत्ति सादी। तो मान का एक अर्थ अभिमान; मान यानी अभिमान। तो ज्ञान उसको कहते हैं कि जहां जरा भी अभिमान नहीं हो। दूसरा, ज्ञान वो है जहां सन्मान की कोई इच्छा नहीं है कि मैं इतना बड़ा पंडित, मैं इतना बड़ा कथावाचक, मैं इतना बड़ा पढ़ा-लिखा, मैं इतना बड़ा बहुश्रुत विचारक। मुझे सन्मान मिलना चाहिए। सम्मान देना ये समाज का दायित्व बन जाता है। सम्मान की भीख न मांगी जाए। समंदर कभी नदियों को निमंत्रण नहीं देता कि आप मुझ में आओ। समंदर की खुद की क्षमता ही नदियों को खींच लाती है। सम्मान तो दुनियाभर का तुम्हारे पास खींचे आता है, यदि हमारी क्षमता हो। उसको कुछ अलंकृत होने की जरूरत नहीं है जिसमें पूर्णता आ गई। हम तो छोटे-छोटे गड्ढे की तरह छलक जाते हैं यार! जो ज्ञान बंधन दे वो ज्ञान कैसा? ज्ञान तो मुक्ति का मारग बताता है। तो वो ज्ञान नहीं जहां अभिमान है। वो ज्ञान नहीं जो समाज से सम्मान की भीख मांगे। और वो ज्ञान नहीं जिसमें ज्ञानप्राप्ति के बाद कई प्रकार के अरमान शेष रह जाए। अपेक्षा से मुक्त हो जाए वो ही ज्ञान है। लक्ष्मणजी को ज्ञानी नहीं होना, वैरागी नहीं होना। एकमात्र सीधी-सी बात है कि 'सब तजि करौं चरन रज सेवा।' इसके अलावा मुझे कुछ नहीं चाहिए।

तो तीन वस्तु मेरे युवान भाई-बहन, मेरे श्रावक भाई-बहन याद रखना, ज्ञान वो है जहां अभिमान नहीं। ज्ञान वो है, जहां सम्मान की भूख नहीं। ज्ञान वो है जहां कोई भी एषणा बचे नहीं; कोई अरमान नहीं रहे। ये ज्ञान की आधी व्याख्या। ज्ञानी वो है जो सब में समदर्शन करे। ये ऊंचां ये नीचा; ये सवर्ण ये फलां; ये अनपढ़ ये पढ़ा-लिखा; ये धनी ये गरीब; ये मेरा ये पराया; ये हिन्दु ये मुस्लिम; ऐसा भेद न हो। जिसका समदर्शन हो जाए। समदृष्टि; गांधीजी ने नरसिंह का पद विश्व में उजागर कर दिया। वहां भी लिखा है, 'समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी।' जहां समदृष्टि है। चींटी में वो ही तत्त्व, कुंजर में भी वो ही तत्त्व। ज्ञान की उपलब्धि के बाद सम न दिखे तो क्या ज्ञान पाया?

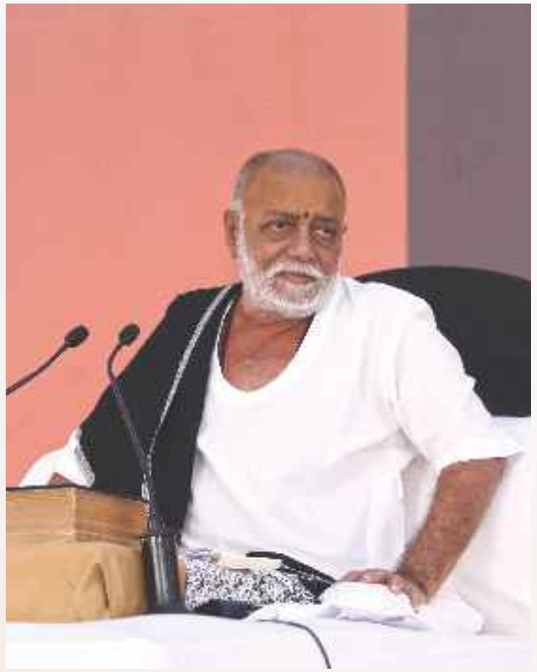

सीय राममय सब जग जानी।

करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

तो मैंने थोड़ा विस्तार भी सरल करने के लिए किया। लेकिन इतना ही समझ लो, भले पढ़ा-लिखा न हो; भले चौपाई याद न हो; भले श्लोक याद न हो; भले डिग्री न हो लेकिन ज्ञान वो है जो सरल चित्त है। मन में कोई कुटिलता नहीं। और सबमें हरि को देखता है वो ज्ञानी है। मैं फिर एक बार कहूं कि ज्ञान लेबल का विषय नहीं है। ज्ञान केवल ब्रह्म का विषय है। एक लेवल, एक अवस्था, एक भूमिका, एक पड़ाव। शास्त्रों में ज्ञान की सात भूमिका दिखाई लेकिन तुलसी इस विस्तार में नहीं गए। तुलसी ने कहा, बस इतना दो ही सूत्र, मान भी एक भी तत्त्व जिसमें न हो। सब में हरिदर्शन हो वो ज्ञान। इतनी सरल व्याख्या मुझे कहीं नहीं मिली जो तुलसी ने दी। क्या वैराग? मैं कहूं, कोई कपड़े का रंग बदल दे? एक अवस्था है जरूर। हमारे यहां वस्त्रो की भी महिमा है, पहचान है लेकिन ये सब उपर-उपर की बात है। वैराग्य की व्याख्या करते हुए मेरे 'मानस'कार कहते हैं, रामभद्र लक्ष्मणजी को कहते हैं, हे लक्ष्मण, तू उसको परम वैरागी मान; उसको परम वैरागी कहो-

कहिअ तात सो परम बिरागी।

तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी।।

तिनके की तरह सब सिद्धियां जिसने छोड़ दी। और दूसरा पार्ट, जिसने तीनों गुण भी त्याग दिए; सतो, रज, तम तीनों गुण से जो पर हो गया। और सभी सिद्धियों को जिसने त्याग दी। वो वैरागी नहीं, परम वैरागी है। कपड़े त्याग दिए महापुरुषों की महिमा अवश्य है। मैं उसकी आलोचना न करूं। वो वैरागी हो सकते हैं। धन छोड़ दे ये वैरागी है अवश्य। आश्रम छोड़ दे, हो सकता है वैरागी है अवश्य। वर्ण छोड़ दे, हो सकता है वैरागी है। लेकिन तीनों गुण यदि छोड़ दे और साधना के द्वारा मिली तमाम सिद्धियां तिनके की तरह छोड़ दे फैंक दे उसको लक्ष्मणजी, परम वैरागी कहिओ। दृष्टांत बहुत प्यारा है। तिनके की तरह ये छोड़ दिया जाए। तिनके की तरह, कपड़े की तरह नहीं। समस्त सिद्धियां छोड़ दे। लेकिन तिनके की तरह मैंने छोड़ा, मैंने सिद्धि छोड़ दी, ये स्मरण तक ना रहे। मैं बोलते-बोलते कभी घड़ी हाथ में पकड़ लेता हूं और मुझे भी पता नहीं लगता, मैंने कब छोड़ दी। इसी दृष्टि से तिनके की तरह। स्मृति में ही नहीं रहता कि हम बैठे थे और तिनका तोड़कर फैंक दिया। इतनी सहजता से जो सिद्धियों को छोड़ दे और मैं सिद्ध था वो स्मृति से भी निकल जाए और तीनों से जो मुक्त हो जाए उसको परम वैरागी समझना। ये ज्ञानी के सामने राम ज्ञान की व्याख्या कर रहे हैं। एक वैरागी के सामने मेरा राघव वैराग की व्याख्या कर रहे हैं। इस माया से परे होकर चलनेवाले पथिक लक्ष्मण के सामने माया की व्याख्या कर रहे हैं। और जो जीवाचार्य है उसके सामने भगवान जीव और ईश्वर का भेद खुलासा कर रहे हैं। जो परमभक्त है, जागृत भक्त है उसके सामने भक्ति की मीमांसा राघव कर रहे हैं। लक्ष्मण, उसको परम वैरागी समझना। तो ब्रह्मानंदजी कहते हैं-

संत परम हितकारी, जगत माँही।

प्रभुपद प्रकट करावत प्रीति, भरम मिटावत भारी।।

परम कृपालु सकल जीवनपर, हरि सम सब दुखहारी।।

त्रिगुणातीत फिरत तन त्यागी, रीत जगतसे न्यारी।।

बिलकुल सरल समाधानी व्याख्या कर दी कि उसको वैरागी समझना। फिर प्रभु माया की चर्चा करते हैं। तीन प्रकार की जिसमें अज्ञानता हो उसीका नाम जीव। बिलकुल सीधी-सादी बात। एक तो जो आदमी माया को नहीं जानता। दूसरा, जो आदमी ईश्वर को नहीं जानता। और तीसरा, जो आदमी खुद को नहीं जानता वो जीवात्मा। ओर सरल करूं। जीव, जगत और जगदीश ये तीन को जीवनपर्यंत न जान पाया उसका नाम जीव है। और जो कर्मानुसार जीव को बंधन में डालता है और मुक्त करता है; और माया के प्रेरित हुए कर्माधीन जीव को जो बंधन और मुक्ति प्रदाता वो एक संचालक तत्त्व है उसको ईश्वर कहते हैं। 'बंध मोच्छ प्रद सर्बपर माया प्रेरक सीव।' करते हुए भी ये सबसे पर वो परमात्मा है।

केवल छ शब्दों में माया की परिभाषा। 'मैं अरु मोर तोर तें माया।' इतने ही शब्द में खुलासा, ये माया। ये मैं हूं। ये मेरा है। ये तू है। ये तेरा है। उसीको माया कहते हैं। जिसका मैं चला गया, जिसका मेरा चला गया। मैं गया, अहंकार गया। ये तू ये तेरा। इसीको माया कहते हैं। हमारे जीवन से ये मैं-पना और मेरा-पना, तू और तेरा-पना चला गया तो आदमी उसी क्षण माया से मुक्त। बहुत कठिन है। व्याख्या करना व्यासपीठ से बहुत सरल है। बहुत यानी अधिक सरल है। बाकी मेरा पना कैसे छूटे? इस स्थिति पर

पहुंचने के लिए बड़ा कठिन है। 'मैं अरु मोर तोर तें माया।' बस इतने ही केवल छः शब्दों में माया का खुलासा कर दिया! लक्ष्मण, माया के दो विभाग है। एक विद्या और दूसरी अविद्या। अविद्या के आश्रित जीव भवकूप में गिरता है और विद्या का आश्रित इस जगत को समझ के एन्जोय करता है। तो संक्षेप में माया की व्याख्या करके फिर आगे-

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना।

लक्ष्मण, मैंने वैराग की व्याख्या तेरे सामने रखी। धर्म से आएगा वैराग। धर्म है सत्य। जो सत्य का जीवनपर्यंत निर्वहण करता है वो वैरागी होगा ही। गांधी देखो। धर्म मेरी दृष्टि में सत्य, प्रेम, करुणा। विनोबाजी भी वो ही लिखते रहते थे-सत्य, प्रेम, करुणा; सत्य, प्रेम, करुणा। प्रेमी त्यागेगा। प्रेम में त्याग करना ही पड़ता है। और लक्ष्मण, योग से ज्ञान की प्राप्ति होती है। ज्ञान की प्राप्ति के कई मारग है। लेकिन यहां योग से ज्ञान की प्राप्ति होती है बताया। और ज्ञान से मुक्ति की प्राप्ति होती है। लेकिन लक्ष्मण, वो भक्ति है जिससे मैं जल्दी द्रवीभूत हो जाता हूं। 'जातें बेगि द्रवऊँ मैं भाई।' जिससे मैं जल्दी पिघल जाता हूं। वो है भक्ति। वो स्वतंत्र है। भक्ति को ज्ञान और वैराग के आधीन नहीं होना पड़ता। जहां भक्ति आई वहां ज्ञान, वैराग्य अपनेआप आ जाता है। उसके आधीन है ये। भक्ति अनुपम है तात, लेकिन मिलती है जब संत प्रसन्न हो। और संत कब मिलता है? जब कोई साधु मिल जाए। फिर कुछ लक्षण की चर्चा आगे करते हैं। उसको मैं कल पर लिए जा रहा हूं।

भगवान शिव कैलास के वेदविदित वटवृक्ष की छांव में सहजासन में बैठे हैं। भल अवसर पाकर पार्वती शिवजी के पास आती है। अपनी प्रिया को आदर देते हुए वाम भाग में सत्कार किया। पार्वती भगवान से प्रश्न करती है कि महाराज, गतजन्म में सती के रूप में राम पर मुझे भ्रम हुआ था। एक जनम बीत गया भगवान लेकिन मन में वो भ्रम अभी मिटा नहीं कि राम ब्रह्म है कि कौन है? आप मुझे रामकथा के माध्यम से रामतत्त्व समझाओ। और पार्वती के सामने भगवान के दिव्य चरित्रों को गाने के लिए शिव हर्षित होकर जब मुखर हुए तो भगवान शिव के मुख से जो पहला शब्द निकला वो तुलसी ने लिख दिया-

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी।

हे हिमाचलकन्या, आपको धन्य है; धन्य है। आपके समान संसार में कोई उपकारी नहीं, परोपकारी नहीं। क्योंकि आपने ऐसी कथा पूछी है जो समस्त जगत को पवित्र करनेवाली गंगा है। आप धन्य है। आप धन्य है। दो बार धन्यवाद दिया है। प्रसन्नता व्यक्त की है। रामतत्त्व क्या है देवी?

बिनु पद चले सुनहु बिनु काना।

देवी, राम तो वो है जो बिना पैर चलता है। संतों ने इनके कई अर्थ निकाले और बहुत सुंदर अर्थ निकाले। बिना पैर चलते है वो राम। बिना पैर उसकी गति है। अथवा तो संतों ने कहा, बिनु पद उसको कोई पद-प्रतिष्ठा की जरूरत नहीं वो ही तत्त्व राम है। जो बिना कान सुनता है। हाथ के बिना जो अक्रिय भाव से साक्षी बनके सब होता चलता है। बिना घ्राणेन्द्रिय बास लेता है। नेत्र के बिना सबको देखता है। जैसे शरीर के बिना सबको छुता है। ये परमतत्त्व का नाम राम है। ऐसी जिसकी अलौकिक करणी है। वेद भी जिसकी महिमा नहीं जान पाता। वो कौशलपति बनकर आया था।

देवी, रामजनम क्यों हुआ, उसके बारे में कोई इदमित्थ्य कारण नहीं कह सकता कि ये ही कारण। क्योंकि कार्य-कारण सिद्धांत ही परमतत्त्व को लागू नहीं होता। फिर भी पांच कारण बताए शिवजी ने भवानी के सामने। पहला कारण रामजनम का वैकुंठ के द्वारपाल जय-विजय को सनतकुमारों से थोड़ा संघर्ष हो गया। शाप मिला और जय-विजय रावण और कुंभकर्ण बनता है। दूसरा कारण बताया सतीवृंदा का। भगवान विष्णु ने वृंदा के सतीत्व को तोड़ने के लिए छल किया। वृंदा ने शाप दिया कि मेरे पति की गैरमौजूदगी में आपने मेरे से छल किया। आप राम बनोगे तब मेरा पति रावण बनेगा। आपकी गैरमौजूदगी में आपकी कुटिया से आपकी जानकी को मेरा पति रावण बनकर अपहरण करके ले जाएगा। तीसरा कारण नारद ने भगवान को शाप दिया, आपको मनुष्य बनना पड़ेगा। चौथा कारण मनु और शतरूपा का; ये नैमिषारण्य में कठिन तपस्या। जिसको परमात्मा ने प्रगट होकर वरदान दिया, मांगो। तब मनु-शतरूपा ने मांगा, अगले जनम में हम फिर मनुष्य बने और पति-पत्नी ही बने और हमारे घर आपके समान पुत्र की प्राप्ति हो। भगवान ने कहा, मेरे समान तो कोई नहीं आएगा। मैं ही आपके घर पुत्र के रूप मैं आऊंगा मेरे अंशो के साथ। पांचवां कारण राजा प्रतापभानु का कपटमुनि का संग हुआ। मेरे युवान भाई-बहन, मैं इतना ही कहूंगा। संत का संग न हो तो कोई चिंता नहीं, लेकिन कुसंग न हो जाए इसका बहुत ध्यान रखना। दुनिया आज ज्यादा से ज्यादा बिगड़ी है उसका एक प्रधान कारण है संगदोष। और संग से बिगड़ी दुनिया को संत के संग से ही सुधारा जाए। प्रभातभानु को कपटमुनि का संग हो गया। प्रतापभानु ने ब्राह्मणों को भोजन कराया उसमें कपटमुनि ने आमिष रांध दिया। ब्राह्मणों ने शाप दे दिया कि तेरा पूरा कुल अगले जनम में राक्षस हो जाएगा। ये ही प्रतापभानु दूसरे जनम में रावण हुआ। अरिमर्दन कुंभकर्ण हुआ। उसका जो मंत्री था वो विभीषण हुआ।

मेरी व्यासपीठ हर वक्त बोली है कि 'रामचरित मानस' में राम के जन्म से पहले रावण के जनम की कथा; सूर्यवंश की कथा से पहले निशिचरवंश की कथा गाई गई। दिन होता है उस पहले रात हुआ करती है। रावण, कुंभकर्ण और विभीषण ने बहुत तपस्या की। दुर्लभ वरदान प्राप्त किए। और इस वरदान का दुरुपयोग करने लगा। धरती अकुला उठी। गाय का रूप धारण करके धरती ऋषिमुनियों के पास जाकर रोई, मुझे बचाओ। ऋषिमुनियों ने कहा कि रावण के त्रास से हमारा चिंतन-मनन तक रुक चुका है। सब देवताओं के पास गए। फिर सब मिलकर पितामह ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने कहा, अब एक ही उपाय है, हम सब मिलकर परम को पुकारे। परमात्मा की स्तुति की गई। आकाशवाणी हुई, हे धरती, हे देवगण, मुनिगण, डरो ना। कई पूर्व प्रसंगों के कारण मैं अयोध्या में अवतार धारण करूंगा। भगवान का प्रागट्य होने की भूमिका बन गई।

मेरे युवान भाई-बहन, ईश्वर को प्रगट करना है तो ये तीनसूत्रीय फोर्म्यूला। एक, पहले हम पुरुषार्थ करे। देवताओं ने, ऋषिमुनियों ने, धरती ने भी रावण के त्रास से मुक्त होने के बहुत उपाय किए। लेकिन पुरुषार्थ की मर्यादा आ गई तब जाके उसने पुकार किया। और पुकार की भी एक सीमा थी। उसके बाद देवताओं ने प्रतीक्षा की। यही मुझे लगता है रामप्राप्ति की फोर्म्यूला है। हम सब प्रमादी न हो। पहले पुरुषार्थ करें। लेकिन हम जीव है। सीमा में आबद्ध है। हमारा पुरुषार्थ भी सीमित है। पुरुषार्थ की सीमा पूरी हो जाए फिर पुकारो, फिर प्रार्थना। और प्रार्थना की सीमा पूरी हो जाए फिर तीसरी सीढ़ी है प्रतीक्षा। पुरुषार्थ, प्रार्थना और प्रतीक्षा तीनों मिल जाए उसके बाद जो आता है उसीका नाम है प्रागट्य। ये तीन हमें करना पड़ेगा। तब जाके प्रागट्य होगा। गोस्वामीजी हम सबको श्रीधाम अयोध्या लिए चलते हैं।

अयोध्याधाम रघुकुल का शासन। वर्तमान राजाधिराज रघुकुल के मणि दशरथ; वेद में जिसकी प्रतिष्ठा, ऐसे पुन्य श्लोक राजा का राज्य। कौशल्यादि प्रिय रानियां है राजा की। पति अनुकूल जीवन जीती है। युवान भाई-बहन, राम जैसे संतान अपने दांपत्य में प्रगट करने की एक छोटी-सी फोर्म्यूला यहां है। महाराज दशरथजी को अपनी रानियों के प्रति प्रेम है। और जिसको राजा प्रेम करते हैं वो रानियां कैसी है? पवित्र आचरण करती है। पति के अनुकूल जीवन जीती है। प्रेम करनेवाला पति पवित्र आचरणीय पत्नी और दोनों मिलकर के अपने इष्ट की भक्ति करती है। तब उसके घर राम का प्रागट्य हुआ। मेरे भाई-बहन, पति पत्नी को प्यार करे। पत्नी अपने पति को आदर दे। और दोनों मिलकर अपनी छोटी-सी अयोध्या में याथसमय हरिभजन करे उनके घर राम जैसे संतान होंगे। लेकिन करुणा समाज की ये है कि इतनी छोटी-सी भूमिका हम निभा नहीं पा रहे! दिव्य दांपत्य के लिए ओर कोई शर्तें ही नहीं। स्त्री प्रेम की भूखी होती है। पुरुष पत्नी को प्रेम दे बस। और स्त्री अपने पति को आदर दे। आदमी थोड़ा अहंकारी होता है। उसको आदर दे, सम्मान दे। और दोनों हरि भजे। आनंद राम की प्राप्ति हो जाएगी। लेकिन बड़ी मुश्किल है!

सुंदर जीवन दशरथजी का लेकिन एक ग्लानि है, मुझे पुत्र नहीं है। क्या मेरे से रघुवंश समाप्त हो जाएगा? मेरा कोई वारीस नहीं? अब ये पीड़ा मैं किसको कहूं? प्रजा राजा के पास पीड़ा व्यक्त करे। राजा किसको कहे? तब जाके तुलसी ने एक उपाय बताया कि जब कहीं भी तुम्हारी समस्या का जवाब न मिले तो तुलसी कहते हैं, अपने गुरुद्वार चले जाओ; अपने गुरु के यहां जाओ। वशिष्ठजी के

मुझे एक बार पूछा गया था, इतनी कथा सुनने के बाद भी राग-द्वेष नहीं जा रहा है, हम क्या करें? कोई सरल उपाय बताए। तब मैंने कहा था कि सबको अपना समझो तो राग-द्वेष कम होगा। जैसे 'अरण्यकांड' का प्रसंग है खर-दूषण का। उसमें खर-दूषण मर ही नहीं रहे हैं। आख़िर में भगवान राम ने ऐसी लीला की, एक राक्षस दूसरे को देखता है तो उसको राम दिखता है और मारने लगता है। और परस्पर संग्राम करके सब मर गये! आज का खर-दूषण है हमारा राग-द्वेष। उसका नाश कथा सुनने के बाद परस्पर सबको अपना राम देखे तो हो सकता है। सबको अपना देखने से राग-द्वेष मिट जाता है।

द्वार दशरथजी गए, क्या मेरे से रघुवंश समाप्त हो जाएगा? मेरे भाग्य में पुत्रसुख नहीं है क्या? वशिष्ठजी मुस्कुराए, कहा, महाराज, मैं तो कब से उत्सुक हूं कि आपके घर पुत्र हो। लेकिन आप कभी ब्रह्म की जिज्ञासा तो करे मेरे पास आकर! तो ब्रह्म को बालक बनाकर आपके आंगन में खेलता कर दूं। लेकिन धैर्य धारण करो। एक नहीं, चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। लेकिन राजन्, पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाना होगा। आप आदेश दे। शृंगी को बुलाए गए। पुत्रकाम यज्ञ का आयोजन हुआ। भगति सहित सस्नेह आहुतियां डाली गई। आखिर आहुति में अग्निदेव के रूप में यज्ञनारायण स्वयं प्रसाद का चरु लेकर यज्ञकुंड से बाहर आते हैं। यज्ञ का चरु वशिष्ठजी को दिया; खीर दी। कहा कि आप ये प्रसाद खीर राजा दशरथजी को देना और कहना, वह अपनी रानियों को बांट दे। पुत्रों की प्राप्ति होगी। तीनों रानियों ने यज्ञ प्रसाद को ग्रहण किया है। भगवान साक्षात् हरि कौशल्या के गर्भ में आए हैं। ईश्वर सर्व समर्थ है। वो उर में भी आ सकता है, गर्भ में भी आ सकता है। वो जनम भी ले सकता है, प्रगट भी हो सकता है। उसके लिए कोई पाबंदी नहीं।

पंचाग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, मध्याह्न का भास्कर, भगवान के प्रागट्य का समय निकट आने लगा। मंद, सुगंध शीतल वायु बहने लगी। पर्वतों से मणियों की खदानें निकलने लगी। बन कुसुमित होने लगा। नदियों में अमृत बहने लगा। पूरा अस्तित्व प्रफुल्लित है। स्वर्ग के देवता, पृथ्वी के ब्राह्मण देवता, ऋषिमुनि देवता और पाताल के नागदेवताओं ने मिलकरके परमात्मा की गर्भस्तुति की। देवगण परमात्मा की गर्भस्तुति करके अपने-अपने योग्य स्थान ग्रहण करने लगे। पूरे जग में जिसका निवास है अथवा तो पूरा जगत जिसमें वास करता है ऐसा ब्रह्म, ऐसा परमात्मा, ऐसा ईश्वर, ऐसा भगवान, ऐसा परमतत्त्व जो कहना चाहो वो कौशल्या माँ के भवन में चतुर्भुज विग्रह धारण करके माँ काशल्या के सन्मुख परम का ये प्रागट्य हुआ और गोस्वामीजी की लेखनी गा उठी-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

अद्भुत रूप की झांकी करती हुई माँ कौशल्या कहे, मैं किन शब्दो में आपकी स्तुति करूं? भगवान ने मुस्कुरा दिया। संतों से मैंने सुना, उसके बाद कौशल्याजी मुख फेर लेती है। भगवान ने पूछा, मैं आपके घर आया और आप मुख फेर रही है? बोले, आप आये, आपका स्वागत। लेकिन आपने वचन तोड़ दिया! कौन-सा बचन तोड़ा? बोले, गत जन्म में आपने हमको वचन दिया था कि मैं आपके घर पुत्र बनकर आऊंगा। आज पुत्र तो छोड़ो, नर भी नहीं हो! नारायण बनकर आए हो! बोले, मनुष्य को चार हाथ नहीं होते। यदि मनुष्य होना है तो दो हाथ कर दो। मुझे ये प्रसंग बहुत प्यारा लगता है। इसलिए कि मेरे देश की एक माँ कौशल्या ईश्वर को मनुष्य होने की शिक्षा दे रही है कि भगवान बनना आसान है, मनुष्य बनना कठिन है! इन्सान बनना कठिन है! तू मनुष्य बन। चार हाथ छोड़, दो हाथ ले। मैं दुनिया में सबको कहता हूं कि आदमी को दो हाथ ही होना चाहिए। आदमी दो हाथ से नर बनके कमाए और नारायण बनके चार हाथ से बांटे। भगवान ने चतुर्भुज से दो हाथ कर लिए। माँ से पूछा, अब लगता हूं मनुष्य? बोले, मनुष्य लगते हो लेकिन बाप लगते हो। हमें तो बेटा चाहिए। जनम लेनेवाला बेटा इतना सीधा बड़ा नहीं होता! आप छोटे हो जाओ। भगवान छोटे हो गए। नवजात शिशु की तरह परमात्मा बालक के रूप में प्रकट हुए। भगवान ने पूछा, अब तो बच्चा लता हूं न? माँ ने कहा, लगते हो बच्चे लेकिन बोलते हो बड़ो की तरह! बच्चा कोई बातचीत करेगा? आप रोओ। भगवान ने कहा, मेरे पर कौन नौबत आई कि मैं रोऊं? बोले, तेरे पर नौबत नहीं, तेरी दुनिया जो बनी है इस दुनिया पर नौबत आई है! सुनते ही माँ के अंक में आकर परमात्मा परात्पर ब्रह्म बालक के रूप में रोने लगे।

शिशुरुदन सुनकर अन्य रानियां भ्रम के साथ दौड़ आई! व्यासपीठ हरवक्त कहती है, आया ब्रह्म और रानियों को हुआ भ्रम! आनंद में दौड़ी दासियां-दास ने महाराज दशरथजी को खबर की महाराज, बधाई हो, बधाई हो, बधाई हो! आपके घर पुत्र का जनम हुआ! पुत्रजन्म की बात सुनते ही महाराज ब्रह्मानंद में डूब गए! जिसका नाम सुनने से शुभ होता है वो तत्त्व मेरे घर आ गया! गुरुदेव वशिष्ठजी को बुलाओ। ये भ्रांति निवारण करे कि ये ब्रह्म है कि कोई सामान्य शिशु है? वशिष्ठजी ब्राह्मणवृंद के साथ आए और सब बात पक्की हुई। परमानंद में डूबे हुए राजा कहने लगे, बधाईयां शुरू करो, बाजे बजाओ, उत्सव मनाओ। और रामजन्म रामप्राकट्य का उत्सव अवध में शुरू हुआ। सभी को रामजनम की वधाई हो, वधाई हो, वधाई हो!

सत्य कभी नहीं बदलता, सत्य का उपासक क्षणक्षण बदलता है

गोस्वामीजी 'अरण्यकांड' में कहते हैं कि अयोध्या के नगरजनों की प्रीति का गायन मैंने किया। जो प्रीति मति अनुरूप मैंने गाई, जिसकी तुलना किसीसे नहीं हो सकती। अब भगवान के दिव्य चरित्र को आगे सुनिए, जो भगवान ने यात्रा वनवास के दौरान की है। भगवान की लीलाओं के कुछ प्रवाह है। तत्त्वत: मूल में तो इसका कोई आकार नहीं है, निराकार है। फिर भी 'अवतरेउ अपने भगत हित', हम जैसों के लिए एक जीवन प्रस्तुत करने के लिए स्वयं किसी न किसी रूप में धरती पर आते हैं, तब कई प्रकार के चरित्र करते हैं। इन चरित्र में, इन लीलाओं में कुछ विभाग है। एक चरित्र शास्त्रीय भाषा में कहा जाता है, विदग्ध चरित्र। विदग्ध चरित्र उसको कहते हैं, जिसे कोई अधिकारी समझ सकते हैं। कोई इतने अधिकार संपन्न नहीं है वो नहीं समझ सकते। भगवान की एक लीला ऐसी होती है जिसको संतों ने ऐश्वर्यलीला कही है। जो लीला सुनने-देखने से लगता है, क्या ऐसा हो सकता है? लेकिन हो रहा है। जैसे कि भगवान अमित रूप धारण कर ले। हनुमानजी कभी सूक्ष्म बन जाए, कभी भीमरूप, कभी मशकरूप बन जाए। ये बने तो है लेकिन मन सोचेगा कि ऐसा कभी हो सकता है?

एक लीला होती है गोपनीय लीला, जो बिलकुल गुप्त रखी जाती है। जो लीला को नायक-नायिका दो ही जान सकते हैं, साथ में रहनेवाले भी नहीं जान सकते। परमात्मा का एक चरित्र है ललित नरलीला। ये बिलकुल हमारे जैसी लीला। बहुत सोचे तो समझदार को लगता है कि ऐसा वो करता नहीं है पर हमारे जैसी लीला वो नाटकीय रूप में कर रहे हैं। सीता के वियोग में झार-झार रोनेवाले राम जटायु का अपने हाथों संस्कार कर सकते हैं? 'हे सीते, हे सीते!' कहकर 'अरण्यकांड' में वियोग में तड़पनेवाले राम क्या एक बाण से वालि को मार सकते हैं? एक नारी के वियोग में कायर हो गए राम समंदर पर सेतु बना सकते हैं? ये मेल नहीं बैठता। लेकिन वो ललित नरलीला कर रहे हैं।

'अरण्यकांड' में बहुत-सी लीलाओं का वर्णन है। प्रधान जो लीला भगवान के शेष साल की है वो ललित नरलीला है। भगवान किन-किन रूप 'अयोध्याकांड' के मंच पर प्रगट करते हैं? कल से जो मंचन चल रहा है, उसमें भगवान बैठे हैं। पंचवटी में लक्ष्मण प्रश्न पूछ रहे हैं। सीयाजू केवल साक्षीभूत है। और पांच प्रश्न पूछे गए। वहां राम एक प्रबुद्ध पुरुष के रूप में, एक सद्गुरु के रूप में, एक प्रज्ञावान के रूप में लक्ष्मण को संबोधित कर रहे हैं। लक्ष्मणजी ने पांच प्रश्न पूछे, ज्ञान क्या है? वैराग्य क्या है? माया क्या है? आप कृपा करके जिसका दान करते हैं वो भक्ति क्या है? और पांचवां प्रश्न, ईश्वर और जीव का भेद क्या है? जवाब देते समय प्रभु क्रम में नहीं बोले। वक्ता की अपनी स्वतंत्रता होती है कि जवाब कहां से दिया जाय। श्रोता पूछने का अधिकारी है। वक्ता अपने ढ़ंग से जवाब देता है।

भगवान राम ने उत्तर देते समय क्रम में न जाकर पहले माया से शुरूआत की। क्रम तो मेरी व्यासपीठ ने कल पकड़ा। आप तो बोले नहीं, वर्ना आप को लगा होगा कि भगवान जिस रूप में जवाब दे रहे हैं उससे बिलग जवाब बापू दे रहे हैं! तुलसी का दृष्टिकोण ये है कि उसने माया की चर्चा पहले की। यद्यपि लक्ष्मण ने ज्ञान के बारे में पहले पूछा है। तुलसी का दृष्टिकोण शायद ये हो कि एक बार माया जानने में आ जाए तो फिर ज्ञान के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा। इसीलिए उसने माया से-अंधेरे से यात्रा का आरंभ किया। गोस्वामीजी के पांच सौ साल बाद हमारी जो स्थिति है, उसमें मुझे ऐसा लगा कि एक बार प्रकाश की जानकारी मिल जाए तो अंधेरों की ऐसी-तैसी! एक बार ज्ञान समझ में आ जाए तो माया तो तमस है। चराग बूझ जाए फिर अंधेरे के बारे में व्याख्यान बेकार है! इसीलिए क्रमभेद किया है। मैं ही कर सकूं ऐसा नहीं, आप भी रुचि के अनुसार सूत्र को बिठा सकते हैं। बावन पत्ते के खेल में सब अपने-अपने ढ़ंग से पत्ते रखते हैं। जीवन के रहस्य के जवाब पाने के लिए आप भी अपनी अदाओं से उसका क्रम रख सकते हैं।

लक्ष्मणजी ने जरा भी प्रश्न नहीं किया कि आपने क्रमभेद क्यों किया? बुद्धपुरुष-जागृतपुरुष सदा बदलता है। कल एक व्यक्ति का प्रश्न था, 'बापू, मैं क्षण-क्षण बदल रहा हूं, ऐसा विनोबाजी का वक्तव्य है। तो बापू, क्या सत्य भी

क्षण-क्षण बदलता है?' जिज्ञासु ने विनोबाजी को सत्य के पर्याय समझा है यहां। ये अच्छी श्रद्धा है पूछनेवाले की। सत्य क्षण-क्षण क्या त्रिकाल अबाधित है। सत्य कभी नहीं बदलता लेकिन सत्य का उपासक क्षण-क्षण बलदता है। विनोबाजी सत्य के उपासक है। सूरज कभी नहीं बदलता, देखनेवाले बदलते हैं। बिलग-बिलग मुल्क में बिलग-बिलग रूप में सूरज दिखाई देता है। सत्य के उपासकों को बदलते रहना चाहिए, वो सिकुड़ न जाए। आप यदि 'रामचरित मानस'रूपी सत्य के पक्के उपासक है, तो ये कभी बदलेगा नहीं क्योंकि ये सत्य है। लेकिन आप यदि उसके 'सुधि पाठक', 'सुधि उपासक' है तो आप रोज बदलेंगे। आप ये सोचेंगे कि इसमें जो सत्य है, वो 'कुर्रान' में है कि नहीं? वो देखो। 'कुर्रान' में जो सत्य है वो 'गीता' में है कि नहीं? वो भी देखो। 'गीता' में जो सत्य है वो 'बाईबल' में है कि नहीं? वो भी देखो। साधक को बदलना चाहिए। जो बदलता नहीं वो गंदा हो जाता है। ये सब कांदे, आलू बेचनेवाले रोज आलू का स्थान बदलते हैं, साफ़ करके इधर-उधर रखते हैं।

कल ही मैं विनोबाजी के बारे में गोष्ठि में बोल रहा था कि सत्य हिमालय है। अभी मैं कह रहा था कि सत्य कभी बदलता नहीं और अभी कह रहा हूं, सत्य हिमालय है। हिमालय तो बदलता है,पिघलता है, सदियों के बाद ये न भी रहे। हिमालय से भी पुराने कई पर्वत है। हमारा गिरनार हिमालय के दादा के दादा है। लेकिन भीतर का जो हमारा हिमालय है, सत्य है वो कभी नहीं बदलता। और हिमालय से जो गंगा निकलती है वो है प्रेम। भीतर का सत्य है हिमालय, और भीतर से जो मोहब्बत जन-जन के लिए निकलती है ये प्रेम है। और ये मोहब्बत आख़िर में करुणा के रूप में छा जाए वो है करुणासागर। हिमालय स्थूल है, जो सत्य है, उससे स्थूल गंगा निकली वो प्रेम है। और गंगा जहां समा जाती है वो गंगासागर है। लेकिन भीतर के हिमालय से जो गंगा निकलती है वो गंगा भक्ति है, प्रेम है। और वो गंगासागर में नहीं, करुणासागर में समा जाती है। तो सत्य नहीं बदलता, साधक बदलता है, बदलना चाहिए।

दूसरी बात पूछी है, 'वाणी से बोले वो कौन-सा सत्य है? जो धर्म के समान है वो सत्य क्या है?'

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।।

समझने के लिए सत्य के तीन पड़ाव है। १. स्थूल सत्य। २. सूक्ष्म सत्य। ३. सूक्ष्मतम सत्य। हम जबान से बोले वो स्थूल सत्य है। ये 'सत्यं वद' बोलना चाहिए। कई सत्यमूर्तियों ने भी बोलनेवाला सत्य बदला है। जैसे कृष्ण सत्यरूप है, फिर भी सत्य बदलता है। लेकिन वो स्थूल सत्य है, जो दूसरों के हित में भी या तो आप मौन रह जाते हैं, या तो आप कुछ बदलकर बोलते हैं। स्थूलसत्य जगत कल्याण के लिए कभी-कभी बदला जा सकता है। किसीकी हत्या होती हो और हत्यारा तुम्हारे पास आए, और जिस निर्दोष को वो मारने जा रहा है, वो तुम्हारी कुटिया में है, और मारनेवाला पूछे कि तुम्हारी कुटिया में मेरा शिकार है? उस समय यदि आप कहे कि मेरी कुटिया में कोई नहीं है। यद्यपि ये असत्य है, पर प्राण की रक्षा के लिए, विश्वमंगल के लिए शुभ है।

एक सत्य है सूक्ष्म सत्य, जो है आचार का सत्य। जैसा आदमी बोलता है वैसा करता है। एक है सूक्ष्मतम सत्य, जो वैचारिक सत्य है। शास्त्रकार जिसे आत्मिक सत्य कहते हैं। तो सत्य नहीं बदलता पर सत्य के उपासक को क्षण-क्षण बदलना चाहिए, ऐसा मैं समझता हूं।

एक चिठ्ठी है, 'विनोबाजी ने ऐसा क्यों कहा कि मुझे संतों- महापुरुषों का डर लगता है? और मुझे कई संतों और महापुरुषो का डर नहीं भी लगता। मैं उनसे सहज मिलता हूं और वार्तालाप करता हूं।' विनोबाजी ने ऐसा क्यों कहा ये जब वो थे तब पुछ लेना चाहिए था! उनकी वकालत मैं कैसे करूं कि उसको कौन-कौन संत का डर लगता था? कौन-कौन का नही? कभी-कभी महापुरुषों को किसी महापुरुष का संकोच के कारण भी डर लगता है। वो जानते हैं कि ये महापुरुष सब का है, सब को अपना मानता है। उसका बड़प्पन, महिमा ऐसी है कि लगता है कि इसके साथ कैसे बात करें? जैसे हरि की लीला होती है वैसे महापुरुषों की भी लीला होती है। भगवान राम 'अरण्यकांड' में बोले हैं-

देखहु तात बसंत सुहावा।
प्रिया हीन मोहि भय उपजावा।।

भगवान राम लक्ष्मणजी को कहते हैं कि देख, कैसी बहार आई है? और आज सीता के वियोग में मैं डर रहा हूं! ऋत को ऋतु का भय? समझ में नहीं आता! 'किष्किन्धाकांड' में राम ने कहा, मैं वर्षाऋतु से भी डरता हूं।

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।

कोई बुद्धपुरुष आप की श्रद्धा में दृढ़ हो गया कि ये पहुंचा हुआ फ़कीर है, वो अस्वस्थ हो जाता है तब उसके आश्रित को भय लगता है कि वो चले जाएंगे तो हम कहीं के नहीं रहेंगे! अत्यंत प्रीति भय का एक स्थान है। जिनके प्रति आप को अत्यंत श्रद्धा, भरोसा और विश्वास है उनके प्रति आप थोड़े चिंतित रहते ही हैं, ये स्वाभाविक है। कल ही बताया गया कि विनोबाजी को पूरी दुनिया प्रश्न पूछती थी। वो खुद किसीको प्रश्न नहीं पूछते थे। लेकिन मकरंदभाई दवे को प्रश्न पूछते थे। बुद्धपुरुषों की महिमा बिलग होती है, मुश्किल है समझना।

चिठ्ठी में आगे लिखा है, 'हमारे वास्तव जीवन में हम अनुभव करते हैं, क्या आप को ऐसा होता है?' मेरी बात छोड़ो! कुछ बातों का रहस्य हम जैसे लोग नहीं खोल पाते। इसीलिए सब छोड़ो, हरि भजो। 'विनयपत्रिका' में तुलसी कहते हैं, 'हे हरि, कही न जाए क्या कहिये?' क्या है तेरा जगत, क्या है तेरा प्रपंच, समझ में नहीं आता। कोई कहते हैं, जगत सत्य है। कोई कहता है, जगत मिथ्या है। कोई दोनों को मान रहे हैं। तुलसी कहते हैं, इन तीनों को छोड़कर जो हरि भजे वो सयाना।

एक प्रश्न ये भी है कि 'अरण्यकांड' में नारदजी से कहा कि हे मुनि, आप को सहरोषा बता रहा हूं, जो मुझे सकल भरोसा छोड़कर पूजता है। तो 'सहरोषा' का मतलब क्या है? इसका अर्थ है 'सहर्षा।' यहां 'रोष' यानी क्रोध नहीं। मैं सहर्ष बता रहा हूं कि जो सभी भरोसा छोड़कर मेरी शरण में आते हैं वो कृतकृत्य हो जाते हैं।

तो मेरे भाई-बहन, सत्य नहीं बदलता। तुलसी ने अपने ढ़ंग से पेश किया। पहले ज्ञान के बारे में पूछा और माया के बारे में पहले कहा। तो कल हम इन आध्यात्मिक मुद्दों की चर्चा कर रहे थे। 'मैं अरु मोर, तोर ते माया।' ये मैं, ये मेरा, ये तू ये तेरा उसीको तुलसी ने माया कहा है। ये इन्द्रियों के द्वारा मनसहित जहां-जहां इन्द्रियां जाती है सब माया है। जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा, 'परमेश शक्तिः।' माया परमात्मा की शक्ति है। 'अनादिविद्या त्रिगुणातीत परा।' ये अनादि परा माया है। 'अव्यक्त माया', शंकराचार्य ने कहा, माया उसको कहते हैं, जो अव्यक्त है। जगत माया से ढ़का हुआ है। जगत दिखता है पर माया नहीं दिखती। कोई आगे बढ़ जाता है तो माया दिखती है, जगदीश नहीं दिखता। बड़ा खेल है। तो मालिक का नाम लो।

इसप की कहानी है कि एक तालाब में मैढ़क थे। तो बच्चे बैठे-बैठे मैढ़क को पत्थर मार रहे थे। मैढ़क बोले, बालकों, आप हम को क्यों पत्थर मारते हो? हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा? ये तुम्हारे लिए खेल है लेकिन हमारी जिंदगी का सवाल है। इश्वर खेल कर रहा है। उसको खबर नहीं कि हमारी जिंदगी का सवाल है! तो ये माया, प्रपंच तुने जो सूत्र दिए उन्हीं कारण हम लड़लड़कर मरे जा रहे हैं! तू कौन है ये हम नहीं जानते। तेरा नाम क्या है, ये हम जानते हैं।

तू निशाने बेनिशान है, तू बहारे शरमदी है।
तुझे देखना इबादत है, तेरी याद बंदगी है।

इस मूल धर्म को दुनिया चुक जाती है तब आत्मवादी बनने के बदले आतंकवादी बन जाते हैं। अपने अपने को काटते हैं। 'महाभारत' का युद्ध हुआ पांच हजार साल पहले तो अंदर-अंदर भाई-भाई ही मरे, कोई दूसरा तो आया ही नहीं।

तेरे दर पे सर रखना फ़र्ज था, सर रख दिया।
अब मेरी आबरु रखना न रखना तेरा काम है।
ज़िंदगी का बोझ उठा लेना हमारा काम था।
हम को मंज़िल पे पहुंचाना ये तेरा काम है।
-नज़ीब बनारसी

दुनिया में मोहब्बत तब होगी जब राधा की चुनरी मरीयम सीयेगी। अथवा तो मरीयम की चुनरी राधा सीये। बाप! इसीलिए रामकथा को मैं प्रेमयज्ञ कहता हूं। ये मेरी मोहब्बत की मेहफ़िल है।

जनाजे पे मेरे लिख देना यारों,
मोहब्बत करनेवाला जा रहा है।
-राहत इन्दौरी

हम चर्चा कर रहे हैं, सत्य नहीं बदलता, सत्यमार्ग के पथिक को रोज नया होना चाहिए। केनाल क्रम में बहेगी लेकिन गंगा का कोई क्रम नहीं होता। रामकथा गंगा है इसलिए उसमें क्रम नहीं पाओगे। वाल्मीकि के जो क्रम है, वो तुलसी ने उड़ा दिए हैं। ये तुलसी की अदा है। सीता अग्नि में समा जाती है 'अरण्यकांड' में वो वाल्मीकि ने नहीं लिखा, तुलसी ने लिखा। 'वाल्मीकि रामायण' का 'सुन्दरकांड' आप पढ़े। हनुमानजी ने जब लंका जलाई तो एक राक्षसी दौड़कर जानकी के पास आई और कहा, आपके पास जो ताम्रमुखी वानर आया था उसे जलाया जा रहा है। उस समय

जानकीजी की आंखें ड़बड़बा गई! जिसको मैंने पुत्र बना दिया है, मैं उसकी माँ हूं, उसे जलाया जा रहा है? उसी समय जानकी बोली, मैंने सच्चे दिल से अपने पति और ऋषि-मुनिओं के साथ संत की सेवा की हो और जीवन में अगर मैंने सच्चा तप किया हो, और मेरे पति यदि एकपत्नीव्रत है तो हनुमान की पूंछ में लगी आग ठंडी हो जाए। तुलसी के हनुमान को पता ही नहीं कि आग लगी है पूंछ में! यहां वाल्मीकि अपना ठुमका लगाते हैं। तुलसी अपना ठुमका लगाते हैं। मोरारिबापू अपना ठुमका लगाता है। तो माँ के बारे में बहुत सारी व्याख्याएं आई हैं। वो परमात्मा की शक्ति है, अव्यक्त है। तो मेरे भाई-बहन, अपनी आत्मप्रतीति पर रहिए।

भक्ति के बारे में निवेदन करते हुए प्रभु ने कहा, भक्ति वो है लक्ष्मण, जो स्वतंत्र हो; उसके आधीन ज्ञान-विज्ञान रहते हैं। जिसमें भक्ति है उसे ज्ञान के लिए शास्त्र पढ़ने नहीं पड़ते। कई देहातों में ऐसे लोग मिलेंगे जो अनपढ़ हैं लेकिन भजन, बंदगी और भक्ति के कारण उनके पास इतना खज़ाना है कि पंडितगण चौक जाए।

भगति तात अनुपम सुखमूला।
मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।।

सुगम पंथ है भक्ति। सरल मार्ग है प्रेम। ज्ञान-वैराग्य का मार्ग बहुत कठिन है। माया को समझना-समझाना बहुत दुष्कर है। ईश्वर-जीव जैसे भेद हम जैसों के पाले नहीं पड़ रहे हैं। भजन करो।

भक्ति करनेवालों को चार चीज़ का ध्यान रखना चाहिए। १. परमात्मा २. परमात्मा के बंदे ३. मूढ़जन ४. द्वेषी लोग। परमात्मा को ध्यान में रखकर उससे प्रेम करे। भगवान के जो बंदे है उससे मैत्री करे, उसका संग करे। जो मूर्ख है, मूढ़ है उस पर करुणा करे, क्रोध नहीं। जो द्वेष करता है उससे दूर रहो, उसको उपेक्षा या नफ़रत भी न करो लेकिन अंतर बना लो। तुलसीजी कहते हैं, 'उदासीन नित रहई गोंसाई।' तो भक्ति बहुत सरल उपाय है।'मानस' में लिखा है, ज्ञान का मार्ग तो कृपाण की धार है। सुगम मार्ग से भक्ति प्राप्त कर सकते हैं लेकिन ज्यादा भक्ति तो मिलती है, 'मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।' भगवान कहते हैं, 'हे लक्ष्मण, भक्ति तो उसे मिलती है, जिस पर कोई बुद्धपुरुष अनुकूल हो जाए। भक्ति किसी बुद्धपुरुष की प्रसन्नता का प्रसाद है। भगवान भक्ति के कुछ साधन बता रहे हैं।

भगति कि साधन कहउँ बखानी।
सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी।।
प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती।
निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।
एहि कर फल पुनि बिषय बिरागा।
तब मम धर्म उपज अनुरागा।।

एक; लक्ष्मण, सब से पहले विप्र के चरण में अत्यंत प्रेम करना। यहां विप्र वर्णवाचक नहीं है। यदि इसका अर्थ ब्राह्मण करो तो शास्त्रों ने 'भगवद्गीता' ने भी ब्राह्मण के लक्षण बताये हैं, वो सब जिसमें हो वो ब्राह्मण। भगवान बुद्ध ने, भगवान महावीर स्वामी ने जो ब्राह्मण के लक्षण बताए हैं वो हो तो ब्राह्मण। विप्र का अर्थ मेरी व्यासपीठ करती रही है। वि = विगतः, मुक्तः, प्र = प्रपंच। जो जीवन में प्रपंच से मुक्त है वो विप्र है। चाहे विप्रकुल में जन्मा हो या ना जन्मा हो। तुलसीदासजी ने 'दोहावली' में लिखा है, प्रेम शरीर है, प्रपंच रोग है। प्रपंच से जो मुक्त है वो नीरोगी ब्राह्मण है। विप्र का दूसरा अर्थ, वि = विवेक, प्र = प्रधानता। जिसके जीवन में विवेक की प्रधानता हो वो विप्र। विप्र का तीसरा अर्थ, जिसने परमतत्त्व को पाने के लिए अपने जीवन में कुछ विशेष प्रस्थान किया है। सब के साथ नहीं चला, थोड़ा हट के चला। राम ने कहा, ऐसा कोई विप्र, कोई बुद्धपुरुष मिल जाए तो हे लक्ष्मण, भक्ति प्राप्त करने का ये पहला साधन है। उसके आचरण से मोहब्बत करना। जिससे मोहब्बत होती है, उसके समान बोलने को जी करता है।

दूसरा, बुद्धपुरुष बताये ऐसे-ऐसे अपने कर्म में लगे रहो। अपने निजकर्म में न्याय से रहो तो ये भक्ति का मार्ग बन जाएगा। राम ने कहा, इसका फल है लक्ष्मण, धीरे-धीरे विषयों में वैराग्य आएगा। आदमी धीरे-धीरे बिलग होने लगेगा। उसके बाद ही भगवान कहते हैं, मेरे चरणों में अनुराग प्रगट होगा।

श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं।
मम लीला रति अति मन माहीं।।

भगवान ने कहा, लक्ष्मण, नौ प्रकार की जो भक्ति है उसे दृढ़ करे। आप जानते हैं, 'भागवत' में नौ प्रकार की भक्ति है और 'मानस' में भी है। लेकिन शास्त्रीय दृष्टि से भक्ति के नौ प्रकार है।

श्रवणं कीर्तनं विष्णुः स्मरणं पादसेवनं।
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यं आत्मनिवेदनम्।।

श्रवण अच्छी भक्ति है। कथा ही सुनो ऐसा मैं नहीं कहता। जहां अच्छी बात चलती हो, जिसमें सब का मंगल हो वो सुनो। परमात्मा का नाम कीर्तन करते-करते गाना ये भक्ति है। केवल प्रभु की स्मृति में रहना ये भक्ति है। पादसेवन के दो अर्थ। पाद यानी पैर, पैरों का सेवन। पाद यानी एक पद्य। किसी पहुंचे हुए का कोई पद्य का सेवन करो। कोई भजन, कविता जिसमें शुभ हो। वेद की ऋचा हो, पवित्र कुर्रान की आयातें हो, बाईबल का कोई सूत्र हो, धम्मपद का कोई वाक्य हो, क्या फ़र्क पड़ता है? मेरे बुद्धपुरुष ने जो एक 'पद' 'वाक्य', 'सूत्र' दिया उसका मैं जीवन पर्यंत सेवन करूंगा। ये भक्ति है। अर्चन का अर्थ पूजा भी है और सेवा भी है। आप तीन घंटे प्रभु की सेवा करो अच्छी बात है लेकिन अस्पताल में किसी मरीज़ की सेवा करो तो ये भी अर्चन है। इसका मतलब ये नहीं कि आप पूजा न करे। सेवा करते समय विवेक रखकर सेवा करनी चाहिए। वंदन भी भक्ति है। कुछ न करो केवल सलाम करो, हाथ जोड़ो। प्रामाणिकता से प्रणाम करो। प्रणाम की बड़ी महिमा है।

फ़ांसले सदियों के एक लम्हें में तय हो जाते,
दिल मिला लेते अगर हाथ मिलानेवाले।

दास्य यानी सेवकाई, दासत्व। वो मेरा मालिक, मैं उसका बंदा; वो मेरा सांई, मैं उसका किंकर; वो मेरे प्रभु, मैं उसका भक्त; ये दास्य भक्ति। सख्य-मैत्री। परमात्मा के साथ हम कोई भी रिश्ता रख सकते हैं, 'तोहे मोहे नाते अनेक।' आत्मनिवेदन नववीं, चौटी की भक्ति। जैसे है वैसे परमतत्त्व के सामने पेश होना ये आत्मनिवेदन। आगे बोले-

संत चरन पंकज अति प्रेमा।
मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।।
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा।
सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा।।

संतों के चरण में प्रेम, गुरु, पिता, माता, बंधु सब कुछ जो मुझे समझे वो भक्त है लेकिन-

मम गुन गावत पुलक सरीरा।
गदगद गिरा नयन बह नीरा।।
काम आदि मद दंभ न जाकें।
तात निरंतर बस मैं ताकें।।

रामजी ने कहा, लक्ष्मण, मेरी चर्चा करते हुए, मेरे गुणगान करते हुए, मेरी भक्ति करते जिसके शरीर में रोमांच हो, वाणी गदगद हो जाए, नेत्रों से अश्रु बहने लगे ये भक्ति के लक्षण है। परम को याद करते-करते जो आंख भीग जाए, जिसको आप अपने मानते हैं, जो पराये हैं, दूसरे हैं, इन सब को भगवान है ऐसा समझो। कोई दुःखी, दीन, गरीब, वंचित, उपेक्षित, बीमार, भूखे को देखकर जिसकी बानी गदगदित हो जाए; पहुंचे हुए संत-फ़कीर ऐसे होते हैं। किसीकी स्थिति देखकर आंसु आए वो बंदगी है, भक्ति है। पहुंचे हुए लोग ये पहचानते हैं। मुझे राज कौशिक का शे'र याद आ रहा है-

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें और होती है।

प्रभु कहते हैं, लक्ष्मण, मेरा नाम लेकर जो पुलकित हो जाए, उसके पीछे कोई दंभ न हो, पाखंड न हो। कोई कामना, मद, दंभ न हो, हे लक्ष्मण, ऐसे भक्त के वश में मैं हो जाता हूं। लक्ष्मण, जिसको मन, बचन, कर्म से मेरी ही गति है, और निष्काम भाव से जो भजन करता है, उनके हृदय में मैं सदा-सर्वदा निवास करता हूं। अपनी जिज्ञासा के जवाब में प्रभु के श्रीमुख से भक्तियोग की कथा सुनकर लक्ष्मणजी भाव में डूबे। प्रभु के चरण में अपना सिर रख दिया।

तो बाप! ये ज्ञान की चर्चा हुई। ये चर्चा है। बाकी बहुत कठिन मामला है। बड़ा मारग है भक्ति का, प्रेम का। और जैसे ये कथा सुनी, उसके बाद कुछ समय बीता और फिर आगे का प्रसंग है शूर्पणखा का। तुलसी का क्रम भी देखिए, जब तक लक्ष्मणजी ने पांच प्रश्न न पूछे, रामजी ने उस पांच जिज्ञासाओं का उत्तर न दिया और भक्ति-जोग का वातावरण न बना तब तक कोई शूर्पणखा नहीं आई, उसके बाद ही वो आई। शूर्पणखा रावण की बहन है। उसके पति की हत्या रावण ने ही की थी। ये विधवा है। शूर्पणखा का अर्थ आप जानते हैं, जिसके नाखुन सूप जितने बड़े हैं। ये ही पाश्चात्य और पूर्व का भेद है। ये भारतीय परंपरा और राक्षसी परंपरा का भेद है। भारत की माताएं नाखुन छोटे और बाल लंबे रखती थी। पाश्चात्य में नख लंबे, बाल छोटे! मेरा मानना है, सत्संग नहीं हुआ राम-लक्ष्मण के बीच में और एक प्रकार की आध्यात्मिक जागृति नहीं हुई तब तक शूर्पणखा नहीं आई लेकिन ये गहन चर्चा से 'भक्तियोग' का माहौल बना तब शूर्पणखा आई। इसका

मतलब ये हुआ, आदमी जब ज्ञान को, वैराग्य को, भक्ति को उपलब्ध हो जाता है, तभी आसुरीवृत्ति हमारी जीवन की पंचवटी में विक्षेप करती है। जो जागता है उसके भाग्य में रोना होता है। जो सोया हुआ है, बेहोश है उसके भाग्य में क्या है? सब खतम! जिसे ज्ञान मिल गया, कुछ प्रकाश मिल गया, उसके लिए ही विक्षेप आता है।

शूर्पणखा को कई रूप में संतों ने देखा। एक अभिप्राय तो ये रहा कि वो तात्त्विक रूप में आसक्ति है। जब जीवन में अनासक्ति का स्थापन होता है, तभी ना तभी हमें आसक्तियां डिस्टर्ब करने आ जाती है। दूसरा अर्थ है, प्रवृत्ति। उसका हृदय दुष्ट है, वह सर्पिनी जैसी है। सर्प से ज्यादा विष सर्पिनी में होता है। पंचवटी में राम-लक्ष्मण को देखकर वो बिकल हुई, इतने सुंदर पुरुष! सुंदर पुरुषों को प्राप्त करने वो आती है लेकिन उसका रूप तो भीषण है। ये मायावी राक्षसी थी। उसने सुंदर रूप लिया और आई। रामजी को कहा, मैंने दुनिया में तुम्हारे समान पुरुष नहीं देखा है। ये तो सही बात है, राम के समान कौन है? दूसरा निवेदन बिलकुल झूठ, मेरे समान कोई स्त्री नहीं है! और बात भी सही है, उसके समान कौन हो सकता है? मेरे अनुरूप पुरुष मैं खोजती रही। तीनों लोक में मेरे अनुकूल कोई न मिला इसीलिए मैं आज तक कुंआरी रही। आज तुम्हें देखकर मेरा मन थोड़ा माना, तो आप से मैं शादी करना चाहती हूं। प्रभु ने कहा, मेरे सामने जो खड़ा है, मेरा छोटा भाई, वो कुमार है। यहां कुमार का अर्थ राजकुमार है। लक्ष्मण भी विवाहीत है। लेकिन व्यवहार जगत में जिस भाषा में आदमी बात करे उसका जवाब भी उसी भाषा में देना पड़ता है। भगवान का संकेत था, तू विधवा होते हुए भी अपनेआप को कुंआरी कहती है तो मेरा भाई शादीसुधा हुआ फिर भी कुंआरा। शूर्पणखा लक्ष्मणजी के पास गई। आसक्ति का कोई ठिकाना नहीं! स्थान बदलती रहे उसका नाम आसक्ति। प्रभु ने लक्ष्मण को संकेत किया, ये दुष्ट हृदयी है, आततायी को दंड देना गुनाह नहीं है। लक्ष्मणजी ने नाक-कान काटे ये लीला है, वर्ना जागृत पुरुष के पास आसक्ति जाएगी तो नाक कटाकर ही लौटेगी। खर-दूषण के पास विलाप करती गई। कहा कि धिक् है तुम्हारे बल-पौरुष को! आप जैसे भाई हो और मेरी ये दशा? खर-दूषण ने पूछा, ये तेरे नाक-कान किसने काटे? बोली, पंचवटी में दो राजकुमार आए हैं, उनके साथ सुंदर स्त्री है; उनके छोटे भाई ने मेरे नाक-कान काटे। चौदह हजार राक्षसों की सेना पंचवटी पर चढ़ाई करती है। फिर संघर्ष होता है। खर-दूषण राग-द्वेष है। परमात्मा ने उनको मुक्ति प्रदान की है।

शूर्पणखा रावण के दरबार में आकर रोने लगी कि 'धिक् है तेरे बल-पौरुष को, ते जैसा भाई और मेरी ये दशा? रावण ने भी पूछा, तेरी ये हालत किसने की? शूर्पणखा ने प्रलोभन दिया, तेरे राजभवन में ऐसी कोई सुंदर स्त्री नहीं है, वो दो राजकुमारों के साथ आई है। रावण सायंकाल अपने कक्ष में जाकर सोचने लगा कि खर-दूषण मेरे समान अति बलवान है। ईश्वर के सिवा उसे कोई नहीं मार सकता। यदि ईश्वर ने अवतार लिया है तो मैं भजन तो नहीं कर सकूंगा क्योंकि मेरा तामस देह है। परमात्मा के साथ तो वैरवृत्ति से मैं नाता जोडूं और कभी परमात्मा के तीर से मैं मुक्ति पा लूं। दूसरे दिन सुबह मारीच के पास जाकर कहता है, तू छली स्वर्णमृग बन जा। इससे पहले भगवान राम ने योजना बना ली। लक्ष्मणजी कंद-मूल-फल लेने बाहर गए हैं तब जानकीजी को कहा, 'देवी, मेरे अवतार का आख़िरी पड़ाव है। मैं ललित नरलीला करना चाहता हूं। आप मेरे संग रहेगी तो मैं राक्षसों को नहीं मार पाऊंगा, और न आप राक्षसों को मरने देगी क्योंकि आप मातृ है। इसीलिए आप अग्नि में समा जाईए। जानकीजी अग्नि में समा गई। आगे की चर्चा कल करेंगे।

कल की कथा के समापन में राम प्रागट्य का उत्सव मनाया। जैसे कौशल्या ने एक पुत्र को जन्म दिया वैसे कैकेयी ने एक पुत्र को और सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। रामनवमी के दिन राम का जन्म हुआ वो उत्सव एक महीने तक चला और लोगों को लगा कि रात होती ही नहीं। चारों भाईओं का नामकरण संस्कार करने के लिए वशिष्ठ आदि संतगण पधारे। कौशल्या की गोद में खेलते राम को देखकर वशिष्ठजी ने कहा, जो बालक सुख का खजाना है, जिसका नाम लेने से दुनिया को विराम मिलेगा, आराम मिलेगा उस बालक का नाम मैं राम रखता हूं। कैकेयी के अंक में खेल रहा बालक वशिष्ठजी ने कहा, राम के समान वर्ण, स्वभाव है जो पूरी दुनिया का पोषण करेगा, किसीका शोषण नहीं करेगा, सब को भरेगा इसीलिए मैं इस बालक का नाम भरत रखता हूं। उसके बाद सुमित्रा के अंक में दो बालक उसमें शत्रुघ्न का नाम रखते हुए वशिष्ठजी ने कहा, जिसका नाम लेने से शत्रुता मिट जाएगी इसका नाम शत्रुघ्न रखता हूं। ये बालक जो समस्त लक्षणों का धाम है, शेष नारायण के रूप में पूरे ब्रह्मांड का आधार है, इसका नाम मैं लक्ष्मण रखता हूं।

मेरी व्यासपीठ कायम कहती रही, चार भाईओं का नाम रखा गया, ये हमारे जीवन का संदेश है। हम 'राम-राम' जपते हैं ये महामंत्र है। तुलसी कहना चाहते हैं, दूसरा पुत्र जो भरत है उसे स्मरण में रख के राम-राम बोले। भरत का अर्थ है भरना। रामनाम लेनेवाले समाज का पोषण करे। तीसरा पुत्र शत्रुघ्न है, इसका अर्थ व्यासपीठ करती है, दुनिया दुश्मनी रखे तो रखे लेकिन हमारे मन में दुश्मनी नहीं आनी चाहिए। ये रामनाम का अर्थ है। रामनाम जपनेवाला सब का आधार बने। तेजस्वी गरीब छात्रों की फ़ीस भरके आधार बने, भूखे को भोजन दे या अन्नक्षेत्र में दान दे, हमारी औकात के अनुसार। वशिष्ठजी ने चार पुत्रों का नामकरण करके कहा, राजन्, ये तुम्हारे चार पुत्र नहीं, वेदों के मंत्र है। यज्ञोपवित संस्कार हुआ। गुरु के आश्रम में चारों भाई पढ़ने गए। अल्पकाल में पढ़ाई करके लौटे। गुरु के आश्रम में जो वेद, उपनिषद पढ़े वो अपने जीवन में उतार रहे हैं। अपने समवयस्कों के साथ सरजू के तट पर राम खेलने जाते हैं। राम का शील है कि छोटे से प्यार करते हैं, समवयस्कों से मैत्री करते हैं और बुज़ुर्गों को प्रणाम करते हैं।

एक बार विश्वामित्र महाराज का यज्ञ मारीच-सुबाहु आदि विफल करते थे इसीलिए दशरथजी से दो पुत्रों की मांग की। हमारे देश का साधु-संत किसी सम्राट से संपत्ति नहीं मागते थे। मागे तो भारतीय संस्कृति के लिए संतति मागते थे। राम-लक्ष्मण सब का आशीर्वाद लेकर निकल पड़े हैं। रास्ते में ताड़का को एक ही बाण से दिव्य गति प्रदान की। दूसरे दिन यज्ञ की रक्षा के लिए खड़े हो जाते हैं। मारीच आया तो भगवान ने उसे बिना फणे का बाण मारकर शतजोजन फ़ैंक दिया। सुबाहु को अग्नि के बाण से जलाकर भस्म कर दिया। आसुरीवृत्ति का विनाश करके, यज्ञसंस्कृति का रक्षण करके भगवान कुछ समय वहां रहे। विश्वामित्रजी ने कहा, मेरी इच्छा है, जनकपुर में धनुषयज्ञ हो रहा है। आप कहे तो हम संग चले। रास्ते में अहल्याजी की कथा विश्वामित्र ने सुनाई। 'महाराज, ये गौतम पत्नी अहल्या पापवश नहीं, श्रापवश है। आपकी चरणधूलि चाहती है।' भगवान राम ने चरणधूलि का स्पर्श कराया और एक क्रांति हुई। परमात्मा की चरणरज पाते ही अहल्या में जीने का हौंसला आया। मनभावन वरदान प्राप्त करके अहल्या पतिलोक की ओर गति कर गई। मेरी व्यासपीठ कहती रहती है, समाज को केवल विचारक की जरूरत नहीं है, उद्धारक की भी जरूर है। उद्धारक के बाद स्वीकारक की जरूर है। कृष्णावतार में ये बहुत बड़ा काम हुआ। सोलह हजार बंदी स्त्रीयों का उद्धार करके स्वीकार किया। भूल किसीसे भी हो सकती है। हम पांचभौतिक शरीरवाले हैं। दीक्षित दनकौरी के शे'र हैं-

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

●

लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

अहल्या का प्रकरण हिंमत देनेवाला प्रकरण है। युवा भाई-बहन, छोटी-बड़ी भूल हो गई तो जीवन से हारने की जरूरत नहीं, अयोध्यावाले राम को नंगे पैर तुम्हारे पास आना पड़ेगा।

उसके बाद गंगा के तट पर प्रभु विश्वामित्रजी से पूछते हैं, ये कौन नदी है? बानी पवित्र करने के लिए विश्वामित्र ने गंगा अवतरण की कथा सुनाई। मैं व्यासपीठ पर से कहूं, गंगा शुद्ध रहे ऐसा सब अपनी-अपनी ओर से प्रयास करें। प्रभु आगे बढ़े। जनकपुर पहुंचे। जनकजी विश्वामित्र को मिलने आए और राजकुमारों को देखते ही जनकजी कहते हैं, ये कौन है? मैं विदेह हूं, मुझे किसीका रूप आकृष्ट नहीं कर सकता। जैसे चांदनी में चकोर लग जाए वैसे इन बालकों में मेरा मन क्यों खिंचा जा रहा है? विश्वामित्रजी परिचय देते हैं। ऋषि-मुनिओं के संग राम-लक्ष्मण जनकपुर में 'सुंदर सदन' में ठहरे हैं। सब के साथ राम-लक्ष्मण विश्वामित्र ने भोजन किया और फिर विश्राम किया। आप भी अब भोजन करे और विश्राम भी करे।

सत्य क्षण-क्षण क्या त्रिकाल अबाधित है। सत्य कभी नहीं बदलता लेकिन सत्य का उपासक क्षण-क्षण बलदता है। सूरज कभी नहीं बदलता, देखनेवाले बदलते हैं। बिलग-बिलग मुल्क में बिलग-बिलग रूप में सूरज दिखाई देता है। सत्य के उपासकों को बदलते रहना चाहिए। वो सिकुड़ न जाए। आप यदि 'रामचरित मानस'रूपी सत्य के पक्के उपासक है, तो ये कभी बदलेगा नहीं क्योंकि ये सत्य है। लेकिन इसमें जो सत्य है, वो 'कुर्रान' में है कि नहीं, वो देखो। 'कुर्रान' में जो सत्य है वो 'गीता' में है कि नहीं, वो भी देखो। 'गीता' में जो सत्य है वो 'बाईबल' में है कि नहीं, वो भी देखो। साधक को बदलना चाहिए। जो बदलता नहीं वो गंदा हो जाता है।

मानस-अरण्यकांड : ८

लीला में अभिनय होता है, चरित्र में जीवन जीना पड़ता है

सात सोपान का ये सद्ग्रंथ 'रामचरित मानस', इनमें से 'अरण्यकांड' की चर्चा केन्द्रस्थ है। जिसके बारे में आप और हम मिलकर के संवादी सूर में सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। हमारे यहां भगवान जब अवतार लेते हैं तब दो शब्द प्रयुक्त किये जाते हैं। कई लोगों को लगता है कि अवतारवाद ही गलत है। हमारे गुजरात में बहुत बड़े क्रांतिकारी संत स्वामीजी महाराज का भी मानना है कि अवतारवाद ठीक नहीं। सबकी अपनी-अपनी राय है। यदि हम ईश्वर को प्रभु, सर्वसमर्थ, 'कर्तुम्-अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम्।' जिसको हम समर्थ कहते हैं वो कुछ भी कर सकता है। वो निराकार से साकार, नराकार हो सकता है। लेकिन तब दो शब्द प्रयुक्त करते हैं। एक, 'लीला'; दूसरा 'चरित्र'; लीला और चरित्र दोनों में थोड़ा मौलिक भेद है।

मेरी खुशी ये है कि अभी जो रामकथा की दो पुस्तिकाएं, 'मानस-गोदावरी' और 'मानस-करुणानिधान' व्यासपीठ के द्वारा प्रसाद के रूप में लोकार्पित हुई; उस पुस्तिका में ऐसे मुद्दे जो प्रसंगों का सार है उसको विशेषरूप में संपादित किया जाता है। हमारे परमस्नेही नीतिनभाई वडगामा अपने विवेक से, अपनी विवेकशील लेखनी से, अपनी टीम के साथ केवल सेवाभाव से सेवा करते हैं। ये प्रसाद के रूप में बांटी जाती है। उसमें कथा के प्रसंग, कथा का मूलभाव ये तो है ही, कभी-कभी ये पुस्तिका मेरे हाथ में आती है तो फिर उसकी तात्त्विक-सात्त्विक जो पृष्ठभूमि है वो मैं स्वयं पढ़ता हूं और मेरी स्मृति में सारी बातें आती है। जिसकी मैं प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

लीला में अभिनय होता है, चरित्र में जीवन जीना पड़ता है। ये मौलिक अंतर है। राम जब लीला करते हैं तब वो अभिनय कर रहे हैं। जैसे जानकी का अपहरण होता है और राम ज़ार-ज़ार रोते हैं, तो ये अभिनय है। जानकी अग्नि में समा जाती है ये लीला है। इसीलिए गोस्वामीजी शब्दप्रयोग करते हैं, 'मैं कछु करब ललित नरलीला।' मैं कुछ विशेष अभिनय लोकमंगल के लिए करने जा रहा हूं। क्योंकि परमात्मा के रूप में वो समस्त विकारों से मुक्त है। वो अभिनय करते हैं। जैसे कृष्णलीला। आज भी कृष्णलीला होती है। तो हम कृष्ण थोड़े हैं? हम उसका अभिनय करते हैं। रामलीला का इतना मंचन होता है। तो हम राम तो नहीं है, राम का अभिनय कर रहे हैं। चरित्र तो रामने जीया, कृष्ण ने जीया। तो गोस्वामीजी 'अरण्यकांड' में ये शब्द प्रयोजित करते हैं, अब परमात्मा के पावन चरित्र को सुनिए। और फिर इसी चरित्र की धारा में भगवान लीला के रूप में थोड़ा अभिनय कर लेते हैं। इसीलिए भगवान क्यों रोये? क्या भगवान को पता नहीं था? कल ही मेरे पास एक प्रश्न था कि भगवान सर्वज्ञ है तो क्या परमात्मा को खबर नहीं थी, मारीच मृग बनके आया है, नकली है? भगवान को एक ओर रख दो यार! एक सामान्य आदमी को भी पता होता है कि सोने का मृग कभी नहीं होता। स्वर्णवर्ण का हो सकता है, लेकिन कांचनमृग? सोना जड़ है। सोना जब लक्ष्मी बने तब चेतन है। मेरी समझ में पैसे वो है, जो बहुत सरलता से मिल जाते हैं और खर्च करने में बहुत मुश्किल पड़ती है। लक्ष्मी वो है, जो बहुत मेहनत से मिलती है और सरलता से लोकोपयोगी कार्य में उसका सद्उपयोग करते हैं। पुराण में लक्ष्मी की प्राप्ति कितनी मेहनत के बाद हुई है! सुरासुर मिलकर के क्या-क्या योजना बनी और इतने मंथन के बाद लक्ष्मी निकली। लक्ष्मी मिली पुरुषार्थ से लेकिन भगवान विष्णु के पास आई तो सबकी पात्रता के अनुसार सबके घर लक्ष्मी भेज दी। कहने का अभिप्राय है कि अर्थ और लक्ष्मी में जो मौलिक भेद है वैसे चरित्र और लीला में भी मौलिक भेद है।

चरित्र में जी के दिखाना पड़ता है। गांधीजी ने आत्मकथा लिखी तो प्रस्तावना में खुद लिखते हैं, आत्मकथा लिखने का मेरा कोई इरादा नहीं है। मैं तो जिस तरह जीया हूं, मेरा जीवन सबके सामने पेश करना चाहता हूं कि मैंने 'सत्य का प्रयोग' नाम रखा; इसमें मेरे जीवन का प्रयोग है। मेरा जीवन ही मेरा संदेश; ये कहना बहुत मुश्किल है। सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश के मस्तक पे रहना ये आसान उपलब्धि नहीं है, ये चरित्र की उपलब्धि है। गांधीजी ने लिखा है, मेरा जन्म वैष्णव संप्रदाय में हुआ। मैं छोटा था तो माँ मुझे हवेली में ले जाती थी लेकिन हवेलीवाली बात मेरे जीवन को कभी प्रभावित नहीं कर पाई। और अपने जीवन का सच स्पष्ट अंकित करनेवाले गांधी लिखते हैं, इन स्थानों का वैभव मुझे अच्छा

नहीं लगा और कई-कई नीति-रीति भी मेरे लिए सह्य नहीं है। मेरे पर सबसे ज्यादा प्रभाव है तो वो मेरे घर में उम्रलायक माताजी जो नौकरानी का काम करती थी वो रंभा का प्रभाव है। यहां चरित्र और जीवन दर्शन है। गांधी कहते हैं, बचपन में मुझे भूत-प्रेतों से बहुत डर लगता था तो मैं कांप जाता था, तब रंभा मुझे बताती थी कि बेटा, जब डर लगे तब 'राम राम' बोलना। तब से मेरी राम नाम निष्ठा दृढ हुई। गांधी कहते हैं कि मुझे रामनाम पर निष्ठा है, उससे ज्यादा निष्ठा रंभा पर है। मुझे हरि पर निष्ठा है, उससे ज्यादा जिसने हरि का परिचय करवाया वो बुद्धपुरुष पर ज्यादा निष्ठा है। ये चरित्र का स्पर्श है।

गांधी कहते हैं, दूसरा प्रभाव ये पड़ा कि मेरे गांव में राम मंदिर है, मंदिर का पूजारी जो जिसका नाम लाधा महाराज था, वो रोज रात को 'रामचरित मानस' की कथा कहते थे। सुंदर चौपाईयां, दोहा, सोरठा गाए। तब से रामनाम ने मुझ पर प्रभाव डाला। मैं प्रणाम करूं उस पूजारी को। मोहनदास पूतलीबाई की कूख से पैदा हुआ लेकिन महात्मा मोहन का पता नहीं ऐसा बालक तो रामनाम से मिला। इसीलिए वो चरित्र है। अभिनय एक कला है। ऐसा अभिनय करते हैं कि आदमी ओतप्रोत हो जाए। चरित्र की ऊंचाई अभिनय में नहीं होती। गोस्वामीजी इस ग्रंथ नामकरण करते हैं-

राम चरित मानस एहि नामा।
सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा।।

अभिनय शाश्वत नहीं होता, वो काल अवधि में होता है। अभिनय केवल मंच का प्रदर्शन है, जीवन का दर्शन नहीं। जीवनदर्शन है चरित्र। जो गांधी ने दिया, विनोबा ने दिया, कृष्ण ने दिया। लीला तो मंच पर आती है, चरित्र तो पृथ्वी पर जीना पड़ता है। गांधीजी कहते हैं, मेरे पिता के पास जैन साधु भी आते थे। मेरी माँ उनको भिक्षा देती थी। तो उनके साथ सत्संग होता था। बौद्ध लोग भी आते थे। ये सब बातें गांधीजी ने लिखी। ये गांधीचरित्र है। ठीक है, ऊंचे चरित्रवालों के बारे में नाटक लिखे जाए, उसका मंचन किया जाए, ये उनकी चरित्र की महिमा का गायन है। लेकिन अभिनय तो अभिनय है। गोस्वामीजी घोषणा करते हैं, अब प्रभु के पावन चरित्र को सुनो।

तो 'अरण्यकांड' में कुछ लीला और चरित्र मिले हुए हैं। लीला का दर्शन करे, चरित्र को श्रवण करना होता है। उसकी लीला देखने जाए तो बड़े-बड़े फंसे हैं! सती लीला देखने गई तो फंसी कि काहेका राम? भगवान की लीला कि लंका ने रणमेदान में जब नागपाश ने बांध लिया, नारद ने गरुड को कहा, तू जा, तेरा खोराक सर्प है। भगवान को बंधन से मुक्त कर। और गरुड रणमैदान में आकर भगवान जो नागपाश में बंधे हुए हैं, उन सापों को गरुड खाकर भगवान को मुक्त कते हैं। लेकिन राम की ये लीला ने गरुड के मन में वहम डाल दिया कि ये कैसा ब्रह्म है जो नागपाश में बंध जाए? जिसकी माया में पूरी दुनिया बंधी है तो नागपाश में बंध गया? ये काहे का ब्रह्म? लीला ने वहम प्रगट कर दिया! गरुड राम को मुक्त करके लौटा तो जरूर लेकिन संशय लेकर लौटा। लीला से संदेह हो सकता है, चरित्र श्रवण से-

गयउ मोर संदेह सुनेउ सकल रघुपति चरित।

वो ही गरुड कहता है, जो लीला देखकर संदेह हुआ था, वो ही लीलाधर का चरित्र एक बुद्धपुरुष से सुना तो मेरा संदेह गया। कोर्ट में आंखों से देखा उस पर न्याय आधारित होता है, वहां देखने की महिमा है। भक्ति में श्रवण की महिमा है। गुरुनानक कहते हैं, 'सुणिये दु:ख पाप का नाशु।' आपको कोई कहे कि कथा सुनते-सुनते क्या फायदा? तो उसकी सुनना मत। उन्हें पता नहीं कि बीज जो बोया जाता है वो कभी विफल नहीं जाता, यदि बीज अच्छी गुणवत्ता का है तो। गांधी ने कहा, मेरे मन में रामनाम का बीज किसी शास्त्र ने नहीं बोया था, रंभा ने बोया था। गांधी स्वीकार करते है कि मैं रामनाम बहुत जप नहीं रहा था, लेकिन बीज नहीं जला था।

श्रवण की बहुत महिमा है। इसीलिए कल जो 'अरण्यकांड' की बात आई थी 'श्रवणादिक नव भक्ति दृढ़ाई।' वेदांत भी श्रवण से ही शुरू होता है। श्रवण, मनन, निदिध्यासन। तो इस चरित्रधारा में अब लीला आ रही है। लक्ष्मणजी कंदमूल फल लेने बाहर गए हैं। यहां दशानन मारीच को तैयार करके जानकी के अपहरण के लिए प्रवृत्त हुआ। विश्वामित्र के यज्ञ में बिना फणे के बाण से जो लंका के समंदर के तट पर गिरा था। मारीच के पास रावण गया और निवेदन करता है कि तू स्वर्णमृग बन जा। बोला, दो तपस्वी आए है, अयोध्या के राजकुमार है। पंचवटी में निवास करते हैं। उनके पास बहुत सुंदर स्त्री है। उसके छोटे भाई ने बहन शूर्पणखा का अपमान किया है। खर-दूषण को इसने निर्वाण दिया। मुझे इस सुंदरी का अपहरण करना है। तू स्वर्णमृग बन जा। मारीच ने कहा, रघुकुल नंदन राम? राम को आपने कभी देखा है? उसके बारे में सुना है?

तुम्हारी दृष्टि में राम के बारे में क्या सोच है? रावण ने कहा, कोई अगुण होगा, संस्कार नहीं होगे तो बाप ने बन में भेज दिया है और वो वन में घूम रहा है। मारीच ने सोचा, राम का बिना फने का बाण लगा तो ये दशा हुई, तो अब जो बाण लगेगा उसमें मेरी मौत होगी ही। जाउंगा तो राम मारेगा, न जाउं तो रावण मारेगा। मृत्यु ध्रुव है मेरे भाई-बहन। हमें और आपको अपने चरित्र का चिंतन करते-करते वरण करना है कि राम के हाथ मरना है कि हराम के हाथ? चंद घटनाएं घटी है विश्व में, जहां मृत्यु रुकी हो। या तो मृत्यु के द्वार से नचिकेता नामक बालक, या तो सती सावित्री सत्यवान को लौटा आई हो। लेकिन अपवाद कभी सिद्धांत नहीं बन सकता। यहां एक नीतिवाक्य आया है, जो हम जैसे संसारीओं के लिए मार्गदर्शक है। मारीच ने सोचा, रावण से बिरोध करूं तो मौत ही होगी। दुनिया में समझदार आदमी को नव व्यक्ति से विरोध नहीं करना चाहिए।

सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी।
बैद बंदि कबि भानस गुनी।।

एक, शस्त्री; जिसके पास शस्त्र है, उससे बिरोध न करे। शस्त्री नि:शस्त्री को मार सकता है। इस बात को मैं इतनी उंचाई प्रदान नहीं करूंगा, क्योंकि भले हाथ में हथियार न हो। पर भीतर में सत्य हो तो सामनेवाला कितना भी शस्त्री क्यों न हो, ज्यादा से ज्यादा वो देह को मारेगा, सत्य को नहीं। कल ही मुझे ये बात मिली कि आसाम के पास विनोबाजी का आश्रम है और चाईना के साथ संघर्ष हुआ उस समय वहां बहुत धर्मीलोग रहते थे, इस्लाम, हिन्दु, बौद्ध, ईसाई रहते थे। हमला हुआ तब सब लोग भाग गए। इस आश्रम की विनोबा से दीक्षित कुछ बहनलोग भागी नहीं। और आज ये आश्रम है। शस्त्री तो फिर भी अच्छा है, लुच्चे आदमी जरा भी अच्छे नहीं है। जब आदमी के पास शस्त्र और लुच्चाई दोनों हो तब अल्लाह बचाए! कुछ शस्त्रधारी कनिंग होते हैं।

गांधीजी को जिसने गोली मारी वो शस्त्री था। गांधी मरा? वो तो ज्वलंत चरित्र है, युगो तक जीता रहेगा, अमरत्व प्राप्त है इस आदमी को। कोर्ट में, एरपोर्ट मैं, दफ्तरों में उनकी छबी देखता हूं तो अच्छा लगता है। हम जैसों के लिए ठीक है कि शस्त्रधारी से समाधान करो, विनय करो और संघर्ष न करो। बाकी जहां नीति है, प्रामाणिकता है वहां क्या?

दूसरा, मर्मी; हमारे अंदर के रहस्य और भेद को जानते हैं उसके साथ विरोध न करे, वर्ना सब मर्म खोल देंगे। तीसरा, प्रभु; परमतत्त्व, समर्थ हो, स्वामी हो उसके साथ विरोध न करे। परमतत्त्व है राम। उसको कोई हरा नहीं पाया, उसके सामने रावण हारा। मारीच ये कहना चाहता है कि रावण! ऐसे परम के साथ विरोध अच्छा नहीं। और खुद भी सोचता है कि प्रभु से विरोध अच्छा नहीं। चौथा, धनी; धनवान से विरोध नहीं करना। ये व्यवहार की बात है। आज सब गुण धन में आ गए हैं कलिप्रभाव में के कारण। धन का दुरुपयोग करके वह कुछ भी कर सकता है। वो सत्य को हरा तो नहीं पाएगा लेकिन थोड़ा मुश्किल में डाल सकता है। नवाज़ देवबंदीसाहब का शे'र है-

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं!

धनी से लिप्त होने की या उपेक्षा करने की जरूरत नहीं, प्रमाणित अंतर रखो। पांचवां, शठ, जिसमें मूढता भरी हो उसके साथ बिरोध न करे। धूर्त उसके साथ विरोध करेंगे तो दुनिया कहेगी, वो तो शठ है, तू क्या है? छठ्ठा, वैद्य-डोक्टर; वैद्य-डोक्टर-हकीम से विरोध न करो। वो जो कहे उसको मानो, इलाज करवाओ। मैंने वैद्यों की कुछ श्रेणियां बनाई है-ऊंटवैद्य, लूंटवैद्य, झूठवैद्य, खूंटवैद्य-आक्रमकवैद्य! अध्यात्म जगत का वैद्य है सद्गुरु।

सद्गुरु बैद बचन बिस्वासा।
संजम यह न बिषय कै आसा।
सद्गुरु ज्ञान बिराग जोग के।
बिबुध बैद भव भीम रोग के।।

शारीरिक रोग के बैद अलग होते हैं। तुलसी कहते हैं, कुछ मानसिक रोग भी है, जिसका पूरा चित्रण 'उत्तरकांड' में है, जहां बैद है सद्गुरु। सद्गुरु के बचनों पर विश्वास रखना ही मानसिक रोग मिटाता है। गुजराती में कहते हैं-

वैदघरनां वाटेलां इ कोईथी नहीं समजाय,
भाई, एने भरोसे रहेवाय रे.

कुछ चीज ऐसी होती है कि उस पर भरोसा ही रखा जाता है।

सातवां, बंदी; बंदीजन से विरोध न करे। बंदी कवि-बंदी कविओं से विरोध न करे। सर्जकों से विरोध न

करे। कवि परमात्मा का एक नाम है। यहां ये भी अर्थ हो सकता है कि परमात्मा से विरोध न करे। कवि ये संत का लक्षण भी है। तो हम जैसे सामान्यजीव संतों से विरोध न करे। सर्जकों को सन्मानित किया जाए। आठवां, भानस; रसोई करनेवाले से विरोध नहीं करना चाहिए। नौवां, समझदार व्यक्ति गुणवान का विरोध न करे।

मारीच ने सोचा, इन नव के सामने विरोध नहीं करना चाहिए। और रावण के सामने विरोध करना ठीक नहीं है। रावण में इनमें से बहुत सी वस्तु है, रावण शस्त्री है, मर्मी है, स्वामी है, शठ भी है, धनवान है, बैद है, स्वयं बैद नहीं है, लेकिन दुनिया का सर्वश्रेष्ठ वैद सुषेण उसकी नगरी में रहता है। रावण कवि है, जिसने अद्भुत शिवतांडव की रचना की। मारीच शायद ये कह रहा है कि हे रावण! ये नवों चीज रघुनाथजी में है, इससे विरोध न कर। राम रणरंगधीर है, सारंगपाणि है। 'भगवद्गीता' में कृष्ण कहे, अर्जुन, धनुर्धारीओं में राम मैं हूं। राम शस्त्री है। राम मर्मी है। 'जग पेखन तुम देख निहारे। बिधि हरि संभु नचावनिहारे।' वाल्मीकि कहते हैं, ब्रह्मादि देव भी आपके मर्म को नहीं जानते और आप सबके मर्म जानते हैं। अखिल अन्तरात्मा के नाते आप घट-घट की जानते हैं। आप मर्मज्ञ है। प्रभु; प्रभुता है ही राम। शठ; राम शठ नहीं है। धनी; राम के समान संपदावान कौन? दशरथजी के धन को देखकर कुबेर लज्जित होता था। बैद; राम के समान कौन बैद? रामनाम औषधि है। नामी वैद है। 'जासु नाम भव भेषज।' उसकी रामकथा बैद है। कवि; कवि ब्रह्मा का एक नाम है। 'रामचरित मानस' में राम कई बार कवि बन गए हैं। भानस; भगवान पूरे विश्व को सुस्वादु बनाकर हमारे सामने रखते हैं। गुणवान; राम के समान गुणवान कौन है? सभी गुणों राम में है।

दोनों ओर से मृत्यु दिखाई दी तब मारीच ने निर्णय किया कि भगवान राम के चरणारविंद देखकर मरूं ये मेरा सौभाग्य है। मारीच को पंचवटी में लेकर जब रावण आता है तब मारीच की सुंदर मनोवृत्ति तुलसी ने दिखाई। मारीच सोचता है, मैं कितना भाग्यवान हूं? हिरन बनकर जा रहा हूं। राम मुझे मारने के लिए मेरे पीछे दौड़े। ब्रह्मादिक देवता, बड़े-बड़े ऋषिमुनि जिसके पीछे दौड़ते हैं और पकड़ नहीं पाते वो परमात्मा मेरे पीछे दौड़ेगा, वो भी धनुष्यबाण लेकर! हिरन का स्वभाव होता है कि वो मुड़मुड़कर देखे। तो हिरन के रूप में भी मुड़मुड़कर राघवेन्द्र की झांकी करूंगा। आज मेरे समान विश्व में कोई धन्य नहीं है। सीता अपहरण के लिए ये योजना बनी। अब भगवान जो योजना बनाते हैं वो केवल अभिनय है। प्रभु ललित नरलीला करते हैं।

तुम्ह पावक महुं करहुं निवासा।
जो लगि करौं निसाचर नासा।।

राम कहते हैं, जानकी, जब तक मैं निशाचरों का निर्वाण न कर दूं तब तक आप अग्नि में समा जाए। और जानकीजी भगवान के चरणारविंद को हृदय में धारण करके अग्नि में समा जाती है। लक्ष्मणजी फल-फूल लेकर आए। सीता-राम को प्रणाम किया, तब तुलसी ने लिखा, 'लछिमनहुं यह मर्म न जाना।' लक्ष्मणजी मर्म न जान पाए कि ये असली सीता है कि प्रतिबिंब है? जो मर्म जागृत लक्ष्मण भी न जान पाया। तो हमारे जैसे मोह और ममतावाले लोग कैसे समझ पाएंगे? केवल वो ही मर्म जान सकेंगे जिसको तुम जानना चाहो।

प्रभु यहां मृग के पीछे दौड़े क्योंकि एक प्रेमी की इच्छा पूरी करनी है। मारीच प्रेमी है। दूसरा, राम ने सोचा, पंचवटी से मेरा जाना जरूरी है। जब तक मैं रहूंगा, रावण नहीं प्रवेश कर पाएगा। जीवन की पंचवटी में जब तक रामतत्त्व है, तब तक हरामतत्त्व प्रवेश नहीं कर पाएगा। राम ने कहा, ऐसी लीला करूं कि लक्ष्मण भी यहां से निकल जाए। ये प्यारी योजना है। राम ने लक्ष्मण को भी नहीं कहा, खुद गए, लेकिन जाते-जाते लक्ष्मण को कहा, राक्षस लोग वन में घूमते हैं, तू सीता की रखवारी करना।

मारीच को निर्वाण देने के लिए प्रभु उसके पीछे दौड़े। भगवान को भी प्रेमी के पीछे दौड़ने में आनंद आता है। निश्चित अंतर पर पहुंचे। भगवान ने तीर मारा। मारीच गिरता है तो पहले बोलता है, 'हे लखन!' फिर अंदर 'राम' बोला। मारीच ने तीन बार 'लखन' बोला और जानकी ने आवाज़ सुनी। लखनजी को कहा, जल्दी जाओ, आपके भाई संकट में है, वो आपको पुकार रहे हैं। आज पहली बार माँ के बचन सुनकर लक्ष्मण को लगा कि ये मेरी माँ क्या बोल रही है? मारीच, 'हे लखन', बोला, उसमें सीता को राम की आवाज कैसे सुनाई दी? बड़ी ललित नरलीला है। मुझे ऐसा लगता है, जिसके राम का बाण लगता है, वो रामरूप हो जाता है। मारीच अब रामरूप हो गया इसीलिए उसकी आवाज़ में राम की आवाज़ सुनाई दी। राम कहते हैं, मेरा दर्शन करता है वो मेरा स्वरूप पा लेता है। तो ये आदमी ने तो दर्शन भी किए और तीर भी उसके हृदय में

लगा है तो स्वाभाविक है, व्यक्ति रामरूप बन गया है। कभी जानकी के साथ लक्ष्मण दलील नहीं करते। आज ऐसा समय आया कि बोलना पड़ा कि माँ, मेरे प्रभु कभी संकट में नहीं होते। भृकुटिभंग में जो काल को खा जाए, वो कभी विपत्ति में हो सकता है? मुझे आपकी सुरक्षा सौंपी है। आज्ञा उल्लंघन करके कैसा जाऊं? जानकी ने कुछ मर्मवाक्य सुना दिए। भगवान की प्रेरणा से लछिमन का मन डोल गया अथवा तो मेरे दादाजी मुझे बताते थे कि यहां जानकीजी वो मर्म बोल गई कि सीता अग्नि में समाई। प्रतिबिंबित रूप रखा था। आज जानकी ने कह दिया कि भैया, आप जा सकते हैं। मैं असली सीता नहीं हूं। मेरी रक्षा तो अग्नि कर रहा है। अग्नि जानकी का ससुराल है। लक्ष्मण दौड़ते-दौड़ते राम के पास पहुंचने में है और शून्यता देखकर संन्यासी का बेश लेकर रावण आया। 'भिक्षा देहि भवतु।' रावण ने कहा। जानकीजी मायावी प्रतिबिंबित रूप है। दूसरे अर्थ में कहूं तो रावण अग्नि में हाथ डालने आया है। रावण बोलता रहा तब जानकी को लगा कि ये संन्यासी नहीं है। संन्यासी को अग्नि को छूने की मना है। अग्निरूपा सीता को लगा कि ये संन्यासी नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि कोई आदमी मायावी है तो रूप बदल सकता है, आवाज़ नहीं बदल सकता। रावण की आवाज़ संन्यासी की नहीं थी, 'बोलेऊ बचन दुष्ट की नाई।' सीता ने कहा, संन्यासी तो हम रघुवंशीयों के लिए इष्ट है, ये तो दुष्टबचन बोल रहा है। थोड़ा संघर्ष हो गया और जानकीजी उस समय बाहर आती है और क्रोधित रावण ने जानकी को उठाकर रथ में बिठा दिया और भागा।

उसी समय जटायु एक अबला का आक्रंद सुनकर, पंख फैलाकर रास्ता रोकता है। रावण-जटायु का द्वंद्वयुद्ध शुरू होता है। आखिर में जटायु ने चोंच मारमारके रावण के देह को क्षत-विक्षत कर दिया। रावण मूर्छित हो गया तो जटायु को लगा कि उसकी आंखें जो दुनिया को देखकर विकारी बनती है उसे फोड दूं। लेकिन न आंखों में चोंच मारी, न दिल में चोंच मारी। जटायु रुक गया। उसने सोचा कि जो मूर्छित है, उस पर हम प्रहार नहीं करते। एक राम समय था जब युद्ध में भी धर्म था और आज धर्म में युद्ध आ गया है! रावण ने जटायु की पंख काट दी और राम की अद्भुत करणी स्मरण करते हुए जटायु धरती पे गिर पड़ा। किष्किन्धा नगरी में आगे ऋष्यमूक पर्वत है, वहां से रावण निकला है। रावण जानकी को अशोकवाटिका में अशोकवृक्ष के नीचे रखकर, राक्षसियों को चौकी करने का कहकर चला गया।

यहां मृग को मारकर राघव लौटे। इतने में लक्ष्मणजी आए। राम ने कहा, जानकी वहां अकेली है। मेरे बचन उल्लंघन करके तू यहां आया? हमारे कुल में बचन की महिमा है। लक्ष्मणजी ने कहा, मुझे क्षमा करना, मेरी माँ ने मुझे बाध्य किया। सब लीला है। जानकीहीन कुटिया देखकर प्रभु मानव की तरह जार-जार रोने लगे। प्रभु को रोते देखकर पशु-पक्षी रो पड़े! आक्रंद से अरण्य भर गया। सीता गई उसके बाद प्रभु एक दिन भी पंचवटी में नहीं रुके, तत्क्षण निकल पड़े। जीवन में भक्ति या भक्ति का आभास निकल जाए फिर अंदरवाला राम भी टिकता नहीं। प्रभु विरह विकल बनकर लक्ष्मण को कहते हैं, सीता के बगैर मैं नहीं जी पाऊंगा। गीधराज जटायु मिले। केवल रामदर्शन की अपेक्षा से जटायु जान टकाए हुए है। राम ने पूछा तो जटायु ने कहा, दशानन ने मेरी ये दशा की है। वो जानकी का अपहरण करके निकल गया। मेरे में जितनी क्षमता थी, मैंने मुकाबला किया, लेकिन मेरी पंख कटी गई, मैं असहाय हो गया। राम की झांकी करते-करते जटायु प्राणत्याग करते हैं। प्रभु उसको गोद में लेते हैं। प्रभु ने चिता बनाकर जटायु का अग्निसंस्कार किया। जटायु सारूप्य मुक्ति पाता है। मांसभक्षी पक्षी को ऐसी मुक्ति दी कि योगी लोग भी याचना करे तो भी नहीं मिलती।

सीताखोज करते हुए प्रभु आगे बढ़े। रास्ते में कबंध आया। भगवान ने उसको निर्वाण दिया। वहीं से भगवान शबरी के आश्रम में पधारे हैं। शबरी गुरु मतंग के वचनो पर निष्ठा रखकर बैठी है। गुरु ने कहा था कि राम तेरे द्वार पे आएंगे, प्रतीक्षा करना, रामस्मरण करना। एक बात की ओर समाज का ध्यान जाना चाहिए कि समाज के जितने श्रेष्ठ लोग थे वो राम के पास आए हैं। विश्वामित्र, जनकजी बाग में राम के पास गए। जो अधम, उपेक्षित, पतित थे इनके पास राघव स्वयं गए। शबरी, केवट, अहल्या, कोल-किरात के पास राम स्वयं गए। शबरी चरण में गिरकर बोली-

अधम ते अधम अधम अति नारी।
तिन्ह महं मैं मतिमंद अघारी।।

कुछ नासमझ लोग है जो भारत में जन्मे के बाद भारतीय संस्कृति को अनदेखा करते हैं! ये राम-शबरी के मिलन में भी कुछ सावधानी से नहीं बोल रहे हैं! इन लोगों ने अपने भीतर बैठे रामको बिना पूछे कुछ निवेदन कर दिए हैं! भगवान रामराज्य स्थापना के बाद तो कहते हैं, जब-जब अपने संस्मरण अयोध्या में कहते हैं तब कहा, मैंने कहां-कहां भोजन किए पर शबरी के फल की मीठाश कहीं ओर नहीं मिली। शबरी ने कहा, मैं किन शब्दो में आपकी स्तुति करूं? मैं अधम हूं। कितना न बोलने योग्य शब्द है ये! कोई किसीको अधम कहे तो समझ लेना कहनेवाला इससे भी ज्यादा अधम है। अधम को ही सामनेवाला अधम लगता है। राम को क्यों कोई अधम नहीं लगा? तुलसी कहते हैं, गणिका भी अधम नहीं है। शबरी कहती है, गंवार, अधम में भी अधम, जड़मति नारी, मैं कैसे स्तुति करूं? भगवान ने कहा, मैं जाति-पाति, कुल-धर्म, बड़ाई, कुछ नहीं देखता। मैं भक्ति के नाते को कुबूलता हूं।

नवधा भगति कहऊ तोहि पाहीं।
सावधान सुनु धरु मन माहीं।।

लक्ष्मणजी के पास जो भक्ति का गान किया वो श्रवणादिक शास्त्रीय भक्ति है। यहां गंवार महिला के सामने भक्ति कहनी है तो थोड़ा बदलाव किया।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

प्रामाणिक और गंभीर बनकर हम भी ये नव भक्ति कर सकते हैं। रामजी कहते हैं, पहली भक्ति है, किसी संत का संग करना। अपने जीवन में संत का संग करे तो ये पहली भक्ति है। मैं समझता हूं, संत किसको कहे ये प्रश्न खड़ा होता है। जिसमें ज्ञान की अवस्था हो, भक्ति की भूमिका हो, कर्म की स्थिति हो वो संत। ऐसे संत को मैं रूखड़ कहता हूं। विनोबाजी रूखड़ है। जो अद्भुत हो, अवधूत हो और अनुभूत हो वो रूखड़ है। कथाप्रसंग में रस ये दूसरी भक्ति। तुलसी जैसे बुद्धपुरुष के संग में हम बैठे हैं ये पहली भक्ति। आप सुन रहे हैं ये दूसरी भक्ति। गुरु के चरणकमल का आश्रय अभिमान छोड़कर करना ये तीसरी भक्ति। जो भगवान के गुण-गान कपट छोड़कर गाए वो चौथी भक्ति। कोई भी मंत्र का जाप विश्वास रखकर करना ये पांचवीं भक्ति। छठ्ठी भक्ति है, अपनी इन्द्रियों का नियंत्रण करना शील से। धीरे-धीरे अधिक प्रवृत्ति से अपनेआपको बाहर ले आना। सांतवीं भगति, पूरे विश्व को प्रभुमय देखना।

किसको पत्थर फ़ेंके केसर, कौन पराया है?
शिशमहल में हर एक चेहरा मुझ-सा लगता है।
- कैसर

'सकल लोकमां सहुने वंदे, निंदा न करे केनी रे।' नरसिंह मेहता ने कहा है। हरिमय जगत, सातवीं भगति। सपने में भी किसीका दोष मत देखना ये भी सातवीं भक्ति। दोष हमारी सातवीं भक्ति में विघ्न डालता है। हमारे प्रामाणिक पुरुषार्थ द्वारा हमें जो लाभ मिले उसमें संतुष्ट रहे ये आठवीं भक्ति। पुरुषार्थ ज्यादा करना चाहिए। लेकिन जो मिले उसमें संतोष करना।

नवम सरल सब सन छलहीना।
मम भरोस हियं हरष न दीना।।

गोत्र, वृत्ति, वाणी सब में सरलता रखना ये नववीं भक्ति। छलमुक्त सरलता हो। आख़िर में प्रभु पर भरोसा ये नववीं भक्ति। भरोसा आने के बाद न प्रसन्नता उकसाती है, न असफलता दुःख देती है।

राम कहते हैं, नवो भक्ति सरल है, पर उसमें से कोई एक करे तो भी मुझे प्रिय है। शबरी को कहा, आपमें तो नवों की नवों भक्ति दिखती है। शबरी को धन्य किया। कंद-मूल-फल लिये। शबरी योगाग्नि में अपने देह को समर्पित करके हरिपद में लीन हो गई, जहां से कभी लौटना न पड़े। शबरी का उद्धार करके शबरी के कहने पर प्रभु पंपासरोवर पधारे हैं। भगवान प्रसन्नता से बैठे हैं उसी समय देवर्षि नारद राम के पास आते हैं। वो 'अरण्यकांड' का अंतिम प्रसंग है, ये कल चर्चा करूंगा।

लीला में अभिनय होता है, चरित्र में जीवन जीना पड़ता है। ये मौलिक अंतर है। राम जब लीला करते हैं तब वो अभिनय कर रहे हैं। जैसे जानकी का अपहरण होता है और राम ज़ार-ज़ार रोते हैं, तो ये अभिनय है। जानकी अग्नि में समा जाती है ये लीला है। इसीलिए गोस्वामीजी शब्दप्रयोग करते हैं, 'मैं कछु करब ललित नरलीला।' मैं कुछ विशेष अभिनय लोकमंगल के लिए करने जा रहा हूं। क्योंकि परमात्मा के रूप में वो समस्त विकारों से मुक्त है। वो अभिनय करते हैं। जैसे कृष्णलीला। आज भी कृष्णलीला होती है। तो हम कृष्ण थोड़े हैं? हम उसका अभिनय करते हैं। रामलीला का मंचन होता है। तो हम राम तो नहीं है, राम का अभिनय कर रहे हैं।

'रामचरित मानस' का निचोड़ है सत्य, प्रेम, करूणा

बाप! नव दिवसीय रामकथा के विराम के दिन, आज कथा में उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल आदरणीय रामनायकजी पधारे हैं। आपने आकर राजपीठ की ओर से व्यासपीठ को आदर दिया ये आपका शील है। मैं आदरणीय राज्यपालजी का व्यासपीठ से आदर करता हूं, स्वागत करता हूं। वैसे तो आप अपने 'चरैवेति' जीवन में कई पद पर आसीन रहे। और कई बार व्यासपीठ के प्रति आपकी श्रद्धा और आदर के कारण आते रहे, जिसका मैं साक्षी हूं। राजपीठ का व्यासपीठ के पास जाना कर्तव्य भी तो है। और ये निभा भी रहे हैं। राजपीठ अक्सर व्यासपीठ के पास आती है। और व्यासपीठ सदैव राजपीठ का आदर करती रही। हम सब को बहुत खुशी हुई कि समय निकालकर आप आए। आपको, आप के साथ आए महानुभाव, मेरे श्रावक भाई-बहन और सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

'रामचरित मानस' के सात सोपान में से जो 'अरण्यकांड' तीसरा सोपान है, उसे केन्द्रबिंदु बनाकर उसकी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम सब मिलकर संवाद के सूर में कर रहे हैं। मैं आप सब को, पूरे राष्ट्र को बधाई देना चाहता हूं कि राम-जानकी पूरे विश्व के हैं, तो पूरे विश्व को बधाई देना चाहता हूं कि आज सीता-रामजी का 'विवाह दिन' है। मागसर शुक्ल पंचमी, 'विवाह पंचमी' है, इसीलिए सीता-रामजी के विवाह की आप सब को भूरिशः बधाई हो।

कथा के क्रम में कल हम जनकपुर पहुंचे। जहां महर्षि विश्वामित्र और मुनिगणों के संग राम धनुषयज्ञ के लिए जनकपुर आए। भगवान की ये यात्रा तीन यज्ञों की पूर्ति के लिए है। एक, महामुनि विश्वामित्र का यज्ञ; जिसमें कुछ आसुरी वृत्तियां, दुरित जो महात्मा के विश्वमंगल के लिए हो रहे यज्ञ में बाधा करते थे। राम-लक्ष्मण इस यज्ञ को सफल करने के लिए पहली बार अयोध्या से बाहर निकले, वो भी पदयात्रा के रूप में। राम की ये यात्रा बड़ी मार्गदर्शक है। रामने इसके पीछे ये भी सोचा कि मैं रथ में यदि जाऊं तो समाज के कितने यज्ञ अधूरे रह जाएंगे! समाज की कितनी उपेक्षित अहल्याओं का उद्धार कौन करेगा? और शायद अवतारों की जितनी पदयात्रा है, इनमें सर्वश्रेष्ठ पदयात्रा भगवान राघवेन्द्र की रही। इस अयोध्या से जनकपुर की पदयात्रा ने इतने परिणाम सामने ला दिए कि राम ने अपने चित्त में निर्णय कर लिया होगा कि इतने दिनों की पदयात्रा समाज में इतना परिवर्तन कर सकती है तो कुछ ऐसी घटना घटे कि चौदह साल की यात्रा का अवसर मिल जाए। वनवास के दौरान राम की चौदह साल की पदयात्रा ने रामराज्य का परिणाम हम सबको दिया।

दूसरा अहल्या की प्रतीक्षा का यज्ञ पूरा किया। हार चुकी महिला को फिर समाज में दर्जा दिया। तीसरा यज्ञ धनुषयज्ञ। महाराज जनक ने स्वागत किया। 'सुन्दरसदन' में ठहराए। सायंकाल को पूरे नगर में बात फैल चुकी थी कि महर्षि विश्वामित्र के संग अयोध्या के दो राजकुमार आए हैं। उन्हें देखने की सबसे बड़ी इच्छा राम की उम्र के जनकपुर के जो किशोर बालक थे उन्हें थी। उन्हें राम के दर्शन करने हैं पर कैसे करे? युवकों जीव है और लक्ष्मणजी जीवधर्म के आचार्य है, इसीलिए लक्ष्मणजी जीव के मन की बात जान गए। उन्होंने सोचा, ये लोग अंदर नहीं आ सकते तो राम बाहर जाए। ये बहुत सुंदर योजना है। समाज में ऐसे लोग हैं जो हमारे पास पहुंच नहीं पाते तब परमात्मा ने जिन लोगों को अवसर दिया है वो बाहर निकलकर उपेक्षित, वंचित, अभावग्रस्त जो तरस रहे हैं दीदार के लिए उनके पास जाए। लक्ष्मण के मन की बात सर्वज्ञ राम जान गए, तब राम योजना बनाकर विश्वामित्र से निवेदन करते हैं कि लक्ष्मण नगर देखना चाहता है। वो जनकपुर में पहली बार आया है; कहीं खो न जाए, इसीलिए मैं साथ जाऊं? विश्वामित्रजी ने पूछा, लक्ष्मण पहली बार जनकपुर आया है, तो आप पहले आ चुके हैं? राम मुस्कुराए कि मेरे ब्रह्मतत्त्व को क्यों खोल रहे हो? मैं तो पूरे विश्व का दृष्टा हूं। राम ने कहा, लक्ष्मण मेरी दृष्टि से नगरदर्शन करे।

युवान भाई-बहन, आप दुनिया के किसी भी कोने में जाओ, तब भारतीय होने के नाते राम की आंखों से देखो। लक्ष्मण के संग राघव निकलते हैं। राम के समवयस्क आनंद में मिथिला की माहिती देते हैं। राम को अपने घर में भी ले जाते हैं। मिथिला के उम्रवालें लोग रास्ते के किनारे पर खड़े-खड़े राम के दर्शन करते हैं। बालकलोग भगवान के श्रीअंग को स्पर्श के परमानंद ले रहे हैं। मिथिला की स्त्रियां अपने घर की अटारीओं में से मर्यादा से राम-लक्ष्मण की झांकी कर रही है। मेरी व्यासपीठ कहती रही, जनकपुर के लोग जो राम को देख रहे हैं, इनमें तीन श्रेणी है। एक, जनकपुर के बुज़ुर्ग लोग। दूसरे बच्चे। तीसरी माताएं। ईश्वरदर्शन के यहां तीन विभाग है। बुज़ुर्गलोग है वो ज्ञान है। ये बुद्धिजीवी है। ज्ञानीलोग किसी के रूप को, किसी की विशेषता को देखेंगे तो आकर्षित तो होंगे लेकिन अपने बौद्धिक अहंकार के कारण कुछ बोलेंगे नहीं। राम के बारे में वो कुछ बोलते नहीं। बच्चे को तो बोलने की जरूरत नहीं। वो राम का हाथ पकड़ रहे हैं। मिथिला की स्त्रियां भक्तिस्वरूपा है। वो राम-लक्ष्मण का परिचय प्राप्त कर लेती है। ज्ञान हरि को देखता है, पर बोलता नहीं अथवा तो ज्ञानी को बोलने की व्यवस्था भी नहीं। बच्चे लोग निखालस हैं, दिल के खुले हैं, इसीलिए भगवान से बातें कर रहे हैं। भक्ति ईश्वर का परिचय कर लेती है। उसे आत्मसात् कर लेती है। ये भक्ति का लक्षण है।

पूरी नगरी को रूप में डूबोकर भगवान समय पर लक्ष्मणजी को गुरु के पास ले आए। संध्यावंदन किया। रात्रिभोजन हुआ। विश्वामित्रजी विश्राम करते हैं तब राम-लक्ष्मण उनके चरणों की सेवा कर रहे हैं। पहली रात्रि मिथिला में पूरी हुई। दूसरे दिन गुरुपूजा के लिए पुष्प चुनने के लिए गुरु आज्ञा लेकर जनकराज की पुष्पवाटिका में आते हैं। भगवान राम बाग में है। उसी समय सुनयना की आज्ञा से अष्ट सखियों के साथ जनकनंदिनी जानकी गौरीपूजा के लिए आती है। बाग में प्रवेश किया। सरोवर में स्नान किया। गौरी के मंदिर में जाकर जानकीजी माँ भवानी की स्तुति करती है। अनुरूप सुभग वरदान प्राप्त करती है। इतने में सीता की एक सखी जो बाग देखने में पीछे रह गई थी, उसने राम को देखा। परमानंद में डूबी ये सखी जानकी को कहती है, सीयाजू, मंदिर में बाद में पूजा करेंगे। राम-लक्ष्मण बाग में है। हम उनके दर्शन करें। राम के दर्शन करके आई सखी आगे चलती है, जानकीजी पीछे चलती है। संतों ने ऐसा भाव बताया कि कोई बुद्धपुरुष ईश्वर का अनुभव करके हमारे पास आए और हमें दर्शन करवाने ले जाए तो ऐसे गुरु को आगे करके उनके पीछे-पीछे चलना। जानकी परम्बा है, पर हमें बताया कि किसी बुद्धपुरुष के पीछे चले।

जानकी के हाथ के कंगन, पैरों के नुपूर और कटिभाग की करधनी आवाज़ कर रही है। इस आवाज़ को सुनकर भगवान राम सोच रहे हैं कि बाग में कौन आया? जानकी को देखकर राम लक्ष्मणजी को कहते हैं, ये जनककन्या जानकी है, जिसके कारण इतना बड़ा धनुषयज्ञ हो रहा है। जिसका अलौकिक रूप देखकर मेरा मन खींचा जा रहा है। दर्शक का मन पवित्र हो और जिसे देखते हैं उसका रूप अलौकिक हो तो अलौकिकता के प्रति पवित्र मन का आकर्षित होना ये स्वाभाविक है। यहां सीयाजु राम के दर्शन करके नेत्र से राम को हृदय में बिठाकर किवाड बंद कर देती है। भाव में डूबी सीता को सखी सावधान करती है। गुरु साधक की ऊर्जा को निरंतर काबू में रखता है। जो गुरु ऊर्जा देता है, कुछ अनुभव कराता है, वही गुरु की जिम्मेदारी है कि हम कहीं ओवर न हो जाए। गुरु वो है जो शिष्य को कैसे, कहां रोकना, कहां साथ देना ये बताता है। इसीलिए हमें कन्ट्रोल करे ऐसा गुरुतत्त्व जरूरी है, वर्ना आदमी पागल हो जाएगा।

सीयाजु और सखियां भवानी के मंदिर में गई और माँ पार्वती की स्तुति करती है। देश की सभी कुंआरी बहन-बेटियां और विवाहिता भी ये स्तुति करे तो उसे ज्यादा प्रसन्नता मिलेगी और श्रेष्ठ परिणाम भी मिलेगा। जानकीजी गौरी की स्तुति करती है, जो गोस्वामीजी ने चौपाई में लिख दिया-

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।

सीया की विनय और प्रेमभरी स्तुति सुनकर माँ दुर्गा की मूर्ति मुस्कुराई। कंठ से प्रसादी की माला गिरी। सीयाजु ने उठा ली और मूर्ति बोली। प्रेमभाव हो तो मूर्ति बोल सकती है। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं। यद्यपि उसकी भाषा बिलग होगी वो प्रेमी ही समझ लेगा। बिनय-प्रेम के कारण जानकी के सामने पार्वती की मूर्ति बोली, जानकी, तुम्हारे मन में जो बस गया वो सांवरा तुम्हें मिलेगा जो करुणानिधान है, शील और स्नेह को जाननेवाला है। पार्वती के मंगल बचन सुनकर जानकीजी को मंगल सगुन होने लगे। सखियों के साथ जानकी अपने

भवन में माँ के पास आई। यहां राम-लक्ष्मण पूजा के फूल लेकर गुरु के पास आये। पुष्प से गुरुपूजा की।

धनुष्ययज्ञ का दिन आया। सभी राजे-महाराजे जनक की रंगभूमि में जानकीप्राप्ति की इच्छा से आए हैं। मुनि मंडली के साथ राम-लखन को लेकर विश्वामित्रजी रंगभूमि में प्रवेश करते हैं। 'मानस'कार कहते हैं, राम को देखकर रंगभूमि में जितने लोग बैठे थे, सभी ने अपने भाव के अनुसार राम की मूर्ति बिगल-बिलग देखी। एक के बाद एक अभिमानी राजा खड़े होते हैं। धनुष्य किसीसे टूटा नहीं क्योंकि धनुष्य स्वयं अहंकार का प्रतीक है। भगवान शिव समष्टि का अहंकार माने गए हैं और शिव धनुष्य अहंकार का प्रतीक है। अहंकार का धनुष्य तो विनम्रता से टूटता है। और विनम्रता से कोई अभिमान को तोड़ दे तो ही शांतिरूपी अथवा शक्तिरूपी जानकी हमारे कंठ में जयमाला पहना सकती है। यदि शक्ति को पाना है, शांति को प्राप्त करनी है तो किसी ना किसी रूप में हमें अपने अहंकाररूपी धनुष्य को तोड़ना नितांत आवश्यक है। सब हार गए। एक गंभीरता छा गई। महाराज जनक ने देखा कि द्वीप-द्वीप, खंड-खंड से राजा आए हैं, किसीने धनुष्य नहीं तोड़ा! मेरी बात सुन लो राजे-महाराजे, मुझे पहले से ज्ञात होता कि इस पृथ्वी पर मेरी बेटी से ब्याहे ऐसा कोई वीर है ही नहीं तो मैं ऐसी प्रतिज्ञा करके बदनामी का पात्र न बनता। सब राजाओं को कहा, आप अपने-अपने घर चले जाओ! विश्वामित्रजी समझ गए कि अब समय हो रहा है। और गुरु राम को संकेत करते हैं कि 'उठहु राम।' गुरु कन्ट्रोल करता है कि साधक को कब खड़ा करना, कब बिठाना, कब विश्राम देना। राघव, उठो और धनुष्य तोड़ दो।

गुरु को प्रणाम करके राघव धनुष्य के पास गए। अपने इष्टदेव शिवजी का धनुष्य है। धनुष्य की परिक्रम्मा करके त्रिभुवन गुरु को आदर दिया। भगवान राम ने धनुष्य की ओर देखा। इतने में भगवान राम ने धनुष्य को कैसे पकड़ा, कैसे उठाया, कैसे चढ़ाया, किसीको पता नहीं चला, केवल आवाज़ सुनी और एक क्षण के मध्यभाग में भगवान ने धनुष्य तोड़ा। सभी स्तंभित हो गए! भगवान ने ऐसे धनुष तोड़ा कि चौदह भुवन में आवाज़ व्याप्त हो गई! पूरे जगत में जयजयकार हो गया। सीताजी जयमाला पहनाती है। परशुराम का गुस्सा ठंडा कराने सीताजी ने प्रणाम किया। भक्ति निकट आती है तो बड़ों-बड़ों का गुस्सा शांत हो जाता है। राम-लक्ष्मण ने उनको प्रणाम किया। परशुराम ने राम को देखा। पूर्णावतार ने अंशावतार को आकर्षित किया। राम को देखकर थोड़े स्तंभित हो गए। आख़िर में भगवान की स्तुति करके, जयजयकार करते परशुरामजी अवकाश प्राप्त कर लेते हैं।

जनक के दूत पत्र लेकर अवध आते हैं। महाराज दशरथजी बारात लेकर जनकपुर पहुंचते हैं। राम-सीता के विवाह-तिथि ब्रह्मा ने निश्चित की मागशर शुक्ल पंचमी, गोरजबेला। विवाहमंडप में राम प्रवेश करते हैं। जानकीजी को लाया गया। उसी समय वशिष्ठजी ने कहा, जनकजी, आपकी ऊर्मिला, छोटे भाई कुशध्वज की दो कन्या मांडवी और श्रुतकीर्ति है। आप कहे तो हमारे तीन राजकुमार है- लखन, भरत, शत्रुघ्न। सभी का ब्याह यहां हो जाए? मांडवीजी भरत को अर्पण की। ऊर्मिलाजी लक्ष्मणजी को अर्पण। श्रुतकीर्तिजी शत्रुघ्नजी को अर्पण हुई। चारों भाईयों का विवाह संपन्न हुआ। कुछ दिन बारात रुकी। जनक, सुनयना और जनकपुरवासीयों ने अपनी बेटी को बिदा दी।

दशरथजी पुत्रवधूओं को लेकर अवध आए। स्वागत हुआ। धीरे-धीरे मेहमानगण बिदा लेने लगे। आख़िर में विश्वामित्रजी ने बिदा मांगी। साधु का काम पूरा हो जाए तो साधु को पुनः अपनी साधना में जुड़ जाना चाहिए। पूरा राजपरिवार सजलनेत्र महर्षि विश्वामित्रजी को बिदा देते हैं। राजा ने करबद्ध निवेदन किया, महाराज, ये सब संपदा आपकी है। मैं सब रानियां, पुत्र और पुत्रवधूओं के साथ आपका सेवकमात्र हूं। बच्चों पर करुणा करते रहियेगा। जब आपको भजन में से थोड़ा समय मिल जाए, हमें दर्शन देते रहियेगा। विश्वामित्र बिदा हो गए। सीताजी ब्याहकर अवध आई, समृद्धि ओर बढ़ने लगी।

दूसरे सोपान 'अयोध्याकांड' में कैकेयी ने दो वरदान मांगे और राम, लक्ष्मण, जानकी का वनवास हुआ। सुमंत के रथ में बैठकर तीनों निकलते हैं। सुमंत को बिदा दी और केवट की नौका में बैठकर प्रभु गंगापार करते हैं। दूसरे दिन भगवान तीर्थराज प्रयाग आकर भरद्वाजजी के दर्शन करते हैं। फिर भगवान वाल्मीकि के आश्रम में आए। वाल्मीकि से पूछा, हमें कहां रहना चाहिए उसके स्थान बताइए। वाल्मीकिजी ने चौदह स्थान बताए। राम-लखन-जानकी वाल्मीकि के कहने पर चित्रकूट में छा गए। सुमंतजी अयोध्या लौटते हैं। राम नहीं आए ये समाचार

सुनकर राजा दशरथ राम महामंत्र छः बार उच्चारण करते हुए प्राणत्याग करते हैं। भरतजी आए। राजा का संस्कार हुआ। राज किसको दिया जाए, इसकी चर्चा के लिए सभा मिली। भरत ने कहा, मैं सत्ता का आदमी नहीं हूं, सत् का आदमी हूं। मैं पद का आदमी नहीं, पादुका का आदमी हूं। एक बार हम सब राम के पास जाए, फिर राम जो आज्ञा करेंगे वो हम कबूल करेंगे।

पूरी अयोध्या चित्रकूट जाती है, सब मिले। राजा का शोक व्यक्त हुआ। जनक महाराज भी मिथिला आते हैं। बड़ी-बड़ी सभाएं मिली। बहुत चर्चाएं हुई। आखिर में निर्णय हुआ। प्रेमी होता है वो त्याग करता है। भरत को राम से बिलग होना अच्छा नहीं लगता, फिर भी भरत ने कहा, मेरे कारण मेरा ठाकुर संकोच महसूस करे ये ठीक नहीं। भरत ने कहा, 'जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।' ठाकुर, आपका मन जिसमें राजी हो ऐसा हमें आदेश करो। रामकथा त्याग की कथा है। निर्णय हुआ, भरत चौदह साल अवध में रहे, राम पिता की आज्ञा बन में पूरी करे। उसके बाद जो निर्णय आए वो करे। अब जाने का समय आया। पूरा समाज उदास है। भरत ने कहा, प्रभु, हम जा तो रहे हैं, लेकिन बिना आधार शांति नहीं मिलेगी। चौदह साल तक हम अयोध्या का संचालन कर सके, हम जी सके, आपसे कोई आधार मिले। शरणागत को चाहिए अवलंबन, कुछ आधार। प्रभु ने कृपा करके पादुका दी। भरत ने चरणपादुका मस्तक पर धारण की। एक बहुत बड़ा बल मिल गया। एक बात पक्की हुई कि पादुका अयोध्या आ रही है तो राम जरूर लौटेंगे। क्योंकि पादुका के पास पैर को जाना पड़ता है। पैर के पास पादुका नहीं आती। सबकी बिदा हुई है।

अयोध्या की व्यवस्था करके जनकराज जनकपुर चले गए। भरतजी पादुका को सिंघासन पर स्थापित करके पादुका को पूछ-पूछकर के राज्यवहीवट करते हैं। एक दिन भरतजी वशिष्ठजी से आज्ञा लेकर नंदिग्राम में वल्कल धारण करके, पृथ्वी में गड्ढा बनाकर रहने का व्रत लेते हैं। भरत ने कहा, प्रभु यदि वन में रहे तो मैं भवन में नहीं रह पाऊंगा। कौशल्या समझ गई कि भरत ऐसा प्रेमी है कि उसकी इच्छा के प्रतिकूल कुछ है तो ये भरत चौदह साल जी नहीं पाएगा। और यदि भरत बीच में चला जाएगा तो मैं राम को क्या मुंह दिखाऊंगी? अपने हृदय को बहुत मजबूत करके कौशल्या ने भरत को कहा, तुम्हारा मन ऐसे प्रसन्न रहता हो तो तुम जाओ। पूरी अयोध्या की आंख में आंसू है। भरत के प्रेम और त्याग की कथा कहते-कहते तुलसीदासजी 'अयोध्याकांड' पूरा करते हैं।

'अरण्यकांड' शुरू होता है, जिसको हमने इस कथा का प्रधान विषय बनाया था। थोड़ा उपसंहारक सूत्र देख लें। भगवान राम-लक्ष्मण जानकी की खोज करते शबरी के मार्गदर्शन में पंपासरोवर आते हैं। भगवान ने सरोवर में स्नान किया। सुंदर तरुवर की छाया में भगवान बिराजित हुए। भगवान जहां सुख आसीन बैठे हैं, वहां नारद आए। प्रभु ने आदर दिया। नारदजी बोले, नाराज़ न हो तो एक प्रश्न पूछुं, गतजन्म में मुझे इच्छा हुई कि शादी कर ले और विश्वमोहिनी से मैंने शादी करना चाहा तो आपने क्यों रोका? तब प्रभु ने कहा, मेरे भक्तों का मैं जिस तरह रक्षण करता हूं वो न्याय लागू किया। अब नारदजी आख़िरी प्रश्न करते हैं कि आप मुझे संतों के लक्षण बताओ। भगवान भी बहुत प्रसन्न हुए। सुन नारद, मैं संतों के गुण बताऊं, जिन गुणों के कारण मैं संतों के वश बन जाता हूं।

षट् बिकार जित अनघ अकामा।
अचल अकिंचन सुचि सुखधामा।
अमित बोध अनीह मितभोगी।
सत्यसार कबि कोबिद जोगी।।

साधु का लक्षण, जिन्होंने छ विकारों को रामकृपा से जीत लिया हो। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मत्सर, जीते हैं लेकिन खुद से नहीं, खुदा की कृपा से। जिसका जीवन नखशिख निष्पाप है। जिसको कोई भी कामना नहीं है। जो परम अकिंचन है, परम पवित्र है और सुख का धाम है, मितभोगी है, सत्यसार को ग्रहण करता है, अनीह है, आदि-आदि बहुत लक्षण गिनाए। राम कहते हैं, साधु के लक्षण मेरे लिए अवर्णनीय है।

'किष्किन्धाकांड' में हनुमानजी के माध्यम से राम-सुग्रीव की मैत्री हुई। वालिवध हुआ। सुग्रीव को राजा बनाया। अंगद को युवराजपद दिया। भगवान प्रवर्षण पर्वत पर चातुर्मास करते हैं। चार महीने भोग में डूबकर सुगीव राम का कार्य भूल गया। लक्ष्मण को भेजकर परमात्मा ने सुग्रीव को सावधान किया। सुग्रीव क्षमा मांगता है, महाराज, आपकी माया अत्यंत प्रबल है। बड़ों-बड़ों को विमोहित करती है। मैं तो एक सामान्य बंदर हूं। भोगों में डूब गया। सब बंदर-भालूओं को बुलाए। तीन दिशा मों भेज दिए। अंगद को नायक बनाकर, जामवंत को मार्गदर्शक बनाकर और श्रीहनुमानजी महाराज शामिल है, ऐसी टुकड़ी को दक्षिण में जानकी की खोज के लिए भेजने का निर्णय हुआ। राम को प्रणाम करके सब जाने लगे। अंत में हनुमानजी ने प्रणाम किया। प्रभु को लगा कि कार्य तो हनुमानजी से ही होगा। इसीलिए प्रभु ने मुद्रिका दी। अंगदवाली टुकड़ी गहन जंगल में तृषित होती है। हनुमानजी ने उपर चढ़कर देखा तो पंखी उड़ रहे थे। हनुमानजी को लगा कि वहां पानी होना चाहिए। सबको हनुमानजी ले जाते हैं। स्वयंप्रभा के दर्शन हुए। जलपान किया। स्वयंप्रभा ने कहा, आंखें बंद करके बैठ जाओ। आप सीता के पास पहुंच जाओगे। आंखें बंद करके बैठे तो सही पर बंदर होने के कारण आंख खोली तो वापस सिंधुतट पर आ गए! सागर किनारे कंदरा में संपाति नामक गीध रहता था, वो बाहर आया। जटायु की बात हुई। संपाति ने कहा, जटायु मेरा भाई है। जानकी अशोक वाटिका में सलामत है। आपमें से कोई वहां जाकर जानकी की खबर लाएगा। जामवंतजी ने हनुमानजी को आह्वान किया कि रामकार्य के लिए ही आपका अवतार है। ये सुनते ही बाबा पर्वताकार हो गए। जामवंत ने मार्गदर्शन किया। 'किष्किन्धाकांड' पूरा और 'सुन्दरकांड' का प्रारंभ -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेउ तुम्ह भाई।
सहि दु:ख कंद मूल फल खाई।।

हनुमानजी बार-बार रघुवीर को याद करके आकाशमार्ग से लंका जाते हैं। विघ्न आते हैं। मैनाक आया। सुरसा आई। सिंहिका ने गिराने की कोशिश की लेकिन मुख में रामनाम और हाथ में रामकार्य का संकल्प किए निकले हैं। सब विघ्न हट गए। लंका में प्रवेश करते हैं तो लंकिनी नामक राक्षसी ने रोका और हनुमान का परिचय प्राप्त हुआ तो वो भी आशीर्वाद देकर निकल गई। रामको हृदय में धारण करके प्रवेश किया है। एक-एक भवन में घूमते हैं। कहीं सीता नही मिली। आखिर में सुंदर भवन दिखा, जहां तुलसी का बृंद है, रामनाम अंकित गृह है। हनुमानजी सोचने लगे, लंका तो राक्षस की नगरी है, यहां सज्जन कैसे? इतने में विभीषण से भेंट हुई। परिचय हुआ। दोनों भाई गले मिले। माँ के दर्शन की युक्ति मिली। हनुमानजी माँ के पास आए। इतने में रावण आया। धमकी देकर चला गया। माँ दु:खी है तब हनुमानजी ने मुद्रिका डाली। जानकी मुद्रिका पहचान गई। तब हनुमानजी राम की सुंदर कथा गाने लगे। जानकी के दु:ख भागने लगे। राम का संदेश दिया। जानकी ने हनुमानजी को आशीर्वाद दिया। हनुमानजी बाग में जाते हैं। वृक्ष तोड़ते हैं। राक्षसों के साथ मुठभेड होती है। अक्षय का क्षय किया। मेघनाद हनुमान को बांधकर रावण के दरबार में ले आया। रावण और हनुमानजी का वार्तालाप होता है उसमें रावण कुपित हो गया। मृत्युदंड की बात कही। विभीषण ने कहा, नीति मना करती है, दूत को मृत्युदंड न दिया जाए। निर्णय जाहिर किया कि हनुमान की पूंछ जलाओ। भगवान की भक्ति का जो दर्शन करता है, भगवान के काम के लिए निकलता है, भक्ति की खोज करता है, भक्ति का आशीर्वाद प्राप्त करता है, उसकी पूंछ याने प्रतिष्ठा को लोग जलाने की चेष्टा करेगें लेकिन सही भक्त होगा तो उसकी प्रतिष्ठा नही जलेगी। जलानेवाले के घर जल जाएंगे।

हनुमानजी की पूंछ जलाई। हनुमानजी ने लंका जला दी। समंदर में गोता लगाकर पूंछ ठंडी की और माँ के पास गए। माँ ने चूडामणि देकर कहा, देर मत करना। चूडामणि लेकर हनुमानजी वापस आए। जामवंत ने हनुमंतकथा राम को सुना दी। हनुमानजी को हृदय से लगाकर राम ने कहा, हे मारुति, रघुकुल तेरे ऋण से मुक्त नहीं हो पाएगा। सब सागरतट पे आए। यहां रावण ने विभीषण को निष्काषित किया। विभीषण शरणागत है। प्रभु ने उसे आश्रय दिया। तीन दिन अनशन करके प्रभु बैठे। सागर शरण में नहीं आया तब प्रभु ने तीर उठाया। समुद्र प्रभु की शरण में आया और सेतुबंध का प्रस्ताव रखा। जोड़ने की बात प्रभु का जीवनमंत्र है। प्रभु ने प्रस्ताव स्वीकारा। 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के प्रारंभ में सेतु बना। भगवान ने कहा, ये परम रम्य धरणी है। मेरी इच्छा है, यहां शिवस्थापना हो। ऋषि-मुनियों के मंत्रोच्चार के बीच शिवलिंग की स्थापना हुई। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। भगवान की सेना सागर पार करके लंका आई। सुबेल पर प्रभु का डेरा। रावण मनोरंजन के लिए आया। भगवान ने महारस भंग करके अपना आगमन सूचित कर दिया। मंदोदरी ने रावण को मनाने की चेष्टा की। माना नहीं। अंगद को राम ने संधि के लिए भेजा कि अभी भी रावण मान जाए तो हमें संघर्ष न करना पड़े। रावण माना नहीं। युद्ध अनिवार्य हुआ।

भीषण युद्ध हुआ। इन्द्रजित ने लक्ष्मण को मूर्छित किया। सुषेण ने औषधि बताई। हनुमानजी वो लाए। लक्ष्मण फिर जागृत हुए। कुंभकर्ण और इन्द्रजित को वीरगति मिली। आखिर में भगवान ने इकतीस बाण चढ़ाए। दस मस्तक, बीस भुजा के लिए और इकतीसवां नाभि के लिए। इकतीसवें बाण ने रावण की नाभि में जो अमृतकुंभ है वहां चोट की और 'राम कहां' ऐसा कहकर रावण धरती पर गिरा। उसीका तेज प्रभु के चहेरे में समा गया। रावण निर्वाण को प्राप्त कर गया। मंदोदरी ने शोक किया और राम की स्तुति की। रावण का संस्कार हुआ। भगवान ने लक्ष्मण आदि को भेजकर विभीषण का राजतिलक किया। मूल जानकी प्रगट हो गई। पुष्पक विमान में सखाओं को लेकर राम, लखन, जानकी निकले। राम ने सीयाजु को सेतुबंध का दर्शन करवाया; रामेश्वर का दर्शन करवाया। शृंगबेरपुर आए। हनुमानजी को अयोध्या भेज दिया कि भरत को खबर दो। हनुमानजी अयोध्या पहुंचते हैं। राम को निषाद, गुह सब मिले। वहां तुलसी 'लंकाकांड' पूरा करते हैं।

'उत्तरकांड' के आरंभ में अयोध्या का वर्णन है। सब विरह में है। एक दिन बाकी है। इतने में हनुमानजी राम आगमन की खबर देते हैं। पूरी अवध में बात फैल गई। भरत के आनंद की कोई सीमा नहीं। प्रभु का विमान सरजूतट पर उतरता है। प्रभु ने जन्मभूमि को प्रणाम किया। बंदर-भालू और असुर के रूप में विभीषण, सुग्रीव थे वो अयोध्या की भूमि में उतरे तब सब मनुष्य बनकर उतरे। रामकथा मनुष्य बनाने की एक विधा है। भगवान राम ने वशिष्ठजी के चरणों में शस्त्र छोड़कर प्रणाम किया। भरत और राम भेंटे तो कोई निर्णय नही कर पाए कि दोनों में से वनवासी कौन था? अमितरूप प्रगट करके जिसकी जैसी इच्छा ऐसे प्रभु मिले।

'मानस'कार हम सबके लिए निचोड़ देते हैं कि ये कलिकाल है, इसमें दूजा कोई साधन हम जैसे लोग नहीं कर पाएंगे। तुलसी तीन सूत्र देते हैं, समय मिले राम स्मरो; राम को गाओ; जब अवसर मिले राम के गुणगान सुनो। 'रामहि सुमिरिअ' ये सत्य है। 'गाइअ रामहि' ये प्रेम है। प्रेम गवा देता है। 'संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।' कथाश्रवण करने मिले ये हरि की करुणा है। पूरी 'रामचरित मानस' का निचोड़ है सत्य, प्रेम, करुणा।

उसके बाद प्रभु ने कैकयी का शोक निवारण किया। सुमित्रा और कोशल्या को प्रणाम किए। वशिष्ठजी ने कहा, आज ही राजतिलक कर दें? ब्राह्मणों ने कहा, अब बिलंब न करे। सब ने स्नान किया। दिव्य वस्त्रालंकार धारण किया। दिव्य सिंहासन लाया गया और राज्य सिंहासन पर राम-सीता आरूढ हुए। और त्रिभुवन को रामराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने राजतिलक किया।

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

माताओं ने आरती की। चार वेद ने ब्रह्मभवन से आकर प्रभु की स्तुति की। शिव कैलास से मूल रूप में अयोध्या के राजदरबार में आकर स्तुति करके, भक्ति का वरदान लेकर लौट पड़े। मित्रों को प्रभु ने निवास दिया। छः महीने के बाद प्रभु ने हनुमानजी को छोड़कर सबको अपने दायित्व में भेज दिया। दिव्य रामराज्य का वर्णन गोस्वामीजी ने किया है। समय मर्यादा पूरी हुई। ये राम की लीला भी है और चरित्र भी है। लीला के संदर्भ में देखें तो जानकी ने दो पुत्र लव-कुश को जन्म दिया। ऐसे ही तीनों भाईयों के घर भी दो-दो पुत्रों के जन्म की कथा ग्रंथों में आई। अयोध्या के वारिस का नाम बताकर फिर ग्रंथ को बंद कर दिया। इसके बाद आगे की कथा में जानकी का दूसरी बार का त्याग तुलसी लिखते नहीं। जहां दुर्वाद है, विवाद है, अपवाद है, तुलसी उसमें गये नहीं। तुलसी को संवाद स्वीकार्य है। उसके बाद कागभुशुंडि का चरित्र है। गरुड की जिज्ञासा पर सात प्रश्नों के उत्तर बाबा भुशुंडिजी देते हैं।

कागभुशुंडि ने गरुड के सामने कथा पूरी की। याज्ञवल्क्यजी ने कथा को विराम दिया कि नहीं स्पष्ट नहीं है। कैलासपति महादेव ने भवानी को कथा सुनाते हुए कहा, देवी, अब आपको कुछ सुनना है? भवानी बोली, महाराज, आपकी बाणी सुनकर मुझे तृप्ति नहीं हो रही। मैं कृतकृत्य हो गई। कलिपावनावतार पूज्यपाद गोस्वामीजी अपने मन को कथा सुनाते हुए कथा को विराम देते हैं। 'मानस'कार हम सबके लिए निचोड़ देते हैं कि ये कलिकाल है। इसमें दूजा कोई साधन हम जैसे लोग नहीं कर पाएंगे। तुलसी तीन सूत्र देते हैं, समय मिले राम स्मरो; राम को गाओ; जब अवसर मिले राम के गुणगान सुनो। 'रामहि सुमिरिअ' ये सत्य है। 'गाइअ रामहि' ये प्रेम है। प्रेम गवा देता है। 'संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।' कथाश्रवण करने मिले ये हरि की करुणा है। पूरी 'रामचरित मानस' का निचोड़ है सत्य, प्रेम, करुणा। तुलसी कहते हैं, जिसकी लवलेश कृपा मेरे पर हो गई, तो मेरे जैसा मतिमंद आज परमविश्राम का अनुभव कर रहा है।

तुलसी ने रामकथा को विराम दिया। इन चारों आचार्यों की कृपाछाया में बैठकर लक्ष्मणनगरी लखनऊ में मेरी व्यासपीठ जो मुखर हुई थी उसे विराम देने मैं अग्रसर हूं तब वैसे मेरा अनुभव कायम का रहा कि नौ दिनों में लगता है, सबकुछ कह दिया। और व्यासपीठ पर से ऊतरता हूं तो फिर वही लगता है कि सबकुछ रह गया! 'हरि अनंत हरिकथा अनंता।' मैं पूरे आयोजन के लिए मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आशीर्वाद तो हम क्या दें? आशीर्वाद तो होता है तभी ऐसी कथा गाने या सुनने मिलती है। फिर भी 'मानस' के निकट बैठा हूं, व्यासपीठ पर बैठा हूं, इसीलिए विनम्रभाव से कहना चाहूं, खासकर युवान भाई-बहनों को, आपने मुझे सुना है, मेरा ये सूत्र याद रखियेगा, आप मुझे नव दिन दो, मैं आपको नवजीवन दूंगा। ऐसी ये भगवद्कथा विराम की ओर जा रही है तब कल की कथा का प्रारंभ इन्हीं सूत्रों से किया था कि एक लीला होती है, जिसमें अभिनय होता है। और एक चरित्र होता है, जो जीया जाता है। हमने नव दिन रामकथा कही। तो कथा वो है जिसमें लीला और चरित्र दोनों हो। दोनों कगारों के बीच में बहती है रामकथा। हमको कृतकृत्य करनेवाली ये कथा है।

तो मेरे भाई-बहन, नव दिन में कुछ सूत्र, पात्र, प्रसंग जिसमें से भी कुछ बात आपके स्वभाव, आपकी रुचि और अंत:करण के निकट पहुंची हो तो उसको कृपण के धन की तरह संभाल रखिएगा। मैं सात कांड का ये 'रामचरित मानस' बंद कर रहा हूं, लेकिन आप जो सुन चुके हैं, जितना सुन चुके हैं; जीवन के कई कांड है। कोई मोड पर 'मानस' के सूत्र आपको मार्गदर्शन दे सकते हैं। इसे पकड़ रखिएगा। यहां के राज्य की प्रबंधन व्यवस्था, यहां के पूरे क्षेत्र की व्यवस्था जिस रूप में आप सबने विशेष रूप दिया है, उसकी मैं अच्छी नोंध लेकर बिदा ले रहा हूं। फिर कभी मिलेंगे सत्य, प्रेम, करुणा के नाते। इन नौ दिन की कथा का सुकृत आज विवाहपंचमी के दिन सीता-राम को समर्पित कर रहा हूं।

मानस-मुशायरा

मुझे उससे नज़र मिलाने से भी डर लगता है।
क्योंकि वो आंखों-आंखों में जान पढ़ लेता है।
– वसीम बरेलवी

यह सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।
जो बांटता-फिरता था जमाने को उजाले,
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।
– दीक्षित दनकौरी

तेरे दर पे सर रखना फ़र्ज था, सर रख दिया।
अब मेरी आबरु रखना, न रखना तेरा काम है।
ज़िंदगी का बोझ उठा लेना हमारा काम था।
हम को मंज़िल पे पहुंचाना ये तेरा काम है।
– नज़ीब बनारसी

मेरे राहबर मुझको गुमराह कर दे,
सुना है कि मंज़िल करीब आ रही है।
– खुमार बाराबंकवी

जनाजे पे मेरे लिख देना यारों,
मोहब्बत करनेवाला जा रहा है।
–राहत इन्दौरी

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है उधर कोई नहीं!
– नवाज़ देवबंदी

ना कोई गुरु, ना कोई चेला।
भीड में अकेला, अकेले में मेला।
– मज़बूरसाहब

कृष्ण आदर्श पुरुष हैं, आदर पुरुष हैं, आराध्य पुरुष है, उदार पुरुष है और आनंद पुरुष है

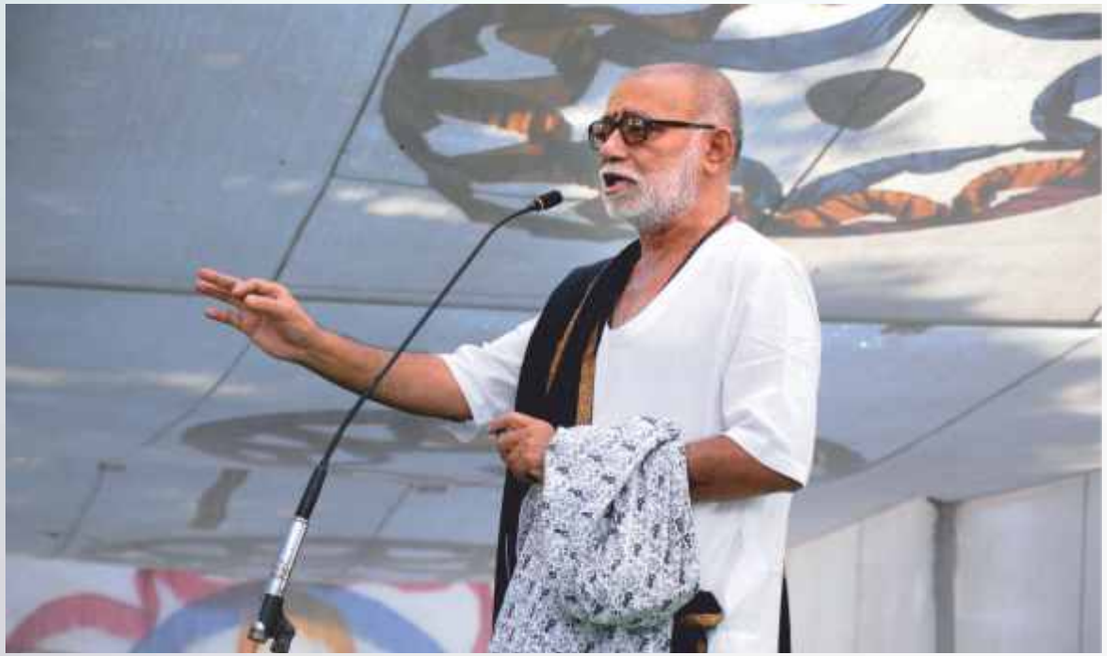

'गीताजयंती' के अवसर पर 'गीता विद्यालय' जोडिया में मोरारिबापु का प्रेरक उद्‌बोधन

सर्वप्रथम भगवान योगेश्वर के चरणों में प्रणाम करके, 'श्रीमद् भगवद्‌गीता' पर अभी-अभी हम लोग मंच से मंगलमय विचारों का श्रवण किये उस वैश्विक ग्रंथ 'भगवद्‌गीता' को प्रणाम करके, इस भूमि पर बैठकर इस भूमिको जिसने एक विशेष महत्त्व प्रदान किया, जो था उसे ही खोला, ऐसे अपने सबके पूज्य विरागमुनि की चेतना को प्रणाम करके, इस 'गीताविद्यालय' इसके सभी संचालकों और खास तो पूरे विद्यालय के जो प्राण हैं वे उन बालकों उपर हंमेशा आशीर्वाद बरसाते हुए पूजनीय भोलेबाबा जो हंमेशा संरक्षण प्रदान करते हैं, स्नेह बरसाते हैं और सदा प्रसन्नता व्यक्त करते हैं, ऐसे पूज्यबाबा, हम पर विशेष कृपा करके भगवान द्वारिकाधीश के द्वार पर कथा चल रही है उस कथासेवा में लगे हुए परमपूज्य मलिक पीठाधीश्वर सामने से पधारे; मुझे कल ये समाचार मिला तो बहुत खुश हुआ। आप वहां की कथा का समय बदलकर हम पर अहेतु अनुग्रह बरसाने के लिए पधारे हैं। आपके चरणों में मेरा प्रणाम। आपके साथ पधारे सभी संतगण को भी मेरा प्रणाम। 'गीताविद्यालय' के अध्यक्ष पूज्य शास्त्रीजी बापा, ये सतत ध्यान देते हैं, अपना स्नेह देते हैं। उनके चरणों में मेरा प्रणाम। पूज्य लाभुदादा, वे अस्वस्थ हैं पर इसे अस्वस्थ कैसे कहें? शरीर अस्वस्थ होगा पर विचार, सूर और उसका प्रगटीकरण खूबखूब तंदुरस्त था। तो पूज्य दादा अपना भाव व्यक्त करते हैं कि इस स्थल के प्रताप से मैं इतना गा सका; अपनी प्रसन्नता व्यक्त कर सका। उनका बहुत मार्गदर्शन हमें मिला है, प्रेरणा मिली है। और त्रिवेणी के प्रारंभ से आप सतत हमारे साथ रहकर हंमेशा सतत प्रेरणा देते हैं। हम सबको खूब उसका लाभ मिले ऐसी ठाकुरजी के चरणों में वंदना कहता हूं। ये 'गीताविद्यालय' ट्रस्ट के दिवंगत ट्रस्टी जो पहले से इस ट्रस्ट से जुड़े रहे, जो शरीर से अभी हाज़िर नहीं है उन सभी महापुरुषों को मैं यहां से स्मरण करता हूं। हमारा पूरा ये कथाकार परिवार है।

गतकल हम सब सुन रहे थे तब एक बहन ने ऐसा बोला कि हम छोटे कथाकार है। ये मुझे बहुत पसंद नहीं।

जगत की बड़ी से बड़ी वस्तु जो पकड़ता है वो छोटा होगा ही नहीं। गोवर्धन उठानेवाले को आप छोटा कहेंगे? जिसने गोवर्धन उठाया होगा उसे हम छोटा कैसे कह सकते हैं? बहुत से वक्ता प्रसिद्ध होते हैं, बहुत से वक्ता अप्रसिद्ध होते हैं। पर फ़र्क क्या पड़ता है? मेरा पूरा कथाकार परिवार है। इतने वर्षों से मुझे यहां आने का लाभ मिलता है। आपके साथ बातें कहने और श्रवण करने का लाभ मिलता है। बीच में कभी एकाद बार चूक गया हूं? कभी नहीं? साहब! मोरारिबापू को धन्यवाद दीजिए। सैंतीश वर्ष से मैं यहां आता हूं। बीच में दो घंटे के लिए आया होऊं और वापस चला गया होऊंगा किसी कारण से। मुझे ऐसा एकाद बार चूक गया हूं। ठाकुरजी की कृपा है लगातार! बाप! ये मेरा सद्‌भाग्य है। मेरी प्रसन्नता है। मैं यहां सतत आ सकता हूं। 'रामचरित मानस' में एक महामुनि हैं।

बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी।
बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी।।

'रामचरित मानस' में महामुनि विश्वामित्र; जिसका परिचय तुलसी ने दिया है। ये महामुनि। परंतु ये बिरागमुनि ने जोडिया आकर गृहस्थों के पास से उनकी संतानें मांगी कि हमें दीजिए। विश्वामित्र सीता के लिए राम से मिलने लगे। विरागमुनि 'गीता' के लिए। इस प्रदेश के लोगों से मांगा। गृहस्थी के पास से संतति मांगी है। इस विद्यालय में जिसने अपने सभी गृहस्थों के पास से संतानें मांगी कि उन्हें भेजिए। ऐसे विरागमुनि की भूमि में इतने वर्षों से ये कार्य चल रहा है। ये युवा लड़कें, सभी लोग बापजी के मार्गदर्शन में संचालन कर रहे हैं, इसका बहुत आनंद हैं।

तो बाप! आपके 'गीता विद्यालय' का आदरभाव, उसे नमन करता हूं। आपको नहीं लगता साहब कि शास्त्रीबापा ने स्वागत में 'गीता' के अमुक श्लोक दिए और फिर लाभुदादा ने फिर पूरा इतिहास, उसका जो अभ्यास है, उनका जो अनुभव है वो द्वारिकाधीश को याद करते-करते उसके उपर एक कलगी चढ़ा दी है। और फिर पूज्य पीठाधीश भगवान आये। उन्होंने अपने ढंग से बात की। उसमें कुछ कहना नहीं होता। हमने महसूस किया। अब आपको लगता है कि मुझे कुछ कहना बाकी है? ये तो ''पूर्णमदः पूर्णमिदं पर्णात् पूर्ण मुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते।' साहब! आठ दिवस से बोले बिना घर में बैठा हूं! ये परिक्रमा की थकान उतारने के लिए नहीं। इस 'गीताजयंती' में अभी-अभी से दो-दो दिन ही आ सकता हूं। किसी तरह मौका मिला है। तो वैसे तो क्या कहना, फिर भी कुछ कहना है। कोई संदेश नहीं, केवल संवाद।

मेरी समझ में आया है। समझ में आया है इसलिए कि गुरुकृपा से साठ वर्ष से 'गीता' का मैं पाठ करता हूं। When I was twelve years old. आज मैं अंग्रेजी बोलूंगा! बारह वर्ष का था और कैलास महामंडलेश्वर विष्णुदेवानंदगिरिजी का एक पोस्टकार्ड आया। मैं तो 'मानस' पढ़ता था दादा के पास। और एक पोस्टकार्ड आया। उनके संन्यास लेने के बाद का पहलीबार का उनका संदेश। उस पोस्टकार्ड में उन्होंने लिखा कि 'रामचरित मानस' तो अपने साधुकुल में पहले से ही है। परंतु बालकों से कहना कि 'गीता' का पाठ करे। और त्रिभुवनदादा ने मुझे गीताप्रेस गोरखपुर का 'भगवद्‌गीता' जिसमें भाषान्तर भी साथ हो उसे दिया। और तब से हर दिन एक अध्याय 'गीता' का मैं स्वाध्याय करता हूं। उसका भाष्य करने के लिए नहीं, उसे याद करने के लिए नहीं, उसका कोई ज्ञानयज्ञ करने के लिए नहीं। दूसरा कुछ नहीं, बस आनंद आता। इसलिए जो कुछ आंतरिक विकास और विश्राम के लिए समझ में आया हो ऐसी बात संवाद स्वरूप में आपके समक्ष रखनी है। मुझे ऐसा लगता है बापजी कि 'गीता' केवल कृष्ण ही बोल सके ऐसा नहीं है। और कृष्ण इतने कंजूस भी नहीं हैं, ऐसे संकुचित भी नहीं हैं कि ये सम्मान केवल उन्हें अकेले को मिले। 'गीता' किसीके भी मुख से प्रवाहित हो सकती है। निःशंक प्रवाहित हो सकती है। बहुत जवाबदारीपूर्वक निवेदन कर रहा हूं। कोई भी कहेगा तो कृष्ण का अंश तो बोल ही रहा है। उसमें तो ना नहीं पाड़ेगा न! तू बाप है तो मैं तेरा पुत्र हूं। तू तो चला गया। बचाये हमने रखा है। पांच-पांच हजार वर्ष से काली साल ओढ़कर हम बैठे हैं। किसने बचाये रखा है? बाप के उत्तराधिकार को जो संतान संभाले नहीं उस बाप का श्राद्ध करने का पुत्रों को अधिकार नहीं है। उत्तराधिकार ये भारत का, इस पृथ्वी का, इस रमणीय वसुधा का उसके हम जो वारिसदार हैं। उसके अंश के नाते एक तू ही कह गया है, 'ममैवांशो जीवलोके जीवभूत सनातनः।' तो कोई भी कह सकता है।

तो मोरारिबापू ने भगवान द्वारिकाधीश से एक दिन पूछा। शास्त्रीबापा कल कह रहे थे कि भगवान मेरे सामने किसी दिन बोले नहीं, पर हंसते हैं। परंतु मेरे साथ

तो बोलते हैं! बड़े को कम देते हैं, छोटे को अधिक देते हैं। इसमें व्यर्थ कुछ बहुत नहीं है! नहीं तो कहोगे, बापू के साथ भगवान बोले! वैसे भी मुझे बहुत सहन करना पड़ता है! एक भाई ने तो मुझे पत्र लिखा, रोज हनुमानजी आपसे दो बजे मिलने आते हैं? तुझे आते होंगे! मुझको हनुमान दो बजे नहीं देखता! सोने दो न! मुझसे क्यों मिलने आयेंगे? तेरे बाप को मिलते हैं! मुझे क्या काम है? मतलब इसे कुछ फैलाना नहीं कि इसमें चमत्कार है! ये आपके साथ संवाद कर रहा हूं। मेरे साथ बोले। मैंने पूछा, ठाकोरजी, ये 'गीता' आप ही कह सकते हैं? हम आपके पुत्र की तरह कुछ? साहब! जिन्स में आता है। आज का विज्ञान जो कहता है कि आवाज़ जिन्स में आती है, चेहरा आता है, स्वभाव आता है और देह का हलनचलन भी उसी तरह उसकी अदाओं में आता है साहब! कितना-कितना कहना? ये सब उसका है। आज का विज्ञान भी सिद्ध करता है। हम सीधे उसके अंश हैं। एक मोरारिबापू ही नहीं, सभी। आप समझ सकते हो इसलिए ऐसी बात कर रहा हूं। मिथ्या चमत्कार कि ऐसा सब होता है! ऐसा सब बहुत से करते हैं और उसमें मुझे बढ़ोतरी करनी नहीं है।

मुझको तलगाजरडा के एक लड़के ने प्रश्न पूछा, बापू, दिखे परंतु महसूस न हो ऐसा क्या है? अभी चार-पांच दिन पहले। सबको पता है। छोटा-सा लड़का स्कूल से आकर वहां बैठा हो। कोई न हो तब मेरा सत्संग उसके साथ हो। अब ऐसा लड़का मुझसे ऐसा प्रश्न पूछता है कि ऐसी कौन-सी वस्तु है बापू कि दिखती है पर महसूस नहीं होती अथवा तो महसूस हो पर दिखे नहीं। मैंने कहा, ये हनुमानजी हैं और सामने वे दिखते हैं पर महसूस नहीं होते। और उनका बाप पवन है जो महसूस होता है पर दिखता नहीं। लड़का ऐसे हाथ जोड़कर कहा, बस, अब कल आऊंगा! निकल गया! परमतत्त्व की महसूसी होती है। रूह से महसूस कीजिए। आत्मा से उसको महसूस कीजिए। मैंने पूछा, भगवान, ये 'गीता' आप अकेले ही कह सकते हैं? हम नहीं कह सकते? 'गीता' का जो ग्रंथ तैयार हुआ वो तो बाद में हुआ, ठीक? आपकी उम्र अभी लगभग एक सौ छब्बीस वर्ष हुई। तो आप ब्रह्म हो परंतु शारीरिक तौर पर ये 'गीता' का ग्रंथ आप अभी उठा नहीं सकते! हमें आपको देना पड़ेगा। शारीरिक धर्म तो हम कुछ नहीं कह सकते उसके लिए! इसलिए भगवान ने कहा है, कहा जाता है। मुझसे कहा, बोल सकते हैं। पर बेटा, पांच वस्तु हो तब बोला जा सकता है।

मुझे ये कहना है बाप! जिसके पास ये पांच वस्तु होगी, उसके मुख में से जो निकलेगा वो 'भगवद्गीता' होगी। उसके मुख में से जो निकलेगा वो 'रामचरित मानस', उपनिषद वो अपना परमतत्त्व वेद होगा। उसने मुझसे कहा था, तू किसी से न कहना! मैंने कहा, मैं जोडिया में कहूंगा। वे लोग किसीको नहीं कहेंगे! फिर उसने कहा, तो ठीक है, कर दो सार्वजनिक! पर आप कहते हो तो कहूं। बाकी तो मुझे बहुत बोलना है!

तो बाप! कृष्ण की 'गीता' का साठ वर्ष से पाठ करते-करते आनंद करते हुए जो कुछ समझ में आया। कुरुक्षेत्र में बोला होगा वही 'गीता' नहीं है। गोपी के संग क्रीडा करते हुए जो बोला होगा वो भी 'गीता' ही है। जो उसके समक्ष बोला होगा वो भी 'गीता' ही है। उसका प्रत्येक वचन 'गीता' है। 'गीता' को हम संकुचित न करे। एक भरवाड की लड़की कल कितना सुंदर श्लोक में बोल रही थी! इतना तो पक्का है न कि यहां सात सौ श्लोक की बात है। उसमें बहुत से अपना मत देते हैं कि सात सौ श्लोक बोले होंगे तब तक रहे होंगे? बहुतों को तो यही काम है! वो परमतत्त्व कालातीत है। उसे आप घडी पर नहीं बांध सके कितना समय किया होगा? घोड़ा हिनहिनाते होंगे उनके बीच इतना श्लोक कब बोले होंगे? कैसे हुआ होगा? पर बाप! वे तो जो 'गीता' कहे हैं वो कोई भी बोल सकता है। पांच वस्तु चाहिए। तो बाप! पांच वस्तु। कृष्ण बो ब्रह्म है, परमात्मा है, योगेश्वर है, जगद्गुरु है। मुझे कहने दीजिए, मेरा राम विशेषणमुक्त गुरु है।

मोरे तुम गुरु पितु माता।
जाऊं कहां तजि पद जल जाता।।

राम विशेषणमुक्त गुरु है। कृष्ण जगद्गुरु हैं। और भगवान महादेव त्रिभुवन गुरु हैं। उपनिषद का मूल विशेषणमुक्त ही गुरु है न? 'मानस' ने चार बार 'सद्गुरु' शब्द का प्रयोग किया। तो बाप! ये जगद्गुरु जो 'गीता' बोले, उनके मुख में से जो निकले 'गीता' है। शास्त्रीबापा, आप ऐसा कहते थे कि वे रोष से भरते और 'महाभारत' के युद्ध में वे पांडवों को कहते थे कि तुम जुगारी हो, दास होने के लिए बने हो। वो भी 'गीता' ही है। कोई परमत्त्व जब हमें ऐसा कहे कि तुम दास बनने के लिए बने हो तब मोरारिबापू धन्य हो जाये। दास होना ये बहुत ही मुश्किल है। और वो प्रमाणपत्र दे। तो भगवान कृष्ण जगद्गुरु, भगवान राम विशेषणमुक्त गुरु और भगवान शिव त्रिभुवनगुरु है।

कृष्ण क्या है? वे परमपुरुष तो हैं ही। परमपुरुषोत्तम हैं। उनके मुख में जितना पुरुषोत्तम योग शोभित होता है उतना दूसरे के मुंह में शोभित होता है? परमपुरुषोत्तम हैं। ये परमपुरुषोत्तम पद पाने के लिए आदमी में पांच वस्तु आनी चाहिए। मुझे समझ में आया वो यही है। कृष्ण सबसे पहले आदर्शपुरुष हैं। मेरे बहुत से विद्वान ऐसा लिखते हैं कि हमारे आदर्श पुरुष भगवान कृष्ण हैं। क्योंकि आदर्श हैं। उन्हें आदर्श बना सकते है। कहने दीजिए, कृष्ण आदर पुरुष हैं। किसकी पहले पूजा करे वो ये प्रश्न आया तब साहब, कितनी बड़ी सत्ता ने कहा कि पहले आदर तो इनका ही होना चाहिए। वे अमर पुरुष है। बहुत से आदर्श पुरुष होते हैं परंतु आदर पुरुष किंचित् न भी हो। बहुत से शिष्टाचार के लिए हमें आदर देते हो, पर अपना आदर्श नहीं हो सकते। ऐसा भी हो सकता है। भगवान कृष्ण आदर्श पुरुष है। भगवान कृष्ण आदर पुरुष है। मुझे कहने दीजिए भगवान कृष्ण आराध्य पुरुष हैं कौन ना पाड़ सकता है? क्योंकि उनके सिवाय गति नहीं है। 'कृष्ण एव गतिर्मम:।' उसके सिवाय कौन गति है? हमें बहुत ही नजदीक पड़ता हो ऐसा अवतार कृष्ण ही है। भगवान बुद्ध हैं पर उन्हें हम बहुत समझ सके नहीं हैं। ये सभी अवतारों में ही है। अधिक अपने साथ नाचते, गाते, बातें करते, विनोद करते हुए ऐसा कौन है? 'सखेति मत्वा मद् भक्तं प्रसन्नम्।' हे कृष्ण! हे यादव! हे सखेति! अर्जुन की आंख में आंसू चमक रहे हैं, आंसू गिरते नहीं! अंदर भी नहीं जाते! ऐसे चमकते थे। मानो परमात्मा का दिया हुआ लेन्स लगाया दो आंखों पर! ईश्वरदत्त लेन्स हो फिर उसे किसी चश्मा की जरूरत नहीं पड़ती। तेरी महिमा न जानी जा सके यही बात अपना नरसिंह उतार रहा है!

'अमे अपराधी कांई न समज्या, न ओळख्या भगवंतने।'

'भागवत' में भी बापजी! 'भागवत' का तो मैं श्रोता हूं। 'भागवत' में भी भगवान कृष्ण ने ऐसा कहा है कि अब द्वारका डूबनेवाली है। द्वारका की समृद्धि, यादवकुल की जो संपत्ति, बहन-बेटी है उन्हें लेकर तू हस्तिनापुर जा। वे जब निकलते हैं न बीच में लुटते हैं ये सब बात युधिष्ठिर को कहते हैं तब वहां भी ये दर्शन है। आदर, आदर्श, आराध्य पुरुष है। आपको उसके पास जाना ही पड़ेगा। दादा कल कह रहे थे कि अमुक वस्तु ग्राह्य भले न हो परंतु श्राव्य होती है। कृष्ण को आप भले माने नहीं, इष्टदेव न बनाएं परंतु आपको उन्हें सुनना तो पड़ेगा ही। आपको उनकी बात सुननी तो पड़ेगी ही। सन्धि का प्रस्ताव लेकर गये थे तब कौन-कौन सुनने आये? आज गोविन्द बोलनेवाला है! आज परमात्मा बोलनेवाला है! इसलिए हजारों वर्षों की जिसने समाधि छोड़ दी होगी उसके मुख से जो कोई प्रवचन निकला होगा साहब!

कृष्ण भी बहुतों को छोटा-सा पसंद होता है! बहुतों को इतना पसंद है! सब खूब चला! पर अब अच्छा हुआ! स्वच्छता अभियान व्यासपीठों ने बहुत किया। व्यासपीठ जितना स्वच्छ अभियान कर सकती है उतनी दूसरी कोई पीठ नहीं कर सकती। ये कहीं हम नया नहीं करते। यह तो शंकर और शुकदेव से चली आ रही परंपरा है। ऐसा स्वच्छता अभियान कौन करेगा? मानव के मन का मलीन दूर करता है। गांधीबापू के स्मरण में जो आयोजित होता है उसे व्यासपीठों पर से बोला ही जाता रहा है। पर व्यासों ने, वाल्मीकियों से, तुलसी और शुक ने जो काम दिया है! कृष्ण आद्यपुरुष है। मेरा 'गीता' पर कोई अधिकार नहीं है और मैं ऐसी चेष्टा करूंगा भी नहीं। अनुभव हो तो भी स्थापित करने की कोशिश नहीं करूंगा। परंतु यदि जोडिया में कहना हो; जैसे गांधी कहते हैं, 'अनासक्ति योग।' तिलक ऐसे कहते हैं; रामसुखदासजी बापू ऐसे कहते हैं; जितने-जितने महापुरुष इस पर कहे हैं; ओशो कुछ ऐसा कहते है; सबने अपना-अपना कहा है; पर तलगाजरडा को कुछ कहना हो, 'गीता' का सार क्या है? बापजी ने अभी कहा कि सबका सार हरिनाम है।

एहिं महं रघुपति नाम उदारा।
अति पावन पुरान श्रुति सारा।।

कृष्ण आराध्य पुरुष हैं। बिना परीक्षा लिए ब्याह कर लो। उसके साथ गंठजोड़ कर लो साहब! उसकी चूंदडी ओढ़ लीजिए। कोई परीक्षा की, मुलाकात की, कुंडली मिलाने की जरूरत नहीं है। हस्ताक्षर जन्माक्षर मिलाने की जरूरत नहीं है। ब्याह करना हो तो उससे ब्याह करिए। उसके साथ संबंध रखना और ये तैयारी कि तुम्हें कौन सा संबंध रखना है? तुम्हें मित्र का संबंध रखना है? तुम्हें मेरा बाप बनना है? तेरा पुत्र मैं। तुझे मेरी बहन बनना है? सखा बनना है? तुलसी तो कहते हैं-

तोहे मोहे नाते अनेक।
तुं दयाल दीन हौं, तुं कामी हौं भिखारी।

चौथा, वो है उदार पुरुष। इतना औदार्य कहां होगा? उनके जैसा उदार कौन होगा? और अंतिम कृष्ण

का लक्षण ये कि आनंद पुरुष है। तो ये पांच वस्तु जहां-जहां होगी वहां धर्मक्षेत्र होगा, कुरुक्षेत्र होगा। हम लोग बहुत भाग्यशाली भारतवासी है। यहां दो-दो क्षेत्र ऐसे, एक जनक का अध्यात्मक्षेत्र जहां सीता निकली। एक 'महाभारत' का क्षेत्र उसे कृष्ण ने जोता। उसने हल हांककर, इसने घोड़ा नाथ कर। वहां सीता निकली, यहां 'गीता' निकली। यहां दोनों में श्रेष्ठ श्रोता, चरित्र के श्रेष्ठ श्रोता हो तो मेरा हनुमान है। वाल्मीकि कहते हैं कि रामचरित्र तो गाता हूं पर सीताचरित्र महान है। नित्य श्रवण करता हो तो हनुमान है। और 'गीता' का भी; धजा फहर रही हो और जिसका मन न फ़फ़ेड वो 'गीता' का श्रोता हनुमान के सिवाय दूसरा कौन होगा? अर्थात् ये श्री और विजय है। 'यत्र योगेश्वर तत्र पार्थो धनुर्धर:।' वहां श्री अर्थात् सीता होगी और विजय अर्थात् मेरा हनुमान होगा। जहां ये दोनों तत्त्व होंगे-

उभय बीच श्री साहई कैसे।

ब्रह्म बीच जीव माया जैसे।

सीता अर्थात् आह्लादिनी शक्ति। वहां राधा होगी, कृष्ण की बातें सुनने में। यहां सीताजी की बातें रसपूर्वक हनुमानजी ने सुनी वाल्मीकि व्यास से। हनुमानजी ने 'गीता' बराबर सुनी और अभी जब तक 'गीता विद्यालय' में या दुनिया की किसी भी जगह 'गीता' का पाठ होता होगा वहां मुझे कहने दीजिए बाप! उसकी धजा में हनुमानजी बैठे होंगे। उसने पृथ्वी छोड़ने का संकल्प किया है, जिस दिन इस धरती पर परमतत्त्व की कथा चलती नहीं होगी, फिर मैं इस जगत में नहीं रहूंगा। अपनी ध्वजा में ही बैठते हैं और अपना ध्यान रखते हैं कि किस तरह सुनना है? तो बाप! एक सीता जनक के द्वारा और 'गीता।' दोनों ही वाणी ही है साहब! 'गीता' वाणी ही है ये निश्चित है। 'गीता' कोई रूप लेकर उतरती न थी। वाणी का रूप लेकर आती। और सीता, 'गिरा अरथ जल बीच सम कहिअत भिन्न न भिन्न।' सीता गिरा है। अब हम सब टेपरेकोर्ड में उसे बंद कर देते हैं। रेकोर्ड हो जाता है। कोई भी बोलता है आकाश में तो घूमता ही रहता है। हम सब तो शायद वहां तक नहीं होंगे। होंगे तो भाग्य साहब! हमें तो जीना ही है। थक गये हो उन्हें मेरी शुभकामना कि जीवन का शुभ संकल्प कीजिए। मुझसे बहुत से लोग पूछते हैं कि निवृत्त कब होगे? निवृत्त तेरा बाप हो! मैं किस लिए होऊं यार! मुझे कहां निवृत्त होने की जरूरत है? मैंने कहां तुम्हारी नौकरी की है? मेरा तो घराना बड़ा है। उसे तो नौकरी में रखना आता है साहब! छोड़ना नहीं आता! गिरधारीलाला क्या करेंगे?

चाकर रहेशुं, नित ऊठी दर्शन पाशुं.

वृंदावन की कुंज गली में अमे गोविंदलीला गाशुं.

गिरधारीलाला, मोहे चाकर राखोजी.

तो ये दोनों क्षेत्र जोते गये और दोनों धर्म में भी उतने निपुण और कर्म में भी उतने निपुण। एक जगह 'गीता', और एक जगह से सीता वाणी के स्वभाव में हमें प्राप्त हुई। तो जो भी बोलेगा, ये पांच वस्तु हममें होगी तो लोग उसे 'गीता' वचन की तरह स्वीकार करेंगे। उसका एक-एक वाक्य सूत्र के रूप में स्वीकार करेंगे। समकालीन कदाचित स्वीकार न करे। गांधीजी को तब कितना स्वीकार हुआ ये दादा बता सकते हैं! गांधी को बहुत लोग उसके समय में बापू न कह सकते थे! बापू कहने में तो उसकी सात पीढ़ी को कुछ होता! इसलिए कहता, गांधीभाई! गांधी को कोई भाई कहे वो हमें पसंद नहीं। परंतु बापू नहीं बोला जाता था! बहुत कठिन है। बहुत से कहते हैं न मोरारिबापू हमारे साथ चड्डी पहनकर घूमते थे! तब तेरी भी चड्डी ही थी! तेरे पास पेन्ट था ही नहीं! तूं तो बोलना ही मत! मेरे पास तो रफ्फू की हुई थी, पर तेरी तो फटी हुई थी! चड्डी तेरी फटी हुई थी! ये सब हंसने के लिए नहीं कहता। बहुत से लोग कहते हैं, कल सुबह हमारे साथ सायकल में घूमता था। तो उसे स्कूटर पर घूमना ही नहीं? अब उसकी सुविधा हो गई है। न थी तो उसने लोन ले ली है। पर हम सायकल पर ही रहे यही लोगों को अच्छा लगता है। चड्डी पहनकर घूमा करे? पर अब खराब लगेंगे! आपके सामने चड्डी पहनकर आना! कोई दांडिया खेलता है? लट्टू नचाना? ये सब कुछ मैंने नहीं किया है। साठ वर्ष से 'गीता' का पाठ किया है।

तो मेरे बाप! लोग तो कहेंगे। पर जिसके पास ये पांच तत्त्व होंगे। हम कहां महापुरुषों को स्वीकार सके हैं? 'गीता' का एक सार मुझे ये लगता है कि 'गीता' यानी एक स्वीकारभाव। वो कुब्जा का भी स्वीकार कर सकती है। वो रुक्मणि का भी स्वीकार करती है। एक पैर पर दौड़ते जाना! जो होना होगा हो! वहां पहुंच जायेंगे। पूरा भाव स्वीकार। निंदा स्वीकार, स्तुति स्वीकार, मान स्वीकार, अपमान स्वीकार। कोई धक्का दे स्वीकार, कोई गाली दे स्वीकार; सब कुछ स्वीकार, स्वीकार, स्वीकार। और

अर्जुन कहा न करे तो भी स्वीकार इसी को कह देते हैं, 'यथेच्छसि तथा कुरु।' अब तुझे जैसे कहना है वैसे कह जा। बोलना बंद कर। सबका स्वीकार। मुझे आपसे कहना है कि समकालीन आदमियों को हम नहीं स्वीकार सके ये अपना दुर्भाग्य है!

मैं कल कह रहा था। विनोबाजी ने गांधीजी से एक वर्ष की छुट्टी मांगी कि बापू, मुझे थोड़ी अध्यात्मयात्रा करनी है। फिर आपके अभियान से जुडूंगा। पर मुझे एक वर्ष की छुट्टी दीजिए। मैं परिभ्रमण कर सकूं। नामदेव को पढ़ता हूं। तुकाराम के पदों को समझने की कोशिश करता हूं। अभंग पढ़ता हूं। गांधीजी ने उन्हें छूट दी। अब हाज़िर होने को एक सप्ताह का समय था तब विनोबाजी ने बापू को पत्र लिखा कि अब सप्ताहभर में आता हूं। कोई दूसरा आदेश हो कि अभी मत आना, तो न आऊं। अभी सीधे वहां आना हो तो वहीं जाऊं। 'आग्या सम न सुसाहिब सेवा।' महापुरुषों की ये ही बात है कि जो स्वीकार लेते हैं। युवा भाई-बहनों, जिंदगी में स्वीकारने जैसा है। गांधीजी ने पत्र लिखा। विनोबाजी, आज मुझे लिखने दीजिए, आज मछंदर हारा, गोरख जीता। ये गांधी के शब्द हैं। पर दूसरा वाक्य; लड़कों। थोड़ी आदत पड गई है जैसा-तैसा बोलने की पर आप सब सहन कर लेते हैं, अन्य कहां जाओगे? आप कथा के सिवाय कहां जाओगे? मोरारिबापू की बात नहीं है। कथाजगत जितना कोई उदार नहीं है।

कल सुरेन्द्रनगर से आये हुए कथाकार दादा ने कहा कि बापू, मैंने छह सौ कथा की है। कितना उदार होता है! मुझसे बोले, बापू, तीन सौ आमंत्रण और तीन सौ मैंनें खड़ी की! इतना उदार मेरा कथाकार ही हो सकता है! मुझे बहुत अच्छा लगता है। कल वक्ता कितने अच्छे बोलते थे! उसमें तीरथ की बात कही। सबने बहुत सुंदर बातें की। आप सभी 'गीताजयंती' को आते रहिएगा। हमें त्रिवेणी मिले या न मिले, 'गीताजयंती' ये त्रिवेणी ही है। और मैं भी अपने प्रोग्राम में ध्यान रखूंगा कि कम से कम दो दिन मैं आपके बीच समाऊं। ऐसा मेरा प्रयास रहेगा नब्बे प्रतिशत। नहीं तो एक दिन दो घंटे के लिए तो कहीं से भी आ जाऊंगा साहब! सिवाय कि कोई ऐसी अनिवार्यता आ गई हो।

जिस संस्था में सत्य, प्रेम और करुणा की जड़ें मजबूत होंगी तो बिगड़ेगा नहीं। मुझे कोई 'गीता' पर बोलने को कहे तो 'गीता' के पहले छ: अध्याय सत्य हैं। सात से बारह तक के अध्याय वो भक्ति और प्रेम तक पहुंचानेवाले, प्रेमप्रकरण हैं। और तेरह से अठारह ये करुणा के अध्याय हैं। जिसके मूल में ये है। इतने वर्षों से यहां आना होता है ये अपना सद्भाग्य है। गांधीजी ने दूसरा वाक्य कहा, विनोबाजी, मुझमें यदि हरिण्यकशिपुता आये तो प्रह्लाद बनकर विद्रोह करने में संकोच मत करना। ये मानव है उसे दुनिया बापू कहती है। और उस बापू को कोई 'भाई' कहता है तब कुल बताता है, खानदान बताता है! हमारा ये परिचय है, हमारी ये पहचान है, हमारा ये घराना है! गांधी को कोई नहीं कह सकता था बापू! मुझे कहना है बाप! मुझे और आपको सबको कोशिश करनी चाहिए और उसे समझने के लिए शांत चित्त से बैठना चाहिए। थोड़ा अनुभव करना चाहिए। तो ऐसे जो मानव हैं वो जो बोलेंगे वो 'गीता' है। उसके मुख से जो निकलेगा, लोकगीत निकले, या गोपीगीत निकले उसमें कोई न कोई मेसेज होगा।

'भगवद्गीता' का प्रागट्यदिवस है। ऐसे वैश्विक दिवस को प्रत्येक वर्ष हम मिलते हैं। मुझे भी ये सद्भाग्य मिला, तब साठ वर्ष से 'गीता' का पाठ करने का जो आनंद है साहब! मैं पहले 'गीता' का पाठ करता हूं साहब! मेरा जीवन 'रामचरित मानस' है, हां। चौपाई बिना हम जी नहीं सकते साहब! हां, उससे तो मौत भली! भूमि में दबदबा जाना अच्छा! पर अखंड पाठ होना चाहिए। प्लेन में हो तो प्लेन में। बहुत बार ऐसा होता है कि कल नहीं हो सकेगा ऐसी यात्रा है तो एडवान्स में पाठ कर लेता हूं। उसमें से मुझे लगा है कि आपको मैं इतना ही कहूंगा। 'गीता' का पान किया। परंतु गान मैंने जोडिया में ही सुना है। इन लड़कों से सुना। कभी विद्वानों के पास 'गीता' का जब अवसर मिला तब पान भी किया। 'गीता' का ध्यान अभी ठीक से नहीं उतरा है। ध्यान में अभी ऐसा होता है कि ये सब क्या करते होगे? परंतु पान इस तरह प्रेम से प्रसन्न चित्त से कि जब संवाद आये तब आंसू आते हो तब ऐसा होता है कि आंसूओं के जैसा दूसरा कोई भाष्य नहीं है क्योंकि भाषान्तर, देशान्तर, कालान्तर ये सब ठीक है, भाषान्तर नहीं होगा तब तक जगत में बेड़ा पार नहीं।

तो 'गीता' का गान यहां सुना। बहुत सुंदर गान यहां हुआ। पान हो तो बहुत सुंदर, गान हो तो बहुत सुंदर। ध्यान हो तो बहुत सुंदर। पर मुझे कहना है, जब-जब संभव हो 'गीता' में स्नान कीजिएगा। हिन्दुस्तान का किसी दिन नाश नहीं होगा। चाहे भले न कितने भी टूट पड़ते हो

जगत में! क्योंकि इसके पास 'गीता' है। इसके पास 'रामायण' है। इसके पास वेद है। इसके पास 'भागवत' है। और बापजी, मैं विनम्र प्रार्थना करता हूं कि वेद यहां है तो वेद का पारायण होना चाहिए। हम ऐसे विद्वानों को बुलाएं कि 'गीताजयंती' के दो दिन पूर्व संपूर्ण वेदसंहिता का पाठ करे। 'भागवत' का भी पारायण करायें। 'गीता' का तो पारायण होता ही है। और 'रामचरित मानस' का अखंड इतने वर्षों से पाठ हो रहा है।

अपनी खूब प्रसन्नता व्यक्त करता हूं कि समस्त विश्व को जोडियाधाम के इस रामकृष्ण ट्रस्ट को इस पवित्र व्यासस्थान से 'गीताजयंती' की बधाई हो, बधाई हो, जिसमें जिन्होंने 'गीता' का शास्त्र का अध्ययन किया। फिर अन्ततः तो हरिनाम। आज आध्यात्मिक छुट्टी का दिन है। वैसे तो छुट्टी का दिन नहीं है। 'गीता' विश्राम देती है ये बड़ी से बड़ी छुट्टी है। थोड़ी देर संकीर्तन करेंगे। सभी ऐसे का ऐसा ही अनुग्रह कीजिएगा। रमेशबापा का परिचय दूं। वे ईसरो के बहुत बड़े वैज्ञानिक है। देश में अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय बहुत ही जरूरी है। ऐसे भाई कथाकार हमारे पास हैं जिनको विज्ञान की बहुत ही समझ है। इस बार संचालन किया। आप सबको मेरा प्रणाम। 'गीताजयंती' की बधाई।

तीन चार दिन पहले एक भाई मुझे चित्रकूट में पूछ रहे थे। 'बापू, ये ब्रज परिक्रमा की कथा कहीं फिर आपको क्या लगता है?' मैंने कहा, अभी तक तो हम बोलते थे, 'ओधो ब्रज बिसरत नाहीं।' अब फिल होता है, ब्रज भूलता नहीं। ये मेरा अनुभव है। अभी भी अकेले बैठता हूं तो वो गिरिराज, वो अक्रूर घाट, जहां चैतन्य महाप्रभु रहे थे। गाढ जंगल थे ब्रज में। कोई अन्यथा न ले। अभी भी वृंदावन में भरपूर चेतना है। तुलना में सभी तीर्थ तीर्थ ही हैं। कोई डाउट नहीं है, पर वृंदावन वृंदावन है साहब! आपको कोई भी दिखेगा वो भाव से करता होगा उसके हाथ में माला होगी ही। ये दृश्य देखकर पवित्र हो जाते हैं। मुझसे बहुत से लोग कहते हैं कि ये सब दंडवती परिक्रमा करते हैं वो सब क्या है? परंतु ये तुम्हारा अभिप्राय है। उसको तो पूछो! तुम्हें जवाब देने का उसे समय भी नहीं है! तुम पूछते रहो, पूछते रहो! ब्रज के रज में स्पर्श करे उसे खबर पड़ेगी। तुझे क्या खबर पड़ेगी? इसीलिए 'ब्रज की रज ओधो बिसरत नाहीं।' अर्थात् ऐसा है ब्रज। ऊपर से ऊतरा हुआ टुकड़ा है। वो थोड़े ही अपनी भूमि का टुकड़ा है? ये तो 'जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः।' ये तो ऊपर से उतरा टुकड़ा है।

श्री राधे गोविंद, भज मन श्री राधे।
कृष्णं वंदे जगद्गुरुम्।
रामकृष्ण भगवान प्रिय हो,
बालकृष्ण भगवान प्रिय हो।
सद्गुरु भगवान प्रिय हो।

ये 'सद्गुरु भगवान प्रिय हो।' बोलिए और उसे समझकर बोलिएगा। किस लिए सद्गुरु की इतनी महिमा है? जयश्री माताजी जो भजन प्रस्तुत करती थी। कोई भी भजन हो वो सद्गुरु बिना होगा ही नहीं। मुझे तो बापजी, ऐसा ही लगता है कि भजन जब अवतार लेता है न तब साधु के रूप में आता है। कोई संत, कोई भजनानंदी पुरुष जिसका अवतार है। भजन को जब ऐसा लगता है।

बिनु हरि भजन न भव तरिहि यह सिद्धांत अपेल।

किसी साधुपुरुष के रूप में भजन अवतरित होती है। तो कोई भी भजन साहब! सद्गुरु भगवान किस लिए? अखंड आनंद सरस्वती याद करता हूं वृंदावन। उनकी छोटी-सी पुस्तिका किसी ने मुझे दी। मैंने पढ़ी। वे ऐसा कहते हैं कि हम जब छोटे थे तब हमारे गांव में मंगाचाचा किसी ने नाम लिखा है, कहते हैं मेरे दादा-बापा घर के बाहर चबूतरे पर बैठे होते, हम सब खेलते रहते थे। वो मंगाचाचा को हमसे विनोद और लड़कों के साथ मजाक करना उनकी आदत थी। इसीलिए हम खेलते होते तब वो कुछ काला सा ओढ़ लेते। या तो काला बड़ा सा कोट ओढ लेते थे। फिर रींछ की तरह चलते-चलते आते इसलिए स्वामीजी कहते हैं, हम सब डर के भाग जाते तब मेरे बापा और दादा और सभी हंसते कि लड़के कितने डरते हैं! क्योंकि उन्हें खबर है कि ये मंगाचाचा है। फिर जब बहुत डरते और रोने लगते तब बुज़ुर्गों को ऐसा होता कि इसे कहीं डर बैठ जायेगा तो ठीक नहीं। और फिर कहते, खड़े रहो। बुलाते, ए मंगा, निकाल डाल ये काली कोट। वो काली कोट ऊतार देते तब लड़के खेलने लगते। मेरे और आपके जीवन में कोई न कोई मंगाचाचा आपत्ति बनकर काला कोट पहनकर आता है। बुज़ुर्गों से पूछना, बुद्धपुरुषों से पूछना। वो कोट उठा देंगे फिर कोई डर नहीं रहेगा।

('गीताजयंती' के अवसर पर 'गीता विद्यालय' जोडियाधाम(गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक ३०-११-२०१७)

॥ जय सीयाराम ॥